# कोई एक दूसरा

(उपन्यास)

# कोई एक दूसरा

आशुतोष मुखोपाध्याय



शिलांग रोड से होकर मेडिकल कॉलेज जाते हुए जो रास्ता बिल्कुल बीचोबीच तिरछा होकर आ मिला है, उसका नाम है—जू रोड। चिड़ियाखाने की वजह से उस पूरे रास्ते का नाम ही जू रोड पड़ गया है। उस आदमी की गाड़ी, घड़ी के कांटे से बंधी हुई, बिल्कुल निश्चित वक्त पर जू रोड की तरफ से आती और शिलांग रोड पर खड़ी रहती।

गाड़ी भी हर दिन वही नहीं होती। हर रोज नए मॉडलों की नई-नई गाड़ियां। एकदम झक-झक, चमचमाती हुई। कभी ऐसी पुरानी-धुरानी और बेडौल कि आंखों को अचरज भी हो और कुतूहल भी। कोई-कोई गाड़ी तो इतनी लंबी-चौड़ी कि आराम से पसरा जा सके, कुछ इतनी छोटी कि दो लोग भी बमुश्किल बैठ पाएं। जिस वक्त शर्मिला बरकाकुती की क्रीम रंग की फीएट वहां से गुजरती, उसकी स्पीड का अंदाजा लगाते हुए, वह गाड़ी कभी आगे-आगे या थोड़ा पीछे-पीछे चल पड़ती। इसमें शक नहीं कि गाड़ी चलानेवाले का हाथ भी काफी मंजा हुआ है। इतने चौड़े और खाली रास्ते पर, लाख कोशिशों के बावजूद वह उसकी गाड़ी को ओवरटेक नहीं कर पाई। कल भी उसने कोशिश की थी। रीयर-व्यू में देखते हुए, उसकी गाड़ी की स्पीड का अंदाजा लगाकर, वह आगे-आगे चलता रहा। शर्मिला ने अपनी गाड़ी की रफ्तार धीमी कर दी, साथ ही उस आदमी की गाड़ी भी कछुआ-चाल से रेंगने लगी।

जू रोड पर आते ही शर्मिला बरकाकुती की निर्लिप्त गंभीर निगाहों में हल्का-सा कुतूहल तैर गया। वह सजग हो उठी। पिछले आठ-नौ दिनों से वह गौर कर रही है। अगर उसने ख्याल किया होता तो शायद बहुत दिनों पहले ही उसे खबर लग जाती। लेकिन हर दिन नए-नए किस्म की गाड़ी देखकर, उसने ड्राइवर की तरफ गौर ही नहीं किया। पता नहीं कितने दिनों से, वह

आदमी अपने करतब दिखा रहा है। करीब आठ-नौ दिन पहले, अचानक उस पर नजर पड़ गई और वह रंगे हाथों पकड़ा गया।

रास्ता काफी चौड़ा और निर्जन होने के बावजूद, ऐसी हड़बड़ाहट का मौका बहुत कम आया, जब उसके पांव एकदम से ब्रेक पर जम गए हों। करीब आठ-नौ दिन पहले की बात है। वह ठीक वक्त पर अस्पताल पहुंचने की जल्दी में थी। डाक्टर भट्टाचार्य ने एक दिन पहले ही उसे बता दिया था कि अगले दिन वह जरा देर से आएंगे। अतः उनके पहुंचने तक वह सारा कुछ सम्हाले रहे। ठीक उसी दिन घर में दोनों दीदियों के झगड़े में समझौता कराने के फेर में, उसे देर हो गई।

अतः गाड़ी की स्पीड का कांटा सत्तर को छू रहा था। वैसे ऐसे खुले-खुले रास्ते पर सत्तर की स्पीड से गाड़ी चलाना कोई खास बात नहीं। अचानक, उसी मोड़ पर मुसीबत हाथ बांधे खड़ी हो गई। ना, कोई हादसा नहीं हुआ, लेकिन बस, होते-होते रह गया। उसने देख लिया था, पुरानी डिजाइन की एक फोर्ड गाड़ी, जू-रोड की तरफ से काफी स्पीड में आ रही थी। शर्मिला की गाड़ी मेन रोड पर थी, अतः उसने अंदाजा लगा लिया कि मोड़ लेते हुए, अगर जरूरत पड़ी, तो वह आदमी गाड़ी की स्पीड धीमी कर देगा। लेकिन, ऐसा नहीं हुआ। अतः दोनों गाड़ियों को पूरे दम से ब्रेक लगानी पड़ी। यूं भी अगर टक्कर हो जाती तो शर्मिला की डिबियानुमा गाड़ी दब-पिसकर सत्तू बन जाती। फोर्ड गाड़ी मोड़ पार करके खड़ी हो गई। शर्मिला के हाथ पूरे दम से स्टीयरिंग पर घूम गए। दोनों गाड़ियां बिलकुल अगल-बगल खड़ी हो गईं। उसकी गाड़ी में आगे-पीछे दोनों तरफ डाक्टर का निशान क्रॉस अंकित था। अगर वह आदमी जरा भी तमीजदार होता, तो उसे वह निशान देखकर ही अपनी गाड़ी की स्पीड कम कर देनी चाहिए थी और उसके लिए रास्ता छोड़ देना चाहिए था। इसके अलावा चूंकि वह मेन रोड से आ रही थी, नियम के अनुसार भी, उसे ही पहले रास्ता देना चाहिए था।

शर्मिला ने गाड़ी की खिड़की से सिर निकालकर गुस्से भरी आवाज में पूछा, 'आर यू ब्लाइंड ? दिखाई नहीं पड़ता ?'

उस आदमी ने हाथ जोड़ते हुए, विनम्र जवाब दिया—'करीब-करीब अंधा ही हूं, मैडम !'

शर्मिला की निगाहों में गुस्से के लाल डोरे और गहरे हो आए। उस आदमी के बदन पर सुर्ख लाल टेरिकॉट शर्ट। पैंट पहने था या धोती, दिखाई नहीं दिया। सिर पर तेल विहीन, झौवाभर रूखे-रूखे बाल। उम्र यही कोई तीस-इकतीस साल। हंसमुख चेहरा। शर्मिला को वह चेहरा काफी पहचाना-सा लगा। लेकिन उसे यह याद नहीं आया कि उसे अस्पताल में देखा है या

वही रास्ते पर।

'विल यू मूव ऑर गेट बैक ? आप आगे या पीछे सरकेंगे ?'

उस आदमी ने भीगी बिल्ली-सा चेहरा बनाते हुए पूछा, 'जी, आगे बढ़ूँ या पीछे सरकूं ?'

'नानसेंस ! बदतमीज !'

उतनी संकरी-सी जगह में ही शर्मिला ने झटके-से गाड़ी आगे निकाली और तेज रफ्तार में आगे बढ़ गई। बाद में रीयर-व्यू से उसने कई बार पीछे की तरफ देखा। फोर्ड गाड़ी करीब पंद्रह गज के फासले पर उसके पीछे-पीछे चली आ रही थी। उस आदमी के होंठों पर मंद-मंद मुस्कान खेल रही थी।

शिलांग रोड की बाईं ओर पहाड़ पर मेडिकल कॉलेज और अस्पताल। पहाड़ पर सीढ़ी-दर-सीढ़ी इमारतों की कतार। ऊपर चढ़ने-उतरने के लिए पहाड़ के चारों तरफ चौड़ी-चौड़ी सड़कें। तीन-चौथाई रास्ता पार करने के बाद मेडिकल कॉलेज का पहला गेट।

शर्मिला की गाड़ी गेट के अंदर दाखिल हो गई। उसके पीछे-पीछे वह फोर्ड गाड़ी भी अंदर घुसी।

गाड़ी को निश्चित जगह पर खड़ी करके, उसने अपना बैग निकाला। गाड़ी के दरवाजे बंद करते हुए, उसकी निगाहें अनायास ही फोर्ड गाड़ी की तरफ उठ गईं। वह आदमी भी दरवाजा खोलकर नीचे उतरा। खासा लंबा-दुहरा चेहरा। सिर्फ शर्ट ही नहीं, उसकी पैंट भी, काफी खूबसूरत और कीमती लगी। शर्मिला ने गाड़ी के शीशे चढ़ाए और दरवाजा लॉक किया। इस बीच वह उसके करीब आ खड़ा हुआ।

उसने बेहद विनम्र लहजे में दरयाफ्त किया, 'बता सकती हैं, इमरजेंसी वार्ड किस तरफ है ?'

शर्मिला की आंखें उसके चेहरे पर ठिठक गईं। उसे लगा, अगर इस आदमी को अस्पताल में देखा है, तो इसे अपना रास्ता भी मालूम होना चाहिए था। उस पल उसे उसकी यह विनयशीलता भी काफी नाटकीय जान पड़ी।

'कैसा केस है ?'

'जी'''आइ ! मेरा मतलब है आंखें !'

शर्मिला गंभीर हो आई। उसे लगा, रास्ते में उसने उसे अंधा कहा था, शायद इसीलिए वह मजाक कर रहा है।

उसने जवाब दिया, 'दिल के ऊपर'''ई० एन० टी०'''यानी कान, नाक और गले के करीब !' यह कहकर वह दनदनाती हुई सीढ़ियां चढ़ने लगी।

ऊपर वरामदे में पहुंचकर, वह सामनेवाले लंबे-चौड़े हॉल में गायव हो गई।

अगले दिन से ही यह तमाशा शुरू हो गया। नित नई-नई गाड़ियों में जू-रोड पर मुठभेड़। कभी-कभी वह जान-बूझकर दस-पांच मिनट के हेर-फेर में भी पहुंची है, लेकिन आधुनिकतम फैशन की नवीनतम गाड़ी में उस ड्राइवर से उसकी घड़ी का कांटा हरदम मिला होता। वह या तो आगे-आगे होता या पीछे-पीछे। नहीं, उस दिन के वाद, वह मेडिकल कॉलेज के गेट के अंदर दाखिल नहीं हुआ। जव तक शर्मिला की गाड़ी आंख से ओझल नहीं हो जाती, वह गेट की परली तरफ, गाड़ी रोककर उसका इंतजार करता।

यह नाटक जव लगातार दो-तीन दिनों तक दुहराया जाता रहा, शर्मिला वरकाकुती को सारा मामला समझने में जरा भी दिक्कत नहीं हुई। असल में, उसका नित नई-नई गाड़ियों में आना भर ही नया होता था, वरना वाकी सारा कुछ वेहद जाना-पहचाना और परिचित-सा लगता था। अठारह से लेकर अपनी छब्बीस साल की उम्र तक शर्मिला ने भी कम तो नहीं देखा है। जव वह मेडिकल कॉलेज में पढ़ा करती थी, तव से ही उसे ऐसे कई दिलफेंक छोकरों और डाक्टरों की इश्कमिजाजी का खासा तजुर्वा हो चुका है। अव तो दो साल गुजर गए···डाक्टरी पास करने के वाद, उसे यहीं नौकरी भी मिल गई। इस दौरान भी दो-एक ऐसे डाक्टरों से भी पाला पड़ ही चुका है, जिन्होंने सीधे-सीधे या अप्रत्यक्ष रूप से उसके आगे प्रणय-निवेदन कर डाला, लेकिन उसने उन्हें लौटा दिया। वैसे उसने उनके दिल को किसी तरह की ठेस नहीं पहुंचाई। निहायत गोल-मोल भाषा में उन्हें यह समझाकर टरका दिया—'तुम्हें आने में जरा देर हो गई, वंधु! अव तो यह मन-प्राण किसी को समर्पित हो चुका है। मैं किसी का इंतजार कर रही हूं।' वैसे उस खुशनसीव का अता-पता उसने किसी को नहीं वताया।

सच तो यह है कि उस खुशनसीव के वारे में खुद शर्मिला भी नहीं जानती। लेकिन कद्रदान मजनुओं से दूरी वनाए रखने के लिए, यही सवसे आसान तरीका था। जव वह मेडिकल कॉलेज में थर्ड ईयर की छात्रा थी, तव से उसने इसी तरह सैकड़ों मजनुओं को कैंसिल किया है। अव उसकी उम्र छब्बीस वर्ष है। अव भी उसकी कल्पना में किसी हमसफर का ख्याल विल्कुल नहीं आता, यह कहना भी सरासर झूठ होगा। अगर उसकी मां जिंदा होतीं, तो वह डैडी को जाने कभी से तंग करने लगतीं। लेकिन वह तो सात-आठ साल पहले ही गुजर गईं! अव दोनों दीदियां वारी-वारी से डैडी को याद दिलाती रहती हैं। पिता—प्रमथेश वरकाकुती खासे व्यस्त और मूडी इंसान हैं। इसी गोहाटी में टी-आयर हाउस के मालिक। चाय-वागानों में भी अच्छे-खासे शेयर हैं। चूंकि उनके पास वेशुमार काला धन है, अतः उन्हें कोई भी

समस्या मात्र बड़ी नहीं लगती। बेटियाँ हल्की-फुल्की ताकीद देतीं, तो जरा खोज-खबर लेने की पहल करते, ज्यादा जोर देतीं तो खीज उठते। उस पर से उन्हें हाई-ब्लडप्रेशर की शिकायत। छोटी बेटी आँखों की पुतली। अपनी सेहत की सारी देखभाल बेटी के जिम्मे सुपुर्द करके, वह परम निश्चिन्त हो गए हैं। नियम से ब्लडप्रेशर चेक करना, सेहत के अनुसार खाने-पीने की व्यवस्था, बीच-बीच में ई० सी० जी० कराना—सारी जिम्मेदारी उसी की है। अत: ऐसी बेटी को पलक ओट करने का ख्याल भी दिल पर हथौड़े-सी चोट करता है। लेकिन सोचना तो आखिर पड़ेगा ही। वैसे दो-चार अच्छे लड़के भी उनके हाथ में हैं। उनका मित्र भूपेन देवशर्मा, उन्हीं की तरह टी-आयर हाउस के मालिक। साल भर हुआ, उनका बेटा विलायत से बैरिस्टर बनकर लौटा है। हीरे का टुकड़ा। गोहाटी के हाईकोर्ट में प्रैक्टिस भी शुरू कर दी है। वैसे उसकी वकालत कितनी चलती है, इस बारे में खोज-खबर लेने में कोई तुक नहीं। अमीर बाप का अमीर और इकलौता बेटा। बेटे का बाप खुद ही बातों-बातों में अपने बेटे के लिए शर्मिला का रिश्ता माँग चुका है।

ऐसा सुयोग्य पात्र पाकर भी पिता उस पर खास तवज्जुह नहीं दे रहे हैं, इसकी वजह भी वह बखूबी समझ गई है। कुशल देवशर्मा से शर्मिला की भी थोड़ी-बहुत जान-पहचान है। अगर वह इशारा भर कर दे, तो जान-पहचान गहरी भी हो सकती है। विलायत से लौटने के बाद कुशल देवशर्मा दो बार उनके मकान पर भी आ चुका है। पहली बार वह अपने पिता के साथ आया था, दूसरी बार अकेले ही। सौजन्य का तकाजा यही था कि शर्मिला भी एकाध बार उनके घर जाती। कुशल ने फोन पर यह उलाहना भी दिया। लेकिन शर्मिला अपनी डाक्टरी के धंधे में ही इतनी व्यस्त रहती है कि जाने की फुरसत ही नहीं निकाल पाई। उसकी व्यस्तता की बात सुनकर कुशल साहब ने फौरन व्यंग्य कसा, 'भई, मुझे तुम्हारा मरीज बनने में भी कोई एतराज नहीं। आओगी तो फीस भी मिल ही जाएगी!'

वैसे डैडी के तवज्जुह न देने का कारण भी वह बखूबी समझ गई थी। अपने दोनों बड़े दामादों की तरह इस बड़े बाप के बैरिस्टर बेटे को घर-जमाई बनाकर रख पाना नामुमकिन है। शर्मिला की माँ पुराने जमाने की दकियानूस महिला थीं। अपनी ही तरह का पुश्तैनी दकियानूस घराना देखकर अपने दोनों दामादों का चुनाव कर डाला। खैर, डैडी माँ जितने बुर्जुआ तो नहीं हैं, लेकिन उनके मन में भी ऊँचे कुल-खानदान की कद्र कम नहीं है। सोलह की उम्र पार होते-होते दोनों बेटियों का ब्याह-दान करके माँ तो मुक्त हो गईं। बड़े दामाद की पदवी बरुआरी और मंझले की बरठाकुर। अपने-अपने पतियों के गुमान में फूली दीदियों का ठसका भी कुछ कम नहीं। वैसे दौलतमंद श्वसुर

का घर-जमाई बन जाने का रिवाज, इस देश में नया भी नहीं है। खसिया लोगों में तो आम रिवाज है कि जमाई चाहे कितना भी पढ़ा-लिखा या अमीर हो, लेकिन उसे ही ससुराल आकर, लड़कियों का घर बसाना पड़ता है। इन लोगों के रहन-सहन में भी बहुत कुछ असमिया संस्कृति का प्रभाव घुल-मिल गया है।

शर्मिला ने जब मेडिकल कॉलेज में नाम लिखाया, उसके बहुत पहले से ही मां बीमार चल रही थीं। तभी उसकी पढ़ाई को लेकर मां और डैडी में महाभारत छिड़ गया। बेटी का अठारहवां साल भी निकला जा रहा है और फिर भी उसके ब्याह-शादी का नाम तक नहीं। आखिरी समय तक अपनी छोटी बेटी के लिए काफी अफसोस और परेशानी लिए, मां चल बसी थीं। डैडी पुराने विचारों के होते हुए भी, नए जमाने की हवा से अछूते नहीं थे, वरना बेटी को डाक्टरी पढ़ाने को हरगिज राजी नहीं होते। इसीलिए बेटी ने जब बाप के सामने सीधे-सीधे अपना फैसला सुनाया कि डाक्टरी पास करने के पहले, वह ब्याह का जिक्र भी नहीं सुनना चाहती, तब उन्होंने लाख कशमकश के बावजूद खास आपत्ति भी नहीं की। उसके बाद इन कुछ सालों में शर्मिला ने उन्हें इस कदर अपने वश में कर लिया है कि बेटी के दूर हो जाने के ख्याल भर से, उनकी आंखों के आगे अंधेरा छाने लगता है। जिस तरह शर्मिला और उसका परिवार चांदमारी के रईस इलाके में रहता है, उसी तरह देवशर्मा लोगों का घर भी खासे आभिजात्य इलाके में है। दोनों घरों के बीच महज चार मील का फासला है, लेकिन डैडी के लिए उतनी-सी दूरी भी पहाड़ लगती है।

लेकिन, बावजूद इन सबके उनके मन में थोड़ी-बहुत चिंता तो खैर थी ही। अतः वह मौके-बेमौके बेटी के सामने ही उसके ब्याह का जिक्र छेड़ बैठते। बेटी भी उसी वक्त सपाट जवाब सुनाकर उनका मुंह बंद कर देती, 'देखो डैडी, तुम यह सब आलतू-फालतू बातें सोच-सोचकर अपना दिमाग मत खराब करो। ब्याह जब होना होगा, हो जाएगा!'

लेकिन दीदियों को भला कहां तक फुसलाए? वे लोग मौका पाते ही डैडी के कान भरने लगती हैं। असल में उसकी दोनों दीदियां उससे जलती हैं, यह वह बखूबी समझ चुकी है। यूं तीनों बहनों में से किसी की भी सूरत-शक्ल बुरी नहीं, लेकिन वह बाकी दोनों बहनों से जरा बीस पड़ती है। उसकी बहनों की लाग-डांट उसकी पढ़ाई-लिखाई को लेकर है। वे बेचारी स्कूल की दहलीज पार होते-न-होते ब्याह दी गईं। तीन-तीन बच्चों की मां भी बन गईं। उनकी ईर्ष्या देखकर शर्मिला को बेहद मजा आता है। बिचारी दीदियां इसी शक में

घुल-घुलकर आधी हुई जा रही हैं कि उनकी यह अतिशिक्षिता बहन पता नहीं कब अपने कुल-खानदान के मान-सम्मान को तिलांजलि देकर, किसी ऐरे-गैरे के गले में जयमाला डाल दे ! अंदर ही अंदर कहीं किसी के साथ उसका इश्क तो नहीं चल रहा, इस आशंका से भी वे अपने को मुक्त नहीं कर पा रही हैं। यूं दोनों बहनों में बात-बात पर 'झगड़ा मचा रहता है, लेकिन छोटी बहन का रोब-दाब उन्हें फूटी आंखों नहीं सुहाता। छोटी बहन के स्वभाव-चरित्र को लेकर वे हर वक्त ऊहापोह में पड़ी रहती हैं।

उस दिन उसने दोनों दीदियों को खासा तंग किया। उन दिनों डैडी का प्रेशर काफी बढ़ा हुआ था, अतः शर्मिला उनके लिए तीन दिन पूरी तरह आराम करने का फतवा जारी कर चुकी थी। तीसरे दिन इतवार पड़ता था। डैडी का प्रेशर घट चुका था। उस दिन दीदियों को चिढ़ाने के लिए, शर्मिला डैडी के कमरे में चली आई और अंदर से दरवाजा बंद कर लिया। बड़ी दीदी कुछ दूर खड़ी थी, लेकिन उसने और मंझली दीदी ने उसे डैडी के कमरे में जाते हुए देख लिया था। शायद उन्हें दिखाने के लिए ही, शर्मिला बेहद गंभीर चेहरा बनाए डैडी के कमरे में दाखिल हुई और यह खुराफात कर बैठी।

उसकी इस हरकत पर डैडी भी अचकचा गए। उन्होंने पूछा, 'अरे ! तूने दरवाजा क्यों बंद कर दिया ?'

शर्मिला ने जवाब दिया, 'बाहर बच्चे धमाचौकड़ी मचाए हुए हैं। छुट्टी का दिन है, मैंने सोचा, जरा एकांत में बैठकर, तुमसे इत्मिनान से बातें करूंगी।'

डैडी खुशी से गद्गद हो आए।

करीब आधे घंटे बाद, जब वह दरवाजा खोलकर बाहर निकली, तब दीदियों की तीखी निगाहें उसे पार-पार कर गईं। जैसे ही वह अपने कमरे में पहुंची, दोनों बहनों ने उसे घेर लिया, 'दरवाजा बंद करके'''इतनी देर तक, डैडी से क्या साजिश हो रही थी ?'

शर्मिला गंभीर बनी रही, 'कुछ जरूरी बातें करनी थीं।'

'जरूरी बातें सिर्फ तेरे साथ ही क्यों ?'

'क्योंकि वह बात सिर्फ मेरे ही बारे में थी'''

'तेरे बारे में जो बातें हैं, वह क्या हम लोग नहीं सुन सकते ?'

'हां, जरूर सुन सकती हो। लेकिन देखो, अब इसे लेकर डंका मत पीटने लगना ! असल में, मेरे विलायत जाने के बारे में बातें हो रही थीं।'

दोनों बहनें मानो आसमान से गिरीं, 'डैडी तुझे विलायत भेज रहे हैं ?'

"नहीं, वह नहीं भेज रहे, मैं ही जाना चाहती हूं।'

'डैडी ने क्या कहा ?'

'डैडी को सख्त एतराज है। उनका कहना है, जाना ही है तो व्याह करके, अपने दूल्हे को भी साथ ले जाओ। एक के बजाय दो जन सही! लाख रुपए के बजाय मेरे दो लाख रुपए खर्च होंगे, यही न!...अब मैं अजीब पसोपेश में पड़ गई हूं!'

खैर, उसकी चिंता दीदियों का सर-दर्द नहीं। उन्हें अच्छी तरह मालूम है कि छोटी बहन के व्याह के लिए डैडी ने काफी मोटी रकम दबा रखी है। उस पर से और दो लाख रुपए खर्च करके, उसे दूल्हे समेत विलायत भेजना चाहते हैं, यह बात उन लोगों के बर्दाश्त के बाहर थी।

मौका देखते ही, दोनों डैडी के दरबार में हाजिर हुईं।

लेकिन उनकी बातों का सिर-पैर समझने में डैडी को थोड़ा वक्त लगा। जब सारी बात समझ में आ गई, तब उन्होंने दोनों को झिड़ककर दफा कर दिया। उन्होंने उन्हें डपटते हुए कहा, 'यानी वह तुम दोनों की मक्कारी समझती है और मजा लेती है। उसमें जितनी अक्ल है, तुम दोनों उसकी पासंग भर भी नहीं!'

इस तरह नीचा दिखाए जाने पर, दोनों का सारा गुस्सा लौटकर फिर उसी शर्मिला पर आ पड़ा। लेकिन शर्मिला पर कोई असर नहीं हुआ। गुस्से से अग्निशर्मिणी दीदियों से लिपटकर, वह हंसते-हंसते लोट-पोट हो गई।

बड़ी दीदी उर्मिला उससे पूरे सात साल बड़ी थी और मंझली चार साल। छोटी बहन के चाल-चलन पर नजर रखना, वे अपना फर्ज समझतीं। घर में मां के न होने से उन पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी भी तो थी। इसीलिए, अगर कभी कोई मर्द उससे घर पर मिलने चला आता, तो वे गिद्ध-दृष्टि से उन पर नजर रखतीं। शर्मिला का मन था, वह घर में ही एक चेंबर खोल ले, लेकिन बहनों ने सख्त एतराज किया। अस्पताल में नौकरी करती है, यही काफी है! अब और ज्यादा की क्या जरूरत! उनका ख्याल है, घर में चेंबर खुल गया तो मरीजाओं से ज्यादा मरीजों की भीड़ लगी रहेगी! शर्मिला की ही किसी भूल की वजह से, उनके मन में यह शक घर कर गया था। जब वह डाक्टर नहीं बनी थी, बहनों को अपने, अगल-बगल बैठाकर वह मजे-मजेदार किस्से सुनाया करती, 'ये मरीज मेरी नाक में दम किए रहते हैं। सारे के सारे मरीज कंगलों की तरह, मुफ्त से इलाज कराने को मरे जाते हैं। हैरानी की बात तो यह है कि मेरा हाथ लगते ही, उन कमबख्तों की आधी बीमारी पलक झपकते ही दूर हो जाती है!'

हालांकि ये किस्से उसने मजाक-मजाक में सुनाए थे, लेकिन बहनों के दिल में सचमुच संदेह जाग उठा। अब तो मौका मिलते ही, शर्मिला अपने मन से किस्से गढ़-गढ़कर उन्हें सुनाती और उनका मजा लिया करती।

बहनों के तीन-तीन यानी छः बच्चे-बच्चे अपनी छोटी मासी पर जी-जान से न्योछावर थे। छोटी मासी उनकी आदर्श थी। घर भर में किसी की भी इतनी मजाल नहीं थी, कि उनके सामने कोई उनकी छोटी मासी को बुरी कहकर निकल जाए। उसकी तरफदारी में बच्चों की फौज हमेशा कमर कसे रहती थी। शर्मिला भी उन बच्चों पर सचमुच जान छिड़कती थी।

लेकिन अब वह छब्बीस साल की होने को आई। उसे मालूम है, जिंदगी में कोई-न-कोई आएगा जरूर। इधर अक्सर लगने लगा कि अब वह वक्त आ पहुंचा है, जब जिंदगी में किसी को शामिल होना है। लेकिन अभी तक ऐसा कोई शख्स नजर नहीं आया, जिसके प्रति उसने सचमुच खिंचाव महसूस किया हो या जो मन में बस गया हो। इन दिनों भूपेन देवशर्मा के बेटे कुशल देवशर्मा के बारे में भी खूब-खूब सोचती रही है। वैसे, रूप में वह लड़का बुरा भी नहीं है। लेकिन जाने क्यों उसके लिए अपना ही मन राजी नहीं होता। अस्पताल में भी जो सब कुंआरे डाक्टर उससे हेल-मेल बढ़ाने को उतावले रहते हैं, उनमें भी कोई ढंग का लड़का नजर नहीं आया, जो उसके मन को छू सके।

सिर्फ एक व्यक्ति के अलावा—डॉक्टर विश्वनाथ भट्टाचार्य। वह उसे सचमुच बहुत भले आदमी लगे थे। काफी लोकप्रिय डॉक्टर थे। छः साल विलायत रहकर, जब हिंदुस्तान लौटे तो यहीं गौहाटी के अस्पताल में नौकरी कर ली। विलायतयाफ्ता होने के बावजूद, यह इंसान अजीब बनजारा-सा दिखता है। शायद अपनी बदनसीबी के कारण वह टूट-फूटकर बिखर गए थे। विलायत से वापिसी के छह महीने के अंदर ही बीवी का देहांत हो गया। ग्यारह साल का एक बेटा भी है। उसे भी उन्होंने अपने छोटे भाई के पास दिल्ली भेज रखा है।

शर्मिला को वह बहुत अच्छे लगते हैं। वह भी उसे पसंद करते हैं, यह भी साफ जाहिर था। लेकिन उन्हें अपना हमसफर बनाने का ख्याल नामुमकिन था। अगर कभी यह हजरत किन्हीं कमजोर पलों में, उससे ब्याह का प्रस्ताव कर बैठें तो! इस ख्याल तक से वह सहम गई है। लेकिन अगले ही पल वह अपनी परेशानी झटक देती। विश्वनाथ भट्टाचार्य इस किस्म के जीव हो नहीं हैं। दुनिया में ऐसे भी कुछ लोग हैं, जो अपने दुःख-दर्द का बोझ खुद ही ढोते फिर रहे हैं। डाक्टर विश्वनाथ ऐसे ही इंसानों में थे।

जू रोड के मोड़ पर गाड़ी की हल्की-सी टक्कर की संभावना और उसके बाद उस किस्म के वाक्यालाप के बाद, करीब आठ दिन और गुजर गए। इस

बीच उस नौजवान का रंग-बिरंगे फैशनेबल पोशाकों में सज-संवरकर, किस्म-किस्म की मॉडल की गाड़ियां हंकाते हुए आने और उसकी आंखों में आंखें डालकर मुस्कराते रहने में कहीं कोई नागा नहीं हुआ। यहां तक कि पिछले इतवार को वह बाहर कोई मरीज देखने निकली थी, उस दिन भी उस मूर्ति पर निगाह पड़ी थी।

...लगता है, ये साहब नयी-पुरानी गाड़ियों की खरीद बिक्री का बिजनेस करते हैं। शायद इसीलिए तरह-तरह की गाड़ियां दिखा-दिखाकर, उसे फांसने के चक्कर में हैं। शर्मिला नाराज होकर भी आखिर क्या कर लेती? सड़क या मेडिकल कॉलेज का गेट उसकी निजी मल्कियत तो नहीं। यूं वह मन-ही-मन काफी मजा भी ले रही थी।

...जू रोड पर नजर पड़ते ही, शर्मिला ने देखा आज वह ऑस्टिन गाड़ी में आया था। उसने तिरछी निगाहों से गाड़ी की दूरी का अंदाजा लगाया। गाड़ी की रफ्तार से साफ जाहिर था कि आज वह शर्मिला के आगे-आगे जाएगा। वैसे भी उसकी गाड़ी, अक्सर ही उसके आगे-आगे रहती है। वजह का अंदाजा लगाना भी बिलकुल आसान था। गाड़ी के रीयर-व्यू से पीछेवाली गाड़ी की चालिका का चेहरा साफ-साफ नजर आता रहता था। यह तो उसकी गाड़ी चलाने के ढंग से ही जाहिर था कि उसकी निगाहें एकटक उसके चेहरे पर गड़ी हैं। लेकिन इस पर भी शर्मिला को तेवर दिखाने का क्या हक बनता है? अगर वह उसके गाड़ी चलाने में अड़चन बनता, तो भी किसी फैसले का सवाल उठता। लेकिन वह शख्स तो गाड़ी भी काफी सधे हुए हाथों से चलाता है। शर्मिला की गाड़ी की रफ्तार तेज होते ही उसकी रफ्तार भी तेज हो जाती है; धीमी होती है, वह भी अपनी रफ्तार धीमी कर लेता है—कमोबेश कुछ फासला बराबर कायम रहता है। गाड़ी चलाते-चलाते ही कभी कभी शर्मिला का मन होता, उसे बुरी तरह मुंह चिढ़ा दे। उसके मुंह चिढ़ाने पर मजनू साहब की निगाह जरूर पड़ेगी। लेकिन अस्पताल जाते हुए, शर्मिला बरकाकुती एक सौम्य-व्यक्तित्व-संपन्न डाक्टर होती है। इस तरह की हरकत उसे शोभा नहीं देती। इसीलिए मन की चाह मन में दबाए हुए, वह गंभीर मुद्रा में गाड़ी ड्राइव करती हुई, आगे बढ़ जाती है।

जू रोड पार करके वह ऑस्टिन गाड़ी शिलांग रोड पर निकल आई। लेकिन आज उसके दिमाग में जाने कौन-सी शरारत सवार हो गई। उसने झटके से एक टर्न लिया और उसकी गाड़ी फिर जू रोड पर दौड़ने लगी। इस तरफ से उसे काफी चक्कर पड़ेगा, लेकिन कोई बात नहीं। उसने गर्दन घुमाकर अपनी पीछे वाली गाड़ी पर निगाह डाली। उस नौजवान की गाड़ी की रफ्तार धीमी हो गई थी। उसकी अचकचाई हुई सूरत देखकर उसे बेसाख्ता

हंसी आने लगी। अगले ही पल वह सम्हल गयी और उसने गाड़ी की रफ्तार तेज कर दी।

अगले दिन।

उसके आगे-आगे उसी नौजवान की शेवरलेट गाड़ी। पीछे-पीछे शर्मिला की गाड़ी। कल के कांड की वजह से आज वह कुछ ज्यादा ही घूर रहा था। गाड़ी चलाने के अंदाज से ही साफ जाहिर था, उसकी नजर एकटक शर्मिला के चेहरे पर ही गड़ी हुई है। स्पीड सही होने के बावजूद, उसकी गाड़ी मानो रेंग रही थी।

पहाड़ पर स्थित मेडिकल कॉलेज अभी भी करीब आधी मील दूर था···। अचानक भयंकर दुर्घटना हो गई। सामनेवाली क्रॉसिंग पर एक ट्रक ने अचानक मोड़ लिया। लेकिन उस वक्त वह हजरत अपनी गाड़ी के रीयर-व्यू में शर्मिला की सूरत निहारने में इतने मशगूल थे कि भयंकर टक्कर हो गई! चूंकि ट्रक मोड़ ले रही थी, इसीलिए उसकी स्पीड ज्यादा तेज नहीं थी, लेकिन फिर भी किसी को जान से हाथ नहीं धोना पड़ा, यही अचरज की बात थी।

शेवरलेट की बजाय अगर और कोई हल्की-फुल्की गाड़ी होती तो जान बचना नामुमकिन था। उसकी नजरों के सामने ही ऐसी भयंकर दुर्घटना हो गई। वह गाड़ी रोककर दौड़ पड़ी। वह नौजवान बेहोश था। खून से नहाया हुआ।

माथे पर गहरी चोट आयी थी। सिर फट गया था और शायद सीने में भी धक्का लगा था। मुसीबत में फंसे ट्रक-ड्राइवर और उसके साथी उसी के आगे सफाई देने लगे। वह आदमी कितनी तेज स्पीड से गाड़ी चला रहा था और ऐसा भयंकर कांड कर बैठा, यह तो बहनजी ने खुद अपनी आंखों से देखा। जरूर यह महाशय बेभाव पीकर गाड़ी चला रहे थे वरना इतनी बड़ी सड़क पर ऐसी दुर्घटना नामुमकिन है।

लेकिन डाक्टर शर्मिला बरकाकुती को यह सब सुनने का वक्त नहीं था। उन लोगों की मदद से, उसने जख्मी नौजवान को उस गाड़ी से उतारकर, अपनी गाड़ी की पिछली सीट पर लिटा दिया। ट्रक-ड्राइवर भी पिछली सीट पर बैठा। उस बिचारे को तो अपना गला छुड़ाने की गरज से साथ हो लेना पड़ा। अस्पताल से पुलिस में रिपोर्ट लिखाई जाएगी। उसकी बेगुनाही का एकमात्र सबूत यही महिला थी। शर्मिला ने उसे तसल्ली दी, इस दुर्घटना में

उसका कोई कसूर नहीं। खैर, ट्रक-ड्राइवर को पक्का विश्वास हो चुका था कि यह हजरत सुबह-सवेरे ही शराब में टुन्न होकर गाड़ी चला रहे थे।

जख्मी नौजवान को अस्पताल के इमरजेन्सी वार्ड में लाया गया। वहां से ऑपरेशन-टेबल पर। वह अभी तक बेहोश था। शर्मिला बरकाकुती खुद अपनी गाड़ी में इस मरीज को लेकर आई थी, अतः डाक्टर और सर्जनों की भीड़ लग गई। उन लोगों ने जख्मी की जांच की। शर्मिला बाहर ही ठहर गई। उसकी छाती बुरी तरह धड़क रही थी।

वह आदमी इस कदर लहूलुहान और जख्मी हो चुका था कि उसका चेहरा बेहद करुण हो आया। शर्मिला को रह-रहकर अफसोस हो रहा था। अगर कल वह कांड न हुआ होता, तो वह लड़का आज इतनी दीवानगी से उसे देखने में बेसुध न होता।

करीब दो घंटे बाद सर्जन ने ऑपरेशन-थियेटर से निकलकर सूचना दी, चोट खास गहरी नहीं है। गाड़ी के कांच से टकराने की वजह से उसका सिर और माथा बुरी तरह कट-फट गया है। वैसे पसली वगैरह नहीं टूटी, लेकिन चोट काफी गहरी लगी है। सारा चेहरा इस बुरी तरह कट-फट गया है कि पूरी होशियारी बरतनी होगी···कहीं सेप्टिक न हो जाए। होश आने से पहले ही, उसे बेहोशी का इंजेक्शन देकर सुलाए रखना होगा।

फिलहाल उसे इमरजेन्सी-वार्ड में ही रखा गया। काफी सारा खून निकल गया था, अतः किसी भी पल खून देने की जरूरत हो सकती थी। इसके अलावा बेहोशी में ही उसे एनेस्थीशिया दी गई है। माथे से ज्यादा सिर के जख्म गहरे हैं, पांच-छह टांके भी लगे हैं। कहीं दुबारा ब्लीडिंग न शुरू हो जाए, इस पर भी नजर रखना जरूरी था।

सारा इंतजाम करके शर्मिला करीब बारह बजे अस्पताल से बाहर निकली। आज वह आउट-डोर की तरफ गई ही नहीं। उसका सिर अभी तक घूम रहा था। वह तो उस आदमी का नाम तक नहीं जानती कि पता ढूंढकर उसके घरवालों को खबर दे सके। लौटते हुए उसकी निगाह उस मुड़ी-तुड़ी गाड़ी पर दुबारा ठिठक गई। गाड़ी हटाकर किसी ने किनारे खड़ी कर दी थी। शायद ट्रक वालों ने हटाई होगी।

शाम पांच बजते-न-बजते, वह अपने को रोक न पाई, दुबारा अस्पताल आ पहुंची। पहले उसने फोन पर ही उसका हाल पूछने का इरादा किया, लेकिन फिर खुद ही चली आई।

उसे देखते ही हेड नर्स ने आगे बढ़कर खबर दी कि उसका मरीज अब काफी बेहतर है, बातचीत भी कर रहा है। इस बीच वह दो-तीन बार पूछ चुका है कि डाक्टर मिस बरकाकुती शाम को अस्पताल आती हैं या नहीं···

आज आएंगी या नहीं ? उसका शुक्रिया अदा करने के लिए, वह उठकर फोन भी करना चाहता था। हेड नर्स ने ही उसे वरज दिया, फिलहाल उसे बिस्तर पर भी हिलने-डुलने की इजाजत नहीं है।

शर्मिला गंभीर हो आई। अंदर ही अंदर उसे भयंकर गुस्सा भी आया। हजरत की जान पर आ बनी, लेकिन फिर भी आंख नहीं खुली। कमबख्त जाने कहां से उसका नाम भी जान गया।

थोड़े-थोड़े फासलों पर बिछे हुए बेड। वह सबसे कोने वाले बेड पर लेटा था। शर्मिला अंदर वार्ड में दाखिल हुई और बेहद गंभीर मुद्रा में उसके बेड की तरफ बढ़ी। समूचे सिर और माथे पर पट्टियां ! छाती पर भी बैंडेज ! नर्स उसके मुंह में थर्मामीटर लगाकर, घड़ी देख रही थीं ! जैसे ही उस आदमी की नजर शर्मिला पर पड़ी, उसके चेहरे और आंखों में खुशी की लहर उमड़ आई, मानो इतनी देर से वह उसी की राह देख रहा था, जैसे उसे कहीं कोई दर्द या तकलीफ ही नहीं। उसी हालत में उसने दोनों हाथ उठाकर पट्टियां-बांधे माथे से लगाए यानी नमस्कार किया।

शर्मिला उसे एकटक घूरती रही। उसने उसकी नमस्ते का भी जवाब नहीं दिया।

नर्स ने उसके मुंह से थर्मामीटर खींच लिया और बुखार देखा। शर्मिला की सवालिया निगाहें उसके चेहरे पर टिक गईं। नर्स ने अस्फुट स्वर में कहा 'हण्ड्रेड थ्री प्वायंट सिक्स।'

शर्मिला ने आदेश दिया, 'उसे एक क्रोसीन पीसकर खिला दो, गोली निगलने में तकलीफ होगी।' उसके बाद वह उस आदमी की तरफ मुड़ी और एक बार उसे आपादमस्तक घूरकर सवाल किया। हालांकि मरीज की हालत देखते हुए उसका सवाल काफी निर्मम भी जान पड़ा। उसने पूछा, 'अब तो इमरजेंसी वार्ड पहचान गए न ?'

'''करीब नौ दिन पहले उसका पीछा करते हुए, वह मेडिकल कॉलेज के कम्पाउंड तक आ पहुंचा था और छूटते ही उसने सबसे पहले इमरजेंसी वार्ड के बारे में ही दरयाफ्त किया था, वह भूली नहीं थी। मरीज भी वह घटना नहीं भूला था। पट्टियों से ढंका चेहरा उसी तरह खिला रहा।

उसने मुस्कराते हुए जवाब दिया, 'असल में मुझे कई-कई तरह के रोग हैं, शर्मिला जी !'

उसकी जुबान पर अपना नाम सुनकर उसकी त्योरियां चढ़ गईं।

लेकिन वह अपनी रौ में कहता गया, 'ऐसा ही एक रोग है मुझे कविताएं

पढ़ने का'''पिछले दिनों किसी मशहूर ;कवि की एक कविता का अनुवाद पढ रहा था। कविता एक'''नन्हीं-सी मुर्गी के बारे में थी। उस बिचारी को अपने सामने वाले दालान तक जाने की बड़ी साध थी। जाने वहां कितना कुछ खाने को मिलता होगा! कितना-कितना मजा आता होगा! खुदा के फज्ल से'''एक दिन उसे उस दालान में घुसने का मौका मिल ही गया।'''प्लेट में सजे हुए खाने की शक्ल में।—मेरी भी लगभग वही हालत हुई। छह महीने से आपसे जान-पहचान की तीखी चाह लिए भटकता फिर रहा था, सो एकदम से सिर फोड़कर, आपके मरीज के रूप में आ धमका!'

शर्मिला मन ही मन सचमुच हैरान थी। लड़कियों का पीछा करनेवाले, अमीर शोहदों जैसी बातचीत हरगिज नहीं थी। छह महीनों से जान-पहचान की तीखी चाह का जिक्र सुनकर भी वह चकित थी। लेकिन वह हैरत उसने अपने चेहरे पर जाहिर नहीं होने दी। उसने निर्लिप्त लहजे में सवाल किया, 'नाम क्या है?'

'मोहन, मोहन हजारिका।'

'हजारिका' शब्द पर शर्मिला के चेहरे पर हल्की-सी कौतुक की छाया उतर आई। कौतुक महसूस करने की वजह भी थी। वैसे इस किस्म के ख्याल की भी कोई खास वजह नहीं थी।'''छह महीने से यह शख्स उससे परिचय करने को बेताब है। परिचय की यह चाह अगर कहीं अतरंगता में बदलने लगी तो ठेठी तो 'हजारिका' शब्द सुनते ही, गर्दनिया देकर बाहर निकाल देंगे! वैसे इस बेसिर-पैर के ख्याल से, वह खुद ही अपने पर खीज उठी।

उसने मरीज के सामने टंगे चार्ट पर एक नजर डाली। जितनी गहरी चोट आई है, बुखार आना स्वाभाविक था। इसके अलावा ऐसी हालत में अगर और भी दस तरह की दबी-छिपी बीमारियां अचानक उभर आएं, तो अचरज की बात न होती। लेकिन उस आदमी का खिला-खिला चेहरा और हंसी देखकर और उसकी बातचीत सुनकर लग रहा था, वह बेहद आराम में है।

मोहन हजारिका ने बगलवाली कुर्सी की तरफ इशारा करते हुए आग्रह-भरे स्वर में कहा, 'बैठिए न'''

शर्मिला ने उसी तरह निस्पृह आवाज में सवाल किया, 'अब बैठना भी होगा!'

उसने दोनों हाथ जोड़कर अनुनय-भरे स्वर में कहा, 'जरा देर बैठिए न! मुझसे जो कसूर हुआ है, उसकी सजा तो भगवान ने ही दे दी। अब आप क्यों तकलीफ करती हैं! आप भी उसकी तरह निर्मम तो नहीं हो सकती न!'

शर्मिला को मन-ही-मन मजा आ रहा था। छह महीनों से वह उससे जान-पहचान को इस कदर बेचैन क्यों है—अभी तो इसकी वजह भी नहीं

मालूम। वह कुर्सी पर बैठ गई। लेकिन बातचीत में एक डाक्टर जैसी चिर-परिचित गंभीरता ओढ़े रही।

उसे बैठते देखकर वह आदमी खुशी से गद्‌गद हो आया। शर्मिला को सबसे ज्यादा हैरानी तो इस बात की थी कि उसके चेहरे पर किसी तरह के दर्द या तकलीफ का नामोनिशान भी नहीं था। उस वक्त भी उसे एक सौ चार डिग्री के करीब बुखार है, लेकिन चेहरे पर एक शिकन तक नहीं।

नर्स उसे दवा देकर वापस लौट गई। उसके जाते ही उसने उमगती हुई आवाज में कहा, 'मैंने तो इन लोगों से दरयाफ्त भी किया था। पता चला, शाम को कोई खास जरूरी काम न हो, तो आप नहीं आतीं। लेकिन फिर भी मैं सुबह से ही आपकी राह देख रहा था। लग रहा था, आप एक बार जरूर आएंगी!...चाहे जिस भी कारण से आई हों, लेकिन मुझे यह सोच-सोचकर अच्छा लग रहा है कि आप मुझे देखने आई हैं।'

उसकी बात पर शर्मिला हंसी तो नहीं, लेकिन उसके चेहरे पर टिकी उसकी आंखें जरूर हंस पड़ी थीं। अगर वह सच-सच बता दे कि वह उसे ही देखने आई है, तो क्या हो? ना, जरूरत नहीं। मारे खुशी के वह अपने सिर के टांके ही उधेड़ डालेगा।

उसकी उम्मीदों पर पानी फेरते हुए उसने जवाब दिया, 'नहीं, मैं तो यूं ही चली आई थी। आपका केस तो सर्जन के हाथों में है।'

सचमुच उसका चेहरा उतर गया। उसने मायूस आवाज में पूछा, 'मेरी छाती में दर्द है, कहीं हड्डी-पसली तो नहीं टूटी?'

'नहीं...'

'मेरे सिर में क्या हुआ है?'

'सिर और माथे पर कई जगह चोटें आई हैं, टांका लगाना पड़ा है...'

वह सहम गया। उसने डरी-डरी-सी आवाज में पूछा, 'मुझे क्या दो-चार दिनों में ही रिहा कर दिया जाएगा?'

शर्मिला को सचमुच हंसी आने लगी। लेकिन उसने अपनी हंसी दबा ली। दो-चार दिन तो क्या, अभी उसे पंद्रह दिनों में भी रिहा करना असंभव है।

उसने जवाब दिया, 'अगर कोई खास बात नहीं हुई तो आपको रोके रखने में क्या तुक है! आप आउटडोर में आकर सर्जन को अपने जख्म दिखा जाया कीजिएगा। जब जख्म भर जाएंगे, तो वह टांके भी काट देंगे।'

उस नौजवान ने दु:ख से गहरी आह भरकर कहा, 'अब आप ही देखिए, आपका भगवान कितना पक्षपात करता है, कैसा निर्मम है! अरे, लगे हाथों अगर वह दो-चार हड्डी-पसली भी बराबर कर देता, तो उसका कुछ बिगड़ जाता?'

शर्मिला अब उठने को हुई, लेकिन उसने हाथ बढ़ाकर बीच में ही रोक दिया, 'प्लीज, जरा देर और बैठिए न, अभी तो आपको अपनी कोई बात बताई ही नहीं !'

शर्मिला उसे डांट दे या चुपचाप हैरान होती रहे ! यह आदमी क्या इतना लापरवाह है कि अगर उसका वश चलता तो, हाथ पकड़कर अपने सामने वाली कुर्सी पर मुझे हर पल बैठाए रखता ! खैर, शर्मिला ने भी उठने की कोशिश नहीं की । वह उसी तरह चुपचाप बैठी रही, लेकिन चेहरे पर पहले की तरह ही गंभीरता लिए उसने उसे सूखी आवाज में आगाह किया, 'आप शायद भूल गए हैं कि आप किसी डाक्टर से बातें कर रहे हैं !'

मोहन हजारिका ने भी मुंहजोर बच्चे की तरह कहा, 'ना···मैं कुछ भी नहीं भूला हूं । असल में मुझे काफी तकलीफ है, दर्द भी हो रहा है । आपने सुना नहीं—साढ़े तीन डिग्री से ऊपर बुखार भी है । कोई नई बीमारी उभरते आखिर कितनी देर लगती है ? लेकिन इस वक्त मुझे किसी तकलीफ या दर्द का पता नहीं चल रहा, क्योंकि आप मेरे सामने बैठी हैं । वैसे, एक और भी थी···जब वह सामने होती थी, तब मुझे किसी दुःख-दर्द का पता नहीं चलता था । खैर !···हां तो मैं कह रहा था···इस मामूली-सी बात पर···आप इतनी खफा क्यों हो रही हैं ? चूंकि मेरा केस सर्जन के हाथ में है, इसलिए आप देखने नहीं आएगी···यह कोई बात हुई भला ? आप बुलाइए उन लोगों को अगर मैं यहां न रहना चाहूं, तो वे लोग मुझे जोर-जबरदस्ती तो रोक नहीं, सकते ? मैं आज ही चला जाऊंगा ! अभी ! इसी वक्त ! मुझे अपनी इस कमबख्त जिंदगी की कोई परवाह नहीं ! समझीं !' वह लेटे रहने के बजाय तमककर उठ बैठा ।

शर्मिला की निगाहें उसके चेहरे पर गड़ी रहीं । वाकई, कैसे अजीब आदमी के पल्ले फंस गई ! वैसे उसकी बातचीत से दिमागी कोई खराबी नजर नहीं आती । शुरू में ही उसने जिस कविता का जिक्र किया था, वह भी कम सरस नहीं थी ! लेकिन कोई इतनी ढिठाई से अंगुली पकड़कर पहुंचा पकड़ सकता है, यह बात उसकी कल्पना से भी परे थी ।

उसने उसे डपटते हुए कहा, 'बचपना मत कीजिए, कहीं टांके टूट गए, तो लेने के देने पड़ जाएंगे—लेट जाइए !'

उस आदमी ने भी तेवर दिखाते हुए कहा, 'टांके मेरे टूटेंगे, आपका क्या !'

शर्मिला कुछेक पलों को सकपका गई । सचमुच, मानो कोई बच्चा, किसी नितांत अपने व्यक्ति से कोई फर्माइश करे और नामंजूर किए जाने पर मारे गुस्से के खुद अपनी ही तोड़-फोड़ पर उतर आए और उसे तंग करने पर

आमादा हो जाए। उसकी इस तुनकमिजाजी में कहीं कोई बनावटीपन होता, तो वह भी उसकी नजर में जरूर आता। आखिरकार शर्मिला ने अपने को ही सम्हालने की कोशिश की।

उसे सख्त लहजे में हुक्म दिया, 'अगर आप पांच सेकंड में नहीं लेटे, तो मैं उठकर चली जाऊंगी ! चलिए, लेट जाइए !'

मोहन हजारिका अगले ही पल लेट गया। और उसके होठों पर निश्छल हंसी खिल आई। उसने हंसकर कहा, 'आप अगर सामने बैठी रहें, तो मैं चुप-चाप लेटा रहूंगा···। ऐसे में कोई मुझे मरघट तक भी घसीट ले जाए, तो मैं चुपचाप चला जाऊंगा !'

शर्मिला चाहे कितनी भी बड़ी डाक्टर हो, आखिरकार औरत थी। उसका दिल कांप उठा। उसे सच ही नहीं मालूम कि कोई रट-रटाकर या कई-कई रिहर्सल के बाद भी, इस तरह अनायास ऐसे डायलॉग दुहरा सकता है।

अभी उसे यहां आए हुए आधा घंटा भी नहीं हुआ, लेकिन इतनी-सी देर में ही, यह इंसान मानो किसी अदृश्य ताकत से उसे बांध लेने का संकल्प लिए आगे बढ़ता आ रहा है।

चूंकि उसे सारा मामला बेहद अजीब लग रहा था, अतः वह और अधिक गंभीर हो आई, 'आपके घर से कोई आपको देखने नहीं आया ? उन्हें क्या आपके एक्सीडेंट की खबर नहीं दी गई ?'

उसने हंसकर जवाब दिया, 'मेरे घर में सिर्फ एक ही जन है; वह भी यहीं···इसी बेड पर लेटी हुई है। खबर किसको देता ?'

उसकी हंसी, उसकी बातचीत बेहद सहज और सरल लग रही थी और उसकी ऐसी सहज और सरल बातें ही मानो उसके लिए मुसीबत बनती जा रही थीं। अचानक उसे कुछ याद आ गया।

उसने दरियाफ्त किया, 'अभी-अभी आप कह रहे थे···एक जन और है। वह अगर···'

'वह हैं मेरी मां ! अरे, कुछ मत पूछिए, असल में इस समूचे कांड की जड़ में वही देवी ठकुराइन हैं ! उन्हीं की शह पाकर ही मैंने यह आफत मोल ली। वरना, मैं तो अच्छा-भला ही था।'

शर्मिला को उसकी सारी बातें पहेली-सी जान पड़ीं, 'उनकी शह पाकर आफत मोल ली······मतलब ?'

'और क्या···! छह महीने से यह दीवानगी का आलम···और अब यह एक्सीडेंट !'

शर्मिला पल-भर को विमूढ़ हो आई, 'तो उन्हें खबर क्यों नहीं दी ? इस

वक्त वे कहां हैं ?'

इस बात पर भी वह हंसता रहा। उसने अंगुलियों से खिड़की के बाहर आसमान की तरफ इशारा करते हुए कहा, 'उन्हें खबर देने के लिए, मुझे भी वहां'''ऊपर जाना होगा!'

उसका जवाब सुनकर शर्मिला की निगाहें उसके चेहरे पर जम गईं। शायद वह यह अंदाजा लगा रही थी कि उस आदमी का वाकई दिमाग तो खराब नहीं! कमाल है, उस शख्स ने शर्मिला की यह दुविधा भी भांप ली!

उसने छूटते ही सवाल किया, 'क्या हुआ? कहीं आपको यह शक तो नहीं हो रहा कि आप किसी पागल-सागल के पल्ले तो नहीं पड़ गईं?'

शर्मिला के सम्हलने के पहले ही, उसने हंसते हुए अगली कड़ी जोड़ी, 'देखिए, आप ही क्यों, खुद मैं भी अपने रंग-रंग पर चकित हूं! लेकिन कहते हैं न''''''अगर वह ऊपर वाला मेहरबान हो जाए तो अपाहिज भी पहाड़ लांघ जाता है, गूंगे की जुबान से बातों की फुलझड़ियां छूटने लगती हैं—मेरी भी वही हालत है! आपने उस ट्रक का नंबर वगैरह ले लिया है न? उसका पता-ठिकाना ढूंढकर, उसे मोटी-सी बख्शीश देना चाहता हूं।'

त्ता! इस किस्म के दुःस्साहसी मर्द से शर्मिला का कभी वास्ता नहीं पड़ा। लेकिन अभी तक उसकी दुविधा मिटी नहीं थी। उसने पूछा, 'आपकी मां ने ही भला आपको किस बात के लिए और क्यों शह दी?

उस आदमी की आंखों में अजब-सी प्यास उमड़ पड़ी। वह उसे प्यासी निगाहों से घूरता रहा।

थोड़ा ठहरकर उसने जवाब दिया, 'नहीं, अभी वह बताने का मौका नहीं आया। बताऊंगा'''बताना तो, खैर होगा ही।'

अच्छा, निगाहों में कोई छुअन भी होती है? शर्मिला ने अपनी इस छब्बीस साला उम्र में मर्दों की निगाहों का वार कुछ कम तो नहीं झेला! लेकिन इस तरह अवश होने का अहसास पहले तो कभी नहीं जागा।

'अच्छा, आज मैं चलूं।'

उसके उठने की बात सुनकर उसकी आवाज में बेचैनी झलक उठी, 'आप इतनी जल्दी चली जाएंगी?'

शर्मिला की निगाह घड़ी पर जा पड़ी, 'नहीं, जल्दी तो नहीं जा रही। काफी देर हो गई है। अब और ज्यादा देर रुकी रही, तो यहां के लोगों को भी अचंभा होगा।'

मानो वह समझ गया। उसने अगला सवाल किया, 'कल आप कब आएंगी?'

उसकी बेचैन आंखें मानो खुद ही उसके अंदर से जवाब खींच लाना

चाहती हों।

शर्मिला ने सायास हंसते हुए कहा, 'सवेरे अस्पताल तो आऊंगी ही। उसके बाद...'

लेकिन...सुबह-सुबह ही अस्पताल के इंतजाम में थोड़ा हेर-फेर हो गया। इमरजेंसी वार्ड में कुछ और मरीजों को दाखिल करना पड़ा। सुबह जो डाक्टर ड्यूटी पर था; उसने मोहन हजारिका को जनरल वार्ड में भेजने का इंतजाम कर दिया। लेकिन उस शख्स ने तो बाकी दस मरीजों के साथ जनरल वार्ड में रहने से सरासर इनकार कर दिया। सारी रात तेज बुखार में तपता रहा, तबीयत यूं भी खराब लग रही थी। इमरजेंसी वार्ड में भी मरीजों की अच्छी-खासी भीड़ लगी हुई थी। उसने जिद पकड़ ली उसे केबिन में भेज दिया जाए, जो पैसा लगेगा, वह देने को तैयार है।

उस दिन केबिन भी खाली था। रुपये का जोर हो, तो एतराज की कोई वजह भी नहीं होती। इसके अलावा स्टाफ को यह भी पता चल गया था कि डक्टर शर्मिला बरकाकुती खुद इस मरीज को लाई हैं। उसे केबिन में भेजने का इंतजाम कर दिया गया। वैसे अलग केबिन लेने पर फीस के अनुसार अलग से नर्स भी तैनात की जाती है। अतः एक नर्स का भी इंतजाम कर दिया गया। लेकिन सुबह नौ बजते-बजते मोहन हजारिका का बुखार इतना तेज हो आया कि वह लगभग बेहोश हो गया। समूचे तन-बदन में मानो जहर की तेज लहर फैलती जा रही हो। सिर में असहनीय दर्द।

होश में आते ही उसने नर्स से डाक्टर शर्मिला बरकाकुती के बारे में पूछा। उसे बार-बार आगाह भी करता रहा कि डाक्टर शर्मिला के आते ही, उन्हें खबर दी जाए।

डाक्टर शर्मिला के आने तक नर्स ने दौड़कर हेड नर्स और अन्य डाक्टर को खबर कर दी।

उन लोगों ने उसे कौन-कौन सी दवा दी, कितने सारे इंजेक्शन लगाए, मोहन हजारिका को कुछ पता नहीं। वह कभी गहरी नींद में गुम। कभी बेहोशी में छटपटाता हुआ। बेहोशी में भी भीषण सिर-दर्द।

हां, एक बार, बेहद परिचित चेहरा भी नजर आया था। उसने बेहद करीब आकर, उसके चेहरे पर झुके-झुके कुछ कहा भी था। मोहन ने आंखें फाड़-फाड़कर देखने की कोशिश की और मुस्करा दिया।

उसने बुदबुदा कर कहा, 'कित्ती देर से मैं तुम्हारी राह देख रहा था। तुम्हें अब फुर्सत मिली?' उसके बाद वह फिर गहरी नींद में बेहोश हो गया।

शर्मिला को देखकर मानो उसका दर्द कुछ हलका हो आया हो।

लेकिन मरीज को पता ही नहीं चला कब शाम हो गई। शर्मिला सुबह से कई बार चक्कर लगाकर देख गई। शाम को वह फिर आई। नर्स से पता चला, उसके जाने के बाद दोपहर से ही उसकी यह हालत है। होश आते ही वह नजरें फाड़-फाड़ कर चारों तरफ"'किसी को देखता है, उसके बाद, फिर वही बेहोशी।

इलाज में किसी तरह की कमी नहीं रखी गई। यह शर्मिला की दौड़-धूप का ही नतीजा था कि अस्पताल के बड़े-बड़े डाक्टर और सर्जन इस मरीज की तरफ खास तवज्जुह दे रहे थे। उनका ख्याल था, यह मरीज उसका कोई रिश्तेदार होगा। यहां तक कि डाक्टर विश्वनाथ भी मौका निकालकर कई बार देख गए। लेकिन ये तीन दिन काफी संकट में गुजरे।

पहले दिन थोड़ा-बहुत होश जरूर था, लेकिन नींद की दवा के गहरे डोज की वजह से, वह ज्यादा देर तक अपनी आंखें खुली नहीं रख पाता था। लेकिन उस हालत में भी, शर्मिला पर निगाह पड़ते ही, उसके होंठों पर हंसी खिल पड़ती। उसकी शिशुवत् हंसी, इतनी निश्छल थी कि अन्य डाक्टर—यहां तक कि डाक्टर विश्वनाथ की निगाहों से भी छिपी नहीं रही। शर्मिला रह-रहकर झेंप जाती। वह मौका देखते ही उसे पास बुलाकर, बेसिर-पैर की बातों में डूब जाता। शर्मिला ने हर बार उसे हल्के-से बरज दिया।

उस दिन भी उसे डांट लगाते हुए कहा, 'बतकही और लापरवाही की वजह से ही आपने उस दिन संकट को दावत दे डाली, माथे और सिर के दो-दो टांके टूट गए। अगर दुबारा कोई लापरवाही की तो मैं इस कमरे से उठ कर चली जाऊंगी!'

लेकिन अजीब है यह शख्स भी! सिर्फ बातों से ही नहीं, निगाहों से भी बेतरह खींचना जानता है। यह बात शर्मिला ने कितनी ही बार महसूस की है।

इस मरीज की जिम्मेदारी अपने सिर लेने के बाद, वह महज अपना फर्ज निभाने की कोशिश कर रही है। परेशानी तो तब होती है, जब वह उसके साथ अकेली होती है। उसके चाहे-अनचाहे में, उसके मन पर किसी अनागत मेहमान की छाया तो पड़ ही गई है। मरीजों की बात तो अलग, इस किस्म के अजीबोगरीब इंसान से पहले कभी वास्ता नहीं पड़ा। बच्चों जैसी हंसी। बच्चों-सी फरमाइश। बच्चों जैसा गुस्सा और जिद। वैसे उस आदमी के बारे में उसे अभी तक कुछ नहीं मालूम।

हर रोज अस्पताल से लौटने के बाद, वह पक्का इरादा करती"'अगले दिन जब वह अस्पताल जाएगी, तब उससे सामान्य मरीजों की तरह कोई एक

आएगी। उसने तटस्थ होने की भी कोशिश की। लेकिन दिन-भर में कई-कई बार नर्स को दौड़-दौड़कर खबर देने आना पड़ता, मरीज गुस्से से पागल हुआ जा रहा है। उसने धमकी दी है, अगर अब भी वह नहीं आई तो वह बैंडेज नोंचकर फेंक देगा।

उसे मालूम है, अब वह पहले से बेहतर है, अतः शर्मिला ने तय किया था, घर जाने से पहले वह एक बार उसे देखती जाएगी। लेकिन इससे पहले ही उसे भागकर जाना पड़ा। उसे मालूम था, उस आदमी ने अपनी जुबान से जो कहा है, सचमुच कर दिखाएगा। उसके कमरे में पहुंचने पर, आसानी से रिहाई मिलना भी मुश्किल! उस दिन उसे उठते देखकर उसने नर्स के सामने ही खट् से उसका हाथ पकड़ लिया। होठों पर वही शरारती हंसी। शायद इसीलिए नर्स कमरे से निकल कर बरामदे की तरफ चली गई।

शर्मिला के चेहरे और आंखो में स्पष्ट झुंझलाहट के निशान उभर आए। लेकिन उस आदमी को जैसे कुछ फर्क ही नहीं पड़ा। उसने उसी तरह ढिठाई से कहा, 'मैंने तो आपको एक मौका दिया ही था, आपने लिया क्यों नहीं!'

'कैसा मौका?'

'मेरे हाथों से रिहाई पाने का! सुना है, तीन दिन—तीन रात मैं बिल्कुल बेहोश रहा। इतनी देखभाल, सेवा-टहल करके मुझे फिर खड़ा करने की कोशिश आखिर क्यों की? लुढ़क जाने देतीं, मुझे आराम से!'

'मैंने आपकी सेवा-टहल की है, यह आपसे किसने कहा?'

'मेरी जो नर्स है न, वह बहुत भली है। बातों-ही-बातों में उसने मुझे सब कुछ बता डाला। कल ही बता रही थी कि अस्पताल में किसी मरीज की इतनी देखभाल के लिए एक साथ इत्ते सारे डॉक्टर कम ही जुटते हैं। सिर्फ आपकी ही वजह से इस बार मुझे नया जन्म मिला है!'

शर्मिला क्या करे! उस नर्स को डांट लगाए! लेकिन इन हजरत के चेहरे पर दुबारा हंसी फूटने लगी, यानी वह फिर कुछ कहने वाला है। खैर, वह चाहे जो-सो बकवास करता हो, लेकिन शर्मिला को ही भला उसकी बातें इतनी अच्छी क्यों लगती हैं! इस वजह से वह मन-ही-मन अपने पर बेतरह खीझती भी रहती है।

लेकिन मोहन हजारिका तो अपने मन की बात बताए बगैर कहां मानने वाला था? उसने कहा, 'मेरा तो बहुत मन हो रहा था कि उस नर्स को असली बात बता दूं, लेकिन आपका ख्याल करके, चुप रह गया…'

शर्मिला हाथ छुड़ा कर सामनेवाली कुर्सी पर जा बैठी, 'कौन-सी असली बात?'

'मैं उसे बताना चाहता था कि आपकी ही वजह से तो यह एक्सिडेंट हुआ,

जान जाने में कोई कसर नहीं थी, और आपकी ही वजह से मैं बच भी गया ! इसमें हैरानी की क्या बात है ?'

शर्मिला अचानक गंभीर हो आई, 'आपकी मंशा क्या है, बताएंगे ?'

मोहन हजारिका अचकचा गया, 'क्यों ?'

'आप यह सब बचपना क्यों करते हैं ? इस किस्म की बातें क्यों करते हैं ? मैंने आपके लिए ऐसा कुछ भी नहीं किया, मरीज को अच्छा करना हमारा फर्ज है !'

'अच्छा, आप एक बात सच-सच बताइए । मुझ जैसे मरीज से, आपका पहले भी कभी वास्ता पड़ा था ?'

शर्मिला को हंसी आ गई । उसने अपनी कुर्सी भी जरा दूर खिसका ली । उसे मालूम था, मौका मिलते ही, वह दुबारा उसका हाथ पकड़ लेगा ।

लेकिन इन दिनों शर्मिला की आंखों से रातों की नींद उड़ गई थी । अब वह क्या करे ? उस अजीबोगरीब दीवाने के हाथ से वह सचमुच रिहाई चाहती है या नहीं, वह पक्के तौर पर यह फैसला भी नहीं कर पा रही थी । प्रेम किसे कहते हैं, वह ठीक-ठीक नहीं जानती । लेकिन वह उसके प्रेम में दीवानी नहीं है, यह भी सच था । लेकिन उससे रिहाई पाने के लिए, उसे जो ठोकर लगानी होगी, उसके लिए उसका मन गवाही क्यों नहीं दे रहा ! ठोकर लगाने पर, उस आदमी के दर्द-भरे चेहरे का ख्याल आते ही उसके सीने में हूक क्यों उठने लगती है !

वह इतनी जल्दी ठीक हो गया, इस बात को लेकर भी वह अपने से बेतरह नाराज है । वह अब ठीक हो रहा है, माथे और सिर के जख्म सूख रहे हैं, यह बात जैसे वह मंजूर ही नहीं करना चाहता ! शर्मिला ही नहीं, दूसरे डॉक्टर भी जब उसका हाल पूछने आते, वह सपाट जवाब देता, 'तबीयत तो जरा भी नहीं सम्हली । हर वक्त बिगड़ी रहती है'''' लेकिन उसे तकलीफ क्या है, यह वह नहीं समझा पाता । कभी छाती में दर्द, कभी सिर-दर्द की शिकायत करता । उसके सिर और सीने का दुबारा एक्स-रे भी लिया गया, लेकिन कहीं किसी बीमारी का पता नहीं चला ।

नर्स और हेड-नर्स तक को उसकी बीमारी समझ में आ गई थी । अब क्या उस नासमझ व्यक्ति के लिए वह डॉक्टरों में भी अपनी हंसी कराएगी ?

वह बेहद धीर-गंभीर मुद्रा में उसके केबिन में दाखिल हुई । कागज-पत्र तैयार करके, वह अपने साथ ही लेती आई थी ।

उसने फैसले के अंदाज में कहा, 'इस वार्ड के इंचार्ज आपको कल ही रिहा

कर रहे हैं ! आप सुबह चले जाइएगा—जाने से पहले रुपए-पैसे का हिसाब भी चुकाते जाइएगा।'

मोहन हजारिका करीब-करीब उछल पड़ा, 'मुझे अभी···इतनी जल्दी डिस्चार्ज क्यों किया जा रहा है ? मेरी तबीयत अभी भी बहुत खराब है !'

'आप अब बिल्कुल ठीक हैं ! बेमतलब केबिन पर कब्जा जमाकर आप मेरा सिर नीचा कराना चाहते हैं ?'

उसके आरोप पर वह सकपका गया। अगले ही पल उसने अक्खड़ लहजे में कहा, 'दो-चार दिनों में अगर मेरी तबीयत कहीं फिर बिगड़ गई तो···?'

शर्मिला को हंसी आने लगी। उसके प्रति ममता भी हो आई। लेकिन अगर वह हंस पड़ी या जरा भी कोमल हुई, तो फिर वह मुसीबत की तरह गले पड़ जाएगा।

उसने उसी तरह गंभीर मुद्रा में जवाब दिया, 'तबीयत खराब लगे, तो आप आउटडोर में चले आइएगा या मुझे खबर कीजिएगा—मैं घर जाकर आपको देख आऊंगी।'

वह मारे खुशी और उत्साह के गद्गद हो उठा; 'खबर भेजने पर, आप सच्ची आएंगी ?'

'मेरा केस होगा, तो मैं जाऊंगी वरना जिसका केस होगा, उसे भेज दिया जाएगा।'

'दूसरे का केस···? मतलब ? मैं तो सौ प्रतिशत आपका केस हूं, आपको ही आना पड़ेगा !'

शर्मिला उसकी इस बात पर बेसाख्ता हंस पड़ी, लेकिन अगले ही पल वह दुबारा गंभीर हो गई, 'ठीक है, मैं ही आऊंगी।'

'तब ठीक है। मैं कल चला जाऊंगा।···लेकिन रुपए-पैसे साथ रखकर तो मैंने एक्सीडेंट किया नहीं ! जब तक मैं दफ्तर नहीं जाऊंगा, रुपए कहां से दूंगा ? यहां से जाने के बाद, दो घंटे के अंदर सारा बिल चुका दूंगा।'

शर्मिला ने पहली बार सुना, उसका एक दफ्तर भी है। उसे किंचित् कुतूहल भी हो आया, 'ठीक है ! तो फिर यही कीजिए ! मैं ऑफिस में कह दूंगी ! वैसे आपका किस चीज का दफ्तर है ?'

इस सवाल पर वह आदमी जरा सकपका गया। अचानक उसने गंभीर आवाज में जवाब दिया, 'मेरा बिजनेस है···उसी का दफ्तर है।'

'इतने दिन हो गए, आपके दफ्तर से भी तो कोई आपकी खबर लेने नहीं आया ?'

'प्रायः रोज ही आए हैं, दोपहर के वक्त। पहले तो पांच-छः दिनों तक उन्हें खबर ही नहीं थी। लेकिन यहां से मेरा फोन पाकर, वे लोग आए थे,

वरना मेरे लिए रोज-रोज कुरते-पायजामे कहां से आते ? आपको मालूम है, गाड़ी भी उसी चकनाचूर हालत में दो दिनों रास्ते पर ही पड़ी रही ? आपने भी एक बार याद नहीं दिलाया ! इस वजह से मेरा खासा नुकसान भी हो गया ।'

उसकी बातों का लहजा ऐसा था, मानो उस नुकसान के लिए शर्मिला ही ज़िम्मेदार हो ।

'लेकिन मेरी भी अक्ल देखिए ! उन्हीं लोगों से मुझे अपनी चेक-बुक भी मंगवा लेनी चाहिए थी'''लेकिन यह भी तो मुमकिन नहीं था । चेक-बुक तो मेरे बेड-रूम में बंद है और उस कमरे में ताला लगा हुआ है । ठीक है, रुपए मैं कल ही भेज दूंगा ।'

शर्मिला ने पूछा, 'आप किस चीज का बिज़नेस करते हैं ?'

जो इंसान अपनी हर बात में इतना सरल दिखता है, अचानक इस सवाल पर घबड़ा क्यों गया, शर्मिला समझ नहीं पाई ।

उसने मानो बेहद अनिच्छा से जबरदस्ती एक जवाब उछाल दिया, 'मेरा मोटरों का कारोबार है, मैं एक ऑटो-इंजीनियर हूं ।'

खैर, वह गाड़ियों का कारोबार करता होगा, इसका अंदाजा तो उसे बहुत पहले ही हो गया था, वरना नित नई गाड़ियां कहां से आतीं ? इसके साथ ऑटो-इंजीनियर की डिग्री कोई खास बात तो नहीं । इस मामले में शर्मिला को वैसे भी कोई खास जानकारी नहीं थी ।

मोहन हजारिका ने चटपट प्रसंग बदलते हुए पूछा, 'यानी कल से फिर उसी चू-रोड के मोड़ पर आपसे मुलाकात करनी होगी ?'

'नहीं, हरगिज़ नहीं !'

'अच्छा, कल से न सही, परसों से सही !'

'नहीं ! अब आप कभी उस तरह, गाड़ी में पीछा नहीं करेंगे । ऐसा कीजिए, आप अपना फोन नंबर दे जाइए । यहां का नंबर तो आपको मालूम ही है ।' शर्मिला ने जानबूझकर घर के फोन नंबर का जिक्र नहीं किया ।

मोहन हजारिका ने सिर चढ़े बच्चे की तरह सिर हिलाकर कहा, 'टेलिफोन पर आपकी सूरत तो नहीं दिखाई देगी ? उसका क्या उपाय होगा ?'

उसका सवाल इतना सीधा-सादा और सरल था कि वह झेंप गई । उसने उसे टालने की गरज से जवाब दिया, 'अच्छा, पहले आप घर जाकर कुछ दिनों आराम तो कीजिए, फिर देखा जाएगा !'

शाम अब गहरा आई थी । मोहन हजारिका ने उठकर बत्ती जला दी । नर्स

को हफ्ते-भर पहले ही छोड़ दिया गया था। वह तो जोर-जबरदस्ती केबिन दखल किए बैठा था। चौबीस-घंटे वाली नर्स, शर्मिला ने खुद ही छुड़ा दी थी। दरवाजे का पर्दा खींचकर, मोहन हजारिका उसके आमने-सामने आ बैठा। उसके चेहरे पर वही शरारती मुस्कान। मानो उसके दिमाग में फिर कोई खुराफात उपजी हो।

'मैंने शुरू-शुरू के दिनों में आपको बताया था न कि मां की ही शह पाकर, पिछले छह महीनों से मुझ पर दीवानगी का आलम छाया हुआ था और इसी-लिए यह एक्सिडेंट हुआ ! आपको याद है ?'

शर्मिला को बखूबी याद है। आज अगर वह नहीं बताता, तो वह खुद ही यह प्रसंग छेड़ती। उसने जवाब में सिर हिलाकर सहमति जताई—'उसे याद है।'

'और आपने पूछा था, मेरी मां ने कहां और किस बात के लिए शह दी थी। मैंने कहा था, वक्त आने पर बताऊंगा ! बताना तो पड़ेगा ही, याद है ?'

वह आगे क्या कहने वाला है, शर्मिला अंदाजा नहीं लगा पाई; लेकिन फिर भी सतर्क हो गई। इस आदमी के कथनानुसार आज ऐसी कोई बात बताने का वक्त आ गया है, जो उसने पहले नहीं बताई। उसके दोनों कान खुद-ब-खुद सजग हो उठे।

मानो कोई याद···पैरों-पैरों चलकर बेहद करीब आती जा रही हो ! मोहन हजारिका के होंठों की चपल स्मिति एकाएक धूमिल पड़ने लगी।

उसने कहना शुरू किया, 'आप अपने जनरल वार्ड का रजिस्टर खोलकर छह महीने पहले का पन्ना देखिए···वहां मेरी मां का नाम लिखा होगा। नाम था—पार्वती हजारिका। वह जनरल वार्ड के चौदह नंबरवाले बेड पर थी। सीरीयस केस था, इसलिए आप लोगों ने रात के वक्त उसके घर के किसी व्यक्ति को भी साथ रहने की अनुमति दी थी। मैं उसे भी एक अलग केबिन में रख सकता था, रखना चाहता भी था, लेकिन मेरी मां को फिजूलखर्ची बिल्कुल पसंद नहीं थी। अगर मैं जबरदस्ती करता, तो वह नाराज हो जाती। मैं दिन-रात हर वक्त मां के पास-पास रहा।'

पिछले छह महीनों में सैकड़ों रोगी आए और गए, शर्मिला उन सबको कहां तक याद रखती ? उसे कुछ याद नहीं आया। लेकिन पहले ही दिन उसे देखकर, उसका चेहरा इतना जाना-पहचाना क्यों लगा था, अब उसकी समझ में आ गया।

उसे कुछ पूछना नहीं पड़ा। मोहन हजारिका ने फिर बातों की कड़ी जोड़ी, 'उन दिनों···लगातार इक्कीस दिनों तक हर रोज आपको देखा है।

मेरी मां का केस आपके ही हाथ में था। आपको देखते ही, मेरी मां की तकलीफ भी मानो बहुत कम हो जाती थी। आपकी सेवा, दायित्व-बोध देखकर मां आप पर मुग्ध थीं। रोज जब आप मां को देखकर वापस लौट जातीं, मां आपकी तारीफ में पंचमुख हो उठतीं। लगातार आपकी बातें। आपको शायद याद नहीं, मेरी मां, आपको 'बिटिया' कहती थीं।'

शर्मिला को धुंधला-धुंधला-सा ख्याल आने लगा। इस शख्स से मिलती-जुलती किसी प्रौढ़ा का खूबसूरत-सा चेहरा याद आ गया। हां, उसे याद आ गया। उस प्रौढ़ा ने उससे कहा था, 'बिटिया, जैसे भी हो, मुझे बचा लो। वरना मेरे पागल बेटे का जाने क्या हाल होगा! उसे दुनियादारी की कोई समझ नहीं। इस दुनिया में वह मेरे अलावा और किसी को नहीं पहचानता।'

मोहन हजारिका ने अपनी बात जारी रखी, 'आखिरी तीन दिनों मां को होश नहीं रहा। कहीं मैं धीरज न खो दूं, इस डर से मैं करीब भी नहीं जा पाता। बस, दूर खड़ा-खड़ा मैं आपको ही गौर से देखा करता था। आपका चेहरा पढ़कर मैं मां की हालत का अंदाजा लगाने की कोशिश करता। मां के मामले में, किसी विद्यार्थी डॉक्टर से, कोई भूल हो गई थी। आप उस पर बेतरह नाराज हुई थीं···उसे कमरे से बाहर निकाल दिया था।···आखिरी वक्त तो आप उसके बेड के करीब से हिली भी नहीं। घंटे भर में पांच-सात इंजेक्शन दे डाले। मेरा जी हुआ था···मैं चीख कर, आपको सूइयां लगाने से मना कर दूं!'

शर्मिला एकटक उसे देख रही थी। उसकी बातें सुन रही थी।

थोड़ा ठहरकर, मोहन हजारिका ने अपनी कहानी दुबारा शुरू की, 'मां के यूं चले जाने के बाद···उनकी कमी महसूस करते हुए मेरा दम घुटने लगा था। मैं पागलों की तरह छटपटाता रहता था। रात को मुझे नींद भी नहीं आती थी। लेकिन···एक और बात भी हुई। जब मैं मां को याद करता था, उसके साथ-साथ आपका चेहरा भी, मेरी आंखों में तैर आता था! उस पल मन, अचानक बेहद हल्का हो आता। मैं आंखें बंद किए, लोभी की तरह मां को···और आपको देखा करता! आप दोनों को देखते-देखते जाने कब मेरी आंखें लग जातीं।···एक दिन अजीब-सा सपना देखा। मां खूब हंस रही हैं और आपके बारे में जाने क्या-क्या कह रही हैं। अगली दो रातों में फिर एक सपना—मैं ब्याह करके···अपनी दुल्हन के साथ घर लौटा हूं। मां खुशी से उमगती हुईं···अपनी बहू का परछन कर रही हैं···'

मोहन हजारिका की चमकती हुई आंखें शर्मिला के चेहरे पर आ टिकीं। शर्मिला उससे आंखें नहीं मिला पा रही थी, लेकिन उसकी तरफ से आंखें भी नहीं फेर पाई।

'...और वह दुल्हन तुम हो ! तुम ! तुम !! तुम !!!'

शर्मिला बिल्कुल आधुनिक जमाने की लड़की है ! उसने विज्ञान पढ़ा है। डॉक्टरी पास की है ! अगर वह खिलखिलाकर हंस देती, तो जरा भी अस्वाभाविक नहीं लगता। लेकिन हंस देने के बजाय, उसकी समूची देह में रोमांच की लहर दौड़ गई। वह पलकें तक झपकना भूल गई।

मोहन हजारिका ने आत्मस्थ होकर सायास हंसते हुए कहा, 'लगातार दो-दो दिनों तक वही एक सपना देखते-देखते मुझे यह भी लगा कि मेरा ही दिमाग खराब हो गया है। बौना होकर चांद को छूने की चाह। लेकिन बावजूद इसके, मेरी दीवानगी बढ़ती गयी। चाहे जैसे भी हो, तुम्हें सिर्फ एक बार देखने का लोभ ! हैरत की बात तो यह थी कि सपने में तुमसे ब्याह के बाद, मेरे रोजगार में भी दिन-दूनी, रात-चौगुनी तरक्की होने लगी। अतः तुम्हें देखने के लोभ में मैं दीवानों की-सी हरकत करने लगा। चाहे मुझे कितना भी काम हो, सुबह निश्चित वक्त पर मैं गाड़ी लेकर दौड़ पड़ता। छोटा-सा लोभ ...दिनोंदिन...और-और बड़ा होता गया। मैं रोज नई-नई गाड़ियां लेकर निकलने लगा, ताकि तुम्हारी नजर पड़े ! अंत में, दिल के हाथों मजबूर एक दिन तुम्हारी गाड़ी रोकने की भी कोशिश की। इतनी सारी कोशिशों के बाद ही तुम्हारी नजर मुझ पर पड़ी !'

वह उठकर शर्मिला के करीब आ गया। ऐसी आवेगभरी और निविड़ प्यासी आंखें शायद वह पहली बार देख रही थी। स्थान-काल भूलकर वह भी उसे एकटक देखती रही।

अचानक मोहन हजारिका के सूखे खुरदरे हाथ आगे बढ़ आए और उसने उसका चेहरा अपनी हथेलियों में समेटकर उसके होंठों पर अपने तपते हुए होंठ रख दिए...

शर्मिला हड़बड़ा गई। उसे अपनी भरपूर ताकत से पीछे धकेलकर वह उठ खड़ी हुई। उससे कुछ दूर छिटककर वह फिर ठिठक गई। पल-भर में ऐसा अविश्वसनीय कांड हो गया।

मोहन हजारिका के होंठों पर हंसी तिर आई। उसने कहा, 'हां, अब इसके बाद भी...अगर चाहो, तो मुझे खारिज कर दो !'

शर्मिला लगभग दौड़ती हुई कमरे से बाहर निकल गई।

...खारिज करने का अब सवाल ही नहीं उठता। लेकिन शर्मिला की अक्ल काम नहीं कर रही थी। वह घरवालों को कैसे सम्हाले ? मोहन हजारिका बच्चे की तरह, एक-से-एक ऊलजलूल तरकीबें सुझाता या योजनाएं बनाता।

नई-नई योजनाओं के झोंक में कभी-कभी वह यह तजवीज भी पेश करता, 'चलो, हम दोनों गोहाटी छोड़कर भाग चलें। जहां हम दोनों को कोई जानता-पहचानता न हो, ऐसी किसी जगह जाकर तुम अपनी प्रैक्टिस शुरू कर देना और मैं अपना कारोबार जमा लूंगा।'

कभी वह कहता, 'सुनो, प्रैक्टिस करके या कारोबार का हल कंधे पर लादकर घिसटते रहने से क्या फायदा होगा? इन सबके चक्कर में पड़े तो दिन-भर में आखिर हम एक-दूसरे को कितना-सा पाएंगे? इससे तो बेहतर है, चलो, अपने गांव लौट चलें। तुम अपनी शक्ति-भर गांव वालों की भलाई करना और मैं अपनी खेती-बाड़ी में जुट जाऊंगा। हमें बहुत ज्यादा रुपयों या सम्मान की जरूरत नहीं।'

इन सब मामलों में वह निरा अनाड़ी था।

शर्मिला कभी-कभी व्यंग्य भी करती, 'हां...और क्या? रोज-रोज नई-नई गाड़ियां हंकाने के बाद, अब तुम गांव में गाय-बैल हंकाया करना, खेती-मजूरी करना और मैं अपनी गाड़ी में बैठकर अस्पताल और शहर में प्रैक्टिस करने के बाद, अब केला-मूली बतौर फीस लेकर गांवों में मरीज देखती फिरूं। जी नहीं, अच्छे ढंग से रहने के लिए, रुपया और सम्मान—दोनों की ही जरूरत पड़ती है।'

वह उसी तरह सिर हिलाकर एतराज जाहिर करता, 'अरे, जरूरत-भर के रुपए तो आ ही जाएंगे! और रही सम्मान की बात—हम दोनों एक-दूसरे को जितना सम्मान दे पाएंगे, उससे ज्यादा बाहरी दुनिया के लोगों से छीनने की फिक्र बेकार है।'

जिसके व्यावहारिक ज्ञान का यह आलम है, वह गाड़ियों का धंधा कैसे चलाता है, शर्मिला को अक्सर अचरज हुआ है। उसका ख्याल था, उसकी वजह से उसके काम-धंधे में भी खासा नुकसान हो रहा है। अगर उस आदमी का वश चले तो वह दिन-भर के चौबीस घंटों में, अठारह घंटे सिर्फ उसके साथ ही गुजार दे। इसके अलावा टेलिफोन तो खैर है ही। अभी तक उसे घर पर फोन करने की सख्त मनाही है। इस वजह से वह खासा नाराज भी है। डैडी का नाम देखकर, उसने घर का फोन नंबर खुद ही ढूंढ निकाला। शर्मिला ने भय दिखाने के लिए आगाह भी कर दिया था, 'बौड़म की तरह अगर भांडा फोड़ दिया तो अंत में ब्याह का मन्सूबा भी मटियामेट हो जाएगा। वैसे भी डैडी और दीदियों के बारे में कुछ यूं समझा दिया कि वहां फोन करने की उसमें हिम्मत ही नहीं रही।

शर्मिला को अगर कोई अर्जेंट काम नहीं होता तो शाम को दोनों की मुलाकात निश्चित थी। कब, कहां मुलाकात होगी, वहां से वे दोनों कहां

जाएंगे, यह शर्मिला ही तय कर देती ! यह आदमी तो ऐसा बेसब्रा है कि अगर किसी दिन, किसी वजह से वह न आ पाई या वादा-खिलाफी कर गई, तो उसका गुस्सा और मान दोनों देखने लायक होता है।

वह मुंह पर ही सुना देता है, 'मैं तुम्हारे काबिल नहीं हूं, इसीलिए इतनी अवहेलना करती हो न ! असल में तुम प्यार-व्यार नहीं करतीं। मुझ पर सिर्फ दया करती हो और दया आखिर आदमी कहां तक दिखा सकता है ?'

लेकिन उसे अकेले में पाते ही नासमझ की तरह, सारा हरजाना वसूल लेता है। शर्मिला को उसके साथ ज्यादा एकांत में जाते हुए डर ही लगता है ! किसी सेमिनार में वह लगातार दो दिनों तक व्यस्त रही। मुलाकात नहीं हो पाई। उसके अगले ही दिन इतवार था—छुट्टी का दिन। उसका गुस्सा शांत करने के एवज में उसने दोपहर से शाम तक उसके साथ…जी भरकर सैर करने का वादा किया था। उस दिन उसने जो बीहड़ हरकतें कीं, उसका ख्याल आते ही शर्मिला की समूची देह में झुरझरी फैल जाती है। मोहन हजारिका उसे अपनी गाड़ी में बैठाकर, शहर से आठ मील दूर वसिष्ठ आश्रम में ले आया था। वाकई घूमने लायक जगह थी। पिकनिक के लिए खूबसूरत जगह। शर्मिला यहां पहले भी बहुत बार आ चुकी है ! पहाड़ से उतरकर, जहां तीन-तीन झरने एकाकार हो गए हैं, उसी संगम पर स्थित हैं—मंदिर और वसिष्ठ आश्रम। दोपहर के वक्त, यूं भी वहां लोग-बाग का पता नहीं रहता। एकांत जगह। उसे लेकर वह पेड़ों की ऐसी घनी झाड़ी की तरफ निकल आया, जहां उसके साथ बैठते हुए, उसे बेतरह संकोच हो रहा था। उस पर से, उसके चेहरे पर वही निश्चल शरारती हंसी देखकर उसका मन हुआ वह एकदम से उठ जाए।

अचानक बगलवाली जगह की तरफ, अंगुली से इशारा करते हुए वह चीख उठा—'सांप ! सांप !' शर्मिला घबड़ाकर उससे चिपट गई ! उसके बाद ही सच मानो किसी नाग-पाश से जकड़ गई हो ! वह चाहकर भी उस बंधन से अपने को नहीं छुड़ा पाई। दोनों अवश हो आए। किसी ने अचानक उसके अंग-प्रत्यंग पर भयंकर डाकू-सा हमला बोल दिया था। शर्मिला भी लड़खड़ा गई। समूचा तन-बदन अजब तरह से अवश हो आया।

अंत में उसने भरपूर ताकत से उसे झिड़कते हुए कहा, 'अगर तुमने मुझे अभी…इसी वक्त नहीं छोड़ा, तो मुझे हमेशा-हमेशा के लिए खो दोगे, समझ लो !'

बस, उसके सिर पर मानो हजार-हजार हथौड़े पड़े हों। उसने उसी पल उसे आजाद कर दिया।

उसी दिन वह और अधिक चिंतित हो उठी थी। ऐसे नासमझ, अनाड़ी को आखिर कब तक टाला जा सकता है? इसके अलावा उसके अपने मन में भी कोई हलचल नहीं होती, यह कहना भी गलत होगा। लेकिन डैडी और दीदियों का ख्याल आते ही, सारा कुछ गडमड हो जाता। उसकी तो अक्ल जवाब दे जाती है।

...दोनों दीदियां तो अपने-अपने स्वार्थ में व्यस्त हैं। दोनों के यहां एक-एक अदद देवर मौजूद हैं। इस घर में उनका आना-जाना भी है। दोनों के दोनों उसे रसगुल्ले की तरह निगल जाने को मुंह बाए खड़े हैं। दोनों दीदियां अपने-अपने देवरों की हिमायती। बड़ी दीदी की राय में, उनके देवर का कोई मुकाबला नहीं और मंझली दीदी का ख्याल था, उसका देवर विशुद्ध रतन है। शर्मिला अक्सर ही यह प्रसंग छेड़कर, दोनों बहनों को उकसा देती और जब दोनों भिड़ जातीं, तब वह मासूम-सा चेहरा बनाकर मजा लिया करती।

कभी-कभी वह बड़ी 'दी को चिढ़ाते हुए कहती, 'मंझली दी, तुम्हारे देवर के नाम पर जो-सो कहती फिरती है!' कभी मंझली दी को लगा देती, 'दीदी, तुम्हारे देवर के बारे में जाने क्या ऊलजलूल बक रही थी!'

बस, दोनों बहनों में घमासान छिड़ जाता। शर्मिला उस वक्त शरीफ बच्चे की तरह अपने डैडी के पास जा दुबकती।

असल में बहनों की निगाह डैडी की दौलत और जमीन-जायदाद पर गड़ी थी। शर्मिला दोनों देवरों में से, चाहे जिसके भी गले में माला डाले, समूची जायदाद का दो हिस्सा उनके कब्जे में आ जाएगा। डैडी जुबान से कुछ नहीं कहते, लेकिन दोनों में से किसी को भी पसंद नहीं करते। यही शुक्र है। वरना दोनों दीदियों ने डैडी से अपने-अपने देवरों की कम सिफारिश नहीं की। अगर डैडी कहीं थोड़ा-सा भी नरम पड़ते, तो शायद अब तक दोनों में से किसी ना किसी के साथ उसका ब्याह भी हो चुका होता। उन दोनों से कहीं ज्यादा उन्हें अपने दोस्त का विलायतपलटा बैरिस्टर बेटा कुशल देवशर्मा पसंद आया है।

लेकिन शर्मिला अब अपने डैडी को कैसे समझाए? मोहन हजारिका का जिक्र छेड़ते ही, सबसे पहले जाति को लेकर हंगामा मच जाएगा। दीदियां तो खैर, दुश्मनी ही निभाएंगी, लेकिन डैडी उसका मुंह देखकर अगर कहीं से नरम पड़ भी गए, तो उस लड़के का घर-द्वार देखकर बिदक जाएंगे। मोहन उसकी बातें सुनने के बाद से ही, किसी बढ़िया जगह में कम-से-कम तीन कमरों वाले मकान की तलाश में जी-जान से जुट गया है। लेकिन इस मामले में वह सचमुच जोर-शोर से जुट गया है, इसका शर्मिला को यकीन नहीं होता। सुबह से शाम तक कारोबार के चक्कर में लगा रहता है, शाम होते ही उसके

जाएंगे, यह शर्मिला ही तय कर देती ! यह आदमी तो ऐसा बेसब्रा है कि अगर किसी दिन, किसी वजह से वह न आ पाई या वादा-खिलाफी कर गई, तो उसका गुस्सा और मान दोनों देखने लायक होता है ।

वह मुंह पर ही सुना देता है, 'मैं तुम्हारे काबिल नहीं हूं, इसीलिए इतनी अवहेलना करती हो न ! असल में तुम प्यार-व्यार नहीं करतीं । मुझ पर सिर्फ दया करती हो और दया आखिर आदमी कहां तक दिखा सकता है ?'

लेकिन उसे अकेले में पाते ही नासमझ की तरह, सारा हरजाना वसूल लेता है । शर्मिला को उसके साथ ज्यादा एकांत में जाते हुए डर ही लगता है ! किसी सेमिनार में वह लगातार दो दिनों तक व्यस्त रही । मुलाकात नहीं हो पाई । उसके अगले ही दिन इतवार था—छुट्टी का दिन । उसका गुस्सा शांत करने के एवज में उसने दोपहर से शाम तक उसके साथ…जी भरकर सैर करने का वादा किया था । उस दिन उसने जो बीहड़ हरकतें कीं, उसका ख्याल आते ही शर्मिला की समूची देह में झुरझुरी फैल जाती है । मोहन हजारिका उसे अपनी गाड़ी में बैठाकर, शहर से आठ मील दूर वसिष्ठ आश्रम में ले आया था । वाकई घूमने लायक जगह थी । पिकनिक के लिए खूबसूरत जगह । शर्मिला यहां पहले भी बहुत बार आ चुकी है ! पहाड़ से उतरकर, जहां तीन-तीन झरने एकाकार हो गए हैं, उसी संगम पर स्थित हैं—मंदिर और वसिष्ठ आश्रम । दोपहर के वक्त, यूं भी वहां लोग-बाग का पता नहीं रहता । एकांत जगह । उसे लेकर वह पेड़ों की ऐसी घनी झाड़ी की तरफ निकल आया, जहां उसके साथ बैठते हुए, उसे बेतरह संकोच हो रहा था । उस पर से, उसके चेहरे पर वही निश्चल शरारती हंसी देखकर उसका मन हुआ वह एकदम से उठ जाए ।

अचानक बगलवाली जगह की तरफ, अंगुली से इशारा करते हुए वह चीख उठा—'सांप ! सांप !' शर्मिला घबड़ाकर उससे चिपट गई ! उसके बाद ही सच मानो किसी नाग-पाश से जकड़ गई हो ! वह चाहकर भी उस बंधन से अपने को नहीं छुड़ा पाई । दोनों अवश हो आए । किसी ने अचानक उसके अंग-प्रत्यंग पर भयंकर डाकू-सा हमला बोल दिया था । शर्मिला भी लड़खड़ा गई । समूचा तन-बदन अजब तरह से अवश हो आया ।

अंत में उसने भरपूर ताकत से उसे झिड़कते हुए कहा, 'अगर तुमने मुझे अभी…इसी वक्त नहीं छोड़ा, तो मुझे हमेशा-हमेशा के लिए खो दोगे, समझ लो !'

बस, उसके सिर पर मानो हजार-हजार हथौड़े पड़े हों । उसने उसी पल उसे आजाद कर दिया ।

उसी दिन वह और अधिक चिंतित हो उठी थी। ऐसे नासमझ, अनाड़ी को आखिर कब तक टाला जा सकता है? इसके अलावा उसके अपने मन में भी कोई हलचल नहीं होती, यह कहना भी गलत होगा। लेकिन डैडी और दीदियों का ख्याल आते ही, सारा कुछ गड़बड़ हो जाता। उसकी तो अक्ल जवाब दे जाती है।

...दोनों दीदियां तो अपने-अपने स्वार्थ में व्यस्त हैं। दोनों के यहां एक-एक अदद देवर मौजूद हैं। इस घर में उनका आना-जाना भी है। दोनों के दोनों उसे रसगुल्ले की तरह निगल जाने को मुंह बाए खड़े हैं। दोनों दीदियां अपने-अपने देवरों की हिमायती। बड़ी दीदी की राय में, उनके देवर का कोई मुकाबला नहीं और मंझली दीदी का ख्याल था, उसका देवर विशुद्ध रतन है। शर्मिला अक्सर ही यह प्रसंग छेड़कर, दोनों बहनों को उकसा देती और जब दोनों भिड़ जातीं, तब वह मासूम-सा चेहरा बनाकर मजा लिया करती।

कभी-कभी वह बड़ी दी को चिढ़ाते हुए कहती, 'मंझली दी, तुम्हारे देवर के नाम पर जो-सो कहती फिरती है!' कभी मंझली दी को लगा देती, 'दीदी, तुम्हारे देवर के बारे में जाने क्या ऊलजलूल बक रही थी!'

बस, दोनों बहनों में घमासान छिड़ जाता। शर्मिला उस वक्त शरीफ बच्चे की तरह अपने डैडी के पास जा दुबकती।

असल में बहनों की निगाह डैडी की दौलत और जमीन-जायदाद पर गड़ी थी। शर्मिला दोनों देवरों में से, चाहे जिसके भी गले में माला डाले, समूची जायदाद का दो हिस्सा उनके कब्जे में आ जाएगा। डैडी जुबान से कुछ नहीं कहते, लेकिन दोनों में से किसी को भी पसंद नहीं करते। यही शुक्र है। वरना दोनों दीदियों ने डैडी से अपने-अपने देवरों की कम सिफारिश नहीं की। अगर डैडी कहीं थोड़ा-सा भी नरम पड़ते, तो शायद अब तक दोनों में से किसी न किसी के साथ उसका ब्याह भी हो चुका होता। उन दोनों से कहीं ज्यादा उन्हें अपने दोस्त का विलायतयाफ्ता बैरिस्टर बेटा कुशल देवशर्मा पसंद आया है।

लेकिन शर्मिला अब अपने डैडी को कैसे समझाए? मोहन हजारिका का जिक्र छेड़ते ही, सबसे पहले जाति को लेकर हंगामा मच जाएगा। दीदियां तो खैर, दुश्मनी ही निभाएंगी, लेकिन डैडी उसका मुंह देखकर अगर कहीं से नरम पड़ भी गए, तो उस लड़के का घर-द्वार देखकर बिदक जाएंगे। मोहन उसकी बातें सुनने के बाद से ही, किसी बड़ी जगह में कम-से-कम तीन कमरों वाले मकान की तलाश में जी-जान से जुट गया है। लेकिन इस मामले में वह सचमुच जोर-शोर से जुट गया है, इसका शर्मिला को यकीन नहीं होता। सुबह से शाम तक कारोबार के चक्कर में लगा रहता है, शाम होते ही उसके

साथ। असल में उस आदमी को बड़े मकान की खास जरूरत समझ में नहीं आती, वह तो उसके तकाजे पर, थोड़ी-बहुत कोशिश करता रहता है।

मोहन का घर देखकर वह खुद ही कहीं सहम गई थी। शुरू-शुरू में तो वह उसे अपने घर ले जाने को तैयार नहीं हुआ। उसने कहा, 'मैं दूसरा मकान देख रहा हूं! ब्याह के बाद, तुम्हें लेकर उस मकान में रहना नामुमकिन है।'

लेकिन शर्मिला उसके घर चलने की जिद ठान बैठी। उसने कहा, 'छोटा ही सही, मुझे मेरे सास-ससुर का घर भी नहीं दिखाओगे?'

मोहन ने हंसकर टालने की कोशिश की, 'अरे असली घर तो गांव में है! यहां वाला घर तो मैंने बनाया है! बाऊजी की मौत के बाद, मां साल में चार-छह महीने मेरे पास आकर रहती थी, इसीलिए...'

जू रोड के किनारे बांस की खपच्चियों से घिरा हुआ एकमात्र कच्चा घर। कुल मिलाकर एक बड़ा-सा कमरा! हां, ऊपर से काफी रंगा-पुता! यूं इस शहर में बहुत-से अमीरों का भी ऐसा ही रंगा-पुता घर है। लेकिन उनका आकार-प्रकार बिल्कुल अलग है। बहरहाल, वह घर देखकर, सबसे पहले उसे अपने डैडी का ही ख्याल आया। ऐसा मकान देखकर ही उनका मूड खराब हो जाएगा।

उसने पूछा, 'बस, यही एकमात्र कमरा है! तुम्हारी मां कहां रहती थी?'

'क्यों, इसी एक कमरे में हम मां-बेटे आराम से रह लेते थे।' अगले ही पल, उसने उत्साहित आवाज में पूछा, 'अच्छा शर्मि, बगल में इतनी सारी जमीन तो खाली पड़ी है, वहां एक और कमरा बनवा लूं तो कैसा रहे? दो कमरों से ज्यादा की जरूरत भी क्या है? दूसरा कमरा हमारा ड्राइंग-रूम भी रहेगा और तुम्हारा चेंबर भी!...बात असल में यह है...मैं कह रहा था... यह मकान मैंने खुद अपनी कमाई से बनवाया है न, इसलिए अजीब-सा मोह है, इस मकान से! इसके अलावा, यहां मां भी रहा करती थी, इसीलिए यह घर छोड़ने का मन नहीं हो रहा...'

शर्मिला अजब दुविधा में फंस गई। अब उसे कैसे समझाए कि उसे क्या असुविधा है! वह उसकी मां की स्मृति के प्रति भी, किसी तरह का असम्मान जाहिर नहीं करना चाहती थी।

उसने उसे समझाने की कोशिश की, 'सुनो, यह घर जैसा है, वैसा ही रहने दो। हम-तुम बीच-बीच में यहां आकर रहा करेंगे! रोज आकर, मां की तस्वीर पर फूल-माला चढ़ाएंगे, धूप जलाएंगे!'

दीवार पर मोहन की मां की बड़ी-सी तस्वीर टंगी हुई थी। उस तस्वीर पर माला भी पड़ी हुई थी। तस्वीर देखते ही, शर्मिला को अस्पताल की मरीजा की याद हो आई। शर्मिला ने उस तस्वीर को प्रणाम करते हुए कहा, 'इतनी

छोटी-सी जगह में, अलग से एक और कमरा बनवाने जाओगे, तो इसकी सूरत-सूरती ही बिगड़ जाएगी। फिलहाल, किसी छोटे-मोटे लॉनवाला एक मकान देखो। डैडी अगर यह घर देखेंगे, तो उन्हें शायद आपत्ति हो !'

बस, इत्ती-सी बात पर उस नादान शख्स का मुंह लटक गया, 'तुम्हारे डैडी को तो यहां आकर रहना नहीं है, सच बात तो यह है कि तुम्हें ही तकलीफ होगी !'

'देखो, नासमझ जैसी हरकत मत करो ! पहले डैडी को खुश करो, उसके बाद जैसे जी चाहे, मुझे लेकर रहना, तब मैं कुछ नहीं कहने जाऊंगी !' उसने अगला सवाल किया, 'तुम्हारा दफ्तर कहां है ?'

कुछ दूर पर एक मोटर-गैरेज नजर आता था ! वहां कुछेक गाड़ियां मरम्मत के लिए खड़ी थीं। मोहन हजारिका ने, उस गैरेज की तरफ देखते हुए कहा, 'पान बाजार में !'

'चलो, तुम्हारा दफ्तर भी देख आऊं !'

यह सुनकर मोहन का चेहरा और लटक गया। उसने रूखी आवाज में कहा, 'हां, अब पांच मील घसीटते हुए, मेरा दफ्तर देखने जाओगी ! वहां देखने को आखिर है क्या ? एक छोटी-सी कोठरी में ऑफिस ! तुम्हारे डैडी की तरह किसी चाय-बागान का आलमहल्ला ऑफिस तो है नहीं ! तुम उसे देखकर भी नाक-भौं सिकोड़ोगी ! और क्या देखना चाहती हो, बैंक की पास-बुक ?'

शर्मिला सकपका गई।

उसके जवाब देने के पहले ही मोहन ने अगला सवाल जड़ा, 'मैंने बी० एस-सी० पास किया है, उसकी डिग्री भी यहीं मौजूद है, दिखाऊं ?'

उसके सवाल पर शर्मिला ने उसकी तरफ एक बार तिरछी निगाहों से घूर कर देखा। उसके बाद आगे बढ़कर खुद ही दरवाजा भिड़का दिया और एक-एक कदम नापती हुई उसके करीब आ खड़ी हुई। मोहन हजारिका के चेहरे पर तिलमिलाहट थी। उसने झट से हाथ बढ़ाकर उसके बाल पकड़कर उसे अपनी ओर खींचा, आहिस्ते से अपने होंठ, उसके होंठों पर टिका दिए और फिर जल्दी से दरवाजा खोलकर कमरे से बाहर निकल आई।

उसने बाहर से आवाज देकर कहा, 'अब मैं और कुछ देखने की जिद नहीं करूंगी, कुछ नहीं पूछूंगी ! लो अब तो खुश ?'

बस, उसी पल उसका सारा गुस्सा पानी हो गया। बाद में जब शर्मिला ने उसे अपनी आपात समस्या समझाई, तब उसने वायदा किया कि आज से वह खुद घर की तलाश में लगेगा, दूसरों को भी इस काम में लगाएगा।

काफी सोच-विचार के बाद, शर्मिला ने फैसला किया, जो बात सच और सहज है, उसी के भरोसे वह डैडी के सामने खड़ी होगी।

···उस दिन डैडी का ब्लड-प्रेशर देखने की कोई वजह भी नहीं थी, लेकिन उसने जबर्दस्ती उनका ब्लड-प्रेशर देखा। प्रेशर ठीक ही था।

अब उसने लड़ियाती आवाज में कहा, 'जानते हो डैडी, तुम्हारे मना करने पर भी, मैंने तुम्हारा ब्लड-प्रेशर क्यों चेक किया ?'

डैडी ने हंसकर जवाब दिया, 'अपनी गार्जियानागीरी जताने के लिए ! और क्यों ?'

'नहीं, अभी तुम मुझ पर गुस्सा करोगे, इसीलिए पहले से ही प्रेशर चेक कर लिया !' इतना कहकर उसने डैडी का पैर पकड़ते हुए अनुनय-भरे लहजे में कहा, 'सच-सच बताओ डैडी, मैं चाहे जितना बड़ा भी कसूर कर डालूं, तुम मुझे माफ कर दोगे न ? गुस्सा तो नहीं करोगे ?'

प्रमथेश साहब सचमुच अवाक हो उठे, 'मेरे गुस्से या माफी लायक···ऐसा कौन-सा कसूर किया है तूने ?'

'हां, किया है ! पहले तुम वायदा करो !'

आखिर वो उसके पिता थे, उन्होंने कुछ-कुछ भांप भी लिया। पूछा, 'किसी को पसंद कर बैठी है ?'

शर्मिला ने सहमकर, सहमति में सिर हिलाया।

प्रमथेश अब और गंभीर हो उठे। उन्होंने उद्विग्न आवाज में सवाल किया, 'अपनी बराबरी का है ?'

बेटी ने सिर्फ सिर हिलाकर असहमति जताई।

'क्या नाम है ?'

उसने नाम भी बता दिया।

डैडी पल-भर के लिए गुम हो गए। थोड़ा ठहरकर उन्होंने भरी हुई आवाज में कहा, 'इतना आगे बढ़ने से पहले, तुझे एक बार भी मेरा ख्याल नहीं आया ?'

'आया है डैडी, लेकिन तुम तो इतने उदार हो ! तुम किसी को छोटा कैसे समझ सकते हो ? अगर मैं सचमुच सुखी हो सकूं, तो तुम खुश नहीं होगे, डैडी ?'

प्रमथेश साहब ने उसके सवाल का कोई जवाब नहीं दिया। उन्होंने कहा, 'ब्याह के बाद, तू मेरे पास नहीं रह सकेगी, शायद तेरी दीदियों को एतराज हो !'

शर्मिला ने जवाब दिया, 'दीदियां क्यों और क्या चाहती हैं, यह तो तुम मुझसे बेहतर जानते हो, डैडी ! मुझे तुम्हारा आशीर्वाद भर चाहिए, और कुछ नहीं। अगर मैं देवशर्मा को भी ब्याही जाती, तो भी तुम्हारे पास रहना नामुमकिन था !'

'लड़का पढ़ा-लिखा कितना है ? करता क्या है ?'

'बी० एस-सी० पास है। इसके अलावा ऑटो-इंजीनियर वगैरह भी है। गाड़ियों का बिजनेस है। अच्छा कमा लेता है। पान बाजार में अपना दफ्तर भी है—'

'घर में कौन-कौन है ? उसका घर-द्वार देखा है तूने ?'

इस सवाल पर शर्मिला मन-ही-मन, नर्वस हो आई। अत: उसने अपनी पहली बात पर जोर देते हुए कहा, 'दुनिया में उसका कोई नहीं है, डैडी ! उसकी मां मेरी मरीज थी। सात-आठ महीने पहले वह भी गुजर गईं। गांव में उनका घर-द्वार और जमीन-जायदाद भी है। यहां तो जो है, सो नहीं के बराबर है। जू रोड पर एक घर है'''एक कमरेवाला। लेकिन वहां तो मैं रह नहीं पाऊंगी, सो वह किसी अच्छे-से मकान की तलाश में है—'

प्रमथेश फिर कुछ पलों को गुम रहे। कुछ देर बाद उन्होंने मुंह फेरकर कहा, 'खैर, इंतजाम वगैरा तो पक्का कर ही लिया है, अब मुझसे क्या पूछती है ? कब है ब्याह ?'

'तुम ऐसी बातें करोगे तो मुझे तकलीफ होगी, डैडी ! ब्याह कब है, यह मुझे नहीं मालूम ! वैसे अभी तुम्हें कष्ट हो रहा है, डैडी ! लेकिन विश्वास करो, जब तुम उससे मिल लोगे, उसे जानोगे, तो तुम्हें भी वह बहुत अच्छा लगेगा। बिल्कुल बच्चों की तरह सीधा-सादा और सरल है।'

उसकी तारीफ करते हुए वह खुद ही शर्मा गई। डैडी उसे एकटक घूरते रहे।

'अच्छा, किसी दिन उसे ले आना, अभी अपनी दीदियों से कुछ मत कहना।'

यह सब सुनते ही मोहन हजारिका ने अपना झोवा-जैसा सिर हिलाकर कहा, 'बाप रे ! मैं तुम्हारे डैडी के सामने जाकर नहीं खड़ा हो सकता ! मुझे डर लगता है—'

इतने सबके बाद, उसकी ये बातें सुनकर शर्मिला एकदम से भड़क गई, 'तब रहने दो, ब्याह करने की भी कोई जरूरत नहीं !'

मोहन सकपका गया, 'ब्याह की जरूरत नहीं, मतलब ?'

'तुम डैडी से मिलोगे नहीं, बात करोगे नहीं, तो उनकी बेटी से ब्याह कैसे करोगे ?'

मोहन सोच में पड़ गया। थोड़ा ठहरकर उसने प्रस्ताव रखा, 'अच्छा, इसके बजाय, अगर हम दोनों कहीं भाग चलें और ब्याह कर लें, तो कैसा

रहे ?'

शर्मिला, सचमुच समझ नहीं पाई कि वह इस बात पर नाराज हो या हंस दे। उसने हैरत-भरी आवाज में पूछा, 'अच्छा, क्या तुम सचमुच निरे बच्चे हो ? कुछ भी समझना नहीं चाहते ? मान लो, अगर हम भागकर ब्याह कर भी लें, तो डैडी क्या उसके बाद, हमारा मुंह भी देखेंगे !'

'नहीं देखेंगे, तो न देखें ! मैं क्या उनसे कुछ मांगने जा रहा हूं ? सच बात तो यह है, कि तुम ही उन्हें देखे बिना नहीं रह पाओगी !'

शर्मिला की आवाज में व्यंग्य उभर आया, 'चलो, इतनी देर बाद सही, थोड़ा-बहुत तो समझा तुमने ! तो कब चलोगे ?'

'मुझे क्या उनके सामने इंटरव्यू देना होगा ?'

शर्मिला ने होठों तक आई हंसी को एकबारगी दबाते हुए जवाब दिया, 'हां, वह तो देना ही पड़ेगा।'

'और अगर मैं उनकी राय में फेल हो गया, तो ?'

'तो···खारिज !'

मोहन पल-भर को गुम हो रहा। थोड़ा ठहरकर उसने कहा, 'तो समझ लो···मैं फेल हो गया !'

शर्मिला झुंझला उठी, 'उफ ! हद हो गई। अरे, भई डैडी के दरबार में मैंने तुम्हें पहले से ही पास करा रखा है ! लो, अब तो निश्चित ? लेकिन जिसके साथ वह अपनी बेटी ब्याह रहे हैं, उसे एक नजर देखेंगे भी नहीं ?'

उसकी बातें सुनकर वह थोड़ा-बहुत आश्वस्त हो आया। इतवार···यानी छुट्टी के दिन सभी फुर्सत में रहते हैं। उसी दिन जाना तय हुआ। बीच में अभी चार दिन बाकी थे। लेकिन मोहन हजारिका एकबारगी हड़बड़ा उठा। उस दिन वह कौन-सी शर्ट और पेंट पहनकर जाएगा, यह चुनाव भी शर्मिला को ही कर देना होगा, वरना बहुत मुसीबत होगी—यह बात उसने साफ कह दी।

शर्मिला ने उसे छेड़ते हुए कहा, 'मैं अपनी कोई साड़ी ले आऊंगी, वही पहन जाना। शुरू-शुरू में तो ऐसे तीसमारखां बनकर इतना हंगामा कर डाला···अब भीगी बिल्ली बन रहे हो ?'

इतवार आने में अभी दो दिन बाकी थे। शर्मिला डैडी को लेकर अजीब दुविधा में फंस गई। अचानक उनका ब्लड-प्रेशर काफी चढ़ गया। एक दिन तो नाक से खून भी आने लगा। शर्मिला ने घर पर ही चटपट ई० सी० जी० करा

डाली। रिपोर्ट भी खास संतोषजनक नहीं थी। उनके दिल की हालत तो खैर, कभी भी बहुत ठीक नहीं थी। ऐसी हालत में भी वह इतनी मेहनत करते हैं, इसीलिए शर्मिला भी उन पर कड़ी निगरानी रखती है। लेकिन इधर दो महीनों में, वह सच ही उनका ख्याल नहीं रख पाई। डैडी ने भी खूब बद-परहेजी की होगी और अब मुसीबत में डाल दिया। इसके अलावा उसके मन में और एक फिक्र जाग उठी। उसके ब्याह को लेकर डैडी मन-ही-मन खूब सोचते रहे होंगे। इस ब्याह से वह बहुत खुश नहीं हैं, यह भी साफ जाहिर है।

शनिवार तक जब डैडी की हालत में कोई सुधार नहीं हुआ तो शर्मिला ने कहा, 'मैं मना किए देती हूं! पहले तुम्हारा प्रेशर तो कम हो, तब उसे आने को कहूंगी। अभी ज्यादा बातचीत तुम्हारे लिए ठीक नहीं।'

प्रमथेश ने सिर हिलाकर उसे रोक दिया, 'नहीं, उसे आने दो। वैसे बात करने को अब रहा ही क्या है? बस, जरा देख तो लूं!'

डैडी ने दीदियों को भी आगाह कर दिया—उनसे कोई मिलने आने वाला है। शर्मि भी उसे अच्छी तरह पहचानती है। जब वह आए, तब उसकी अच्छी तरह खातिर की जाए।

डैडी समझ रहे थे, उनकी बात दीदियों को शक में नहीं डालेगी। लेकिन डैडी का ऐलान सुनते ही उन दोनों के कान खड़े हो गए। डैडी के कमरे से निकलते ही शर्मिला से सैकड़ों सवाल पूछ डाले गए। कैसा लड़का है? क्यों आ रहा है? क्या नाम है?

शर्मिला ने दो टूक जवाब सुना दिया, 'नाम-बाम मैं नहीं जानती। डैडी की तबीयत ठीक नहीं रहती, इसीलिए वह देखने आ रहा है। अच्छा मैं चलूं, जरा डैडी का प्रेशर चेक कर लूं—'

वह बहाना बनाकर दीदियों के पास से खिसक गई।

सुबह, डैडी अपने कमरे के सामने बालकनी में बैठे थे। शर्मिला ने उनसे लेटने को कई बार कहा, लेकिन वह टाल गए। उस वक्त वह डैडी के पास ही खड़ी थी और रह-रहकर उसकी निगाह घड़ी पर ठहर जाती!

'''एक चमचमाती स्टुडीबेकर गाड़ी अंदर दाखिल हुई। लॉन पार करके, उनके तिमंजिले मकान के सामने आ खड़ी हुई। डैडी की निगाह एकटक उस गाड़ी पर जम गई। शर्मिला चोर निगाहों से अपने डैडी का चेहरा पढ़ती रही। वह काफी विनम्र मुद्रा में गाड़ी से उतरा। सामने फूलों की वृत्ताकार झाड़। डैडी का कमरा ठीक उसके सामने पड़ता था। दूर से ही शर्मिला और उसके डैडी को देखकर, वह नर्वस-सा, अपनी गाड़ी के पास ही ठिठक गया।

शर्मिला लाज से आरक्त हो उठी। यूं डैडी के नाखुश होने का कोई कारण नहीं···वाकई, वह काफी स्मार्ट और खूबसूरत लग रहा था।

प्रमथेश साहब ने कहा, 'तू जा···'

शर्मिला ने हकलाते हुए कहा, 'दीदी, जीजाजी लोग उधर ही हैं। वे उसे बैठा लेंगे। तुम चलो, कमरे में लेट जाओ! थोड़ी देर में मैं ही उसे तुम्हारे पास ले आऊंगी।'

प्रमथेश साहब ने आपत्ति नहीं की। जाने से पहले उन्होंने दुबारा उस गाड़ी पर एक नजर डाली।

उधर बड़े दामाद मेहमान के स्वागत में आगे बढ़ आए।

डैडी को बिस्तर पर लिटाकर, शर्मिला झटपट कमरे से बाहर निकल आई। उस शख्स को दीदियों के चंगुल में ज्यादा देर फंके रखना, शायद उचित नहीं होगा। हालांकि, उसे क्या-क्या बोलना या नहीं बोलना है, यह सब उसे पहले ही सिखा-पढ़ा दिया गया है।

वह गंभीर मुद्रा में कमरे में दाखिल हुई, कमरे में कदम रखते ही पूर्व-निश्चित योजना के खिलाफ, उससे एक भयंकर भूल हो गई। उसने हाथ जोड़कर मोहन को नमस्कार किया।

लेकिन अगले ही पल, उसे अपनी भूल का अहसास हो आया। वह शख्स भी भौंचक्का-सा एकटक उसे ही देखे जा रहा था।

उर्मिला ने गंभीर लहजे में सूचित किया, 'आपने आते ही दरियाफ्त किया, शर्मि के डैडी अब कैसे हैं? मैंने इन्हें बता दिया है, डैडी की देखभाल तो शर्मि ही करती है, अतः वही उनकी तबीयत का सही-सही हाल बता पाएगी।'

दीदी की शक्की निगाहें कहीं और गड़ी थीं। गहरी जान-पहचान न होती तो नाम के पहले 'मिस' या 'देवी' या 'जी' लगाए बिना, यहां तक कि शर्मिला भी नहीं, सीधे-सीधे 'शर्मि' कहने की हिमाकत कैसे हुई?

शर्मिला मन-ही-मन खीज उठी, लेकिन बाहर से बेहद सहज और किंचित गंभीर हो आई। उसने चिंतित लहजे में कहा, 'नहीं। आज भी खास अच्छी नहीं है। डायस्टलिक काफी चढ़ा हुआ है। आप चलकर पहले डैडी से मिल लेते तो बेहतर होता।'

वह हड़बड़ाते हुए उठ खड़ा हुआ। उठते-उठते उससे दुबारा एक गलती हो गई। उसके मुंह से बेसाख्ता निकल गया, 'हां, चलो चलकर पहले उन्हें ही प्रणाम कर लें। बरामदे में ही तो बैठे थे, तुम अगर इशारा कर देतीं, तो मैं सीधे वहीं चला आता।'

दीदी और जीजा लोग एक-दूसरे का मुंह देखने लगे। शर्मिला का हौसला अब पस्त हो गया। एक अकेली वही, आखिर कब तक असल बात पर पर्दा डाले? बिना कुछ कहे-सुने या किसी तरफ देखे, वह कमरे से बाहर निकल गई। मोहन भी उसके पीछे-पीछे चल पड़ा। शर्मिला ने एक बार पीछे मुड़कर देख लिया, दीदियां धीमी चाल से इधर ही आ रही थीं।

शर्मिला ने दबी आवाज में झिड़कते हुए कहा, 'इत्ता-इत्ता कुछ सिखाया-पढ़ाया था···'

उसने भी गुस्से में बौखलाते हुए कहा, 'तुम न···एक नंबर की झूठी हो! तुम लोगों का घर ऐसी शान-शौकतवाला है, तुमने मुझे एक बार भी बताया था? बाप-रे-बाप! फाटक के अंदर घुसते ही, मारे घबड़ाहट के···मेरी तो धड़कन तेज हो गई! जिधर देखता हूं···आंखें फटी पड़ती हैं।'

शर्मिला ने जबरन अपनी हंसी रोकते हुए कहा, 'तमाम पैसेवालों का घर ···जैसा चार-पांच बीघे जमीन के अहाते में घिरा होता है, वैसा ही हमारा भी है। डैडी ने हम तीनों बहनों के लिए पक्का इंतजाम करने के बाद···यह मकान बनाया है।'

प्रमथेश अपने बिस्तर पर अधलेटे थे। मोहन हजारिका ने आगे बढ़कर उनके पैर छुए। सामने की गद्देदार कुर्सी की तरफ इशारा करते हुए प्रमथेश ने कहा, 'बैठो!'

वह बैठ गया।

शर्मिला ने ही बात शुरू की, 'डैडी की तबीयत आज भी बहुत डाउन है, ज्यादा बातचीत करना मना है···'

मोहन ने हड़बड़ाकर कहा, 'अरे···अरे! तब बातचीत बिल्कुल नहीं करनी चाहिए।' अपने भावी श्वसुर की बीमारी के लिए, उसने मन-ही-मन उस ऊपरवाले का शुक्रिया अदा किया।

प्रमथेश साहब ने सवाल किया, 'गौहाटी में तुम कितने दिनों से हो?'

'जी, बचपन से ही! यहीं हॉस्टल में रहकर मैंने लिखाई-पढ़ाई की है।'

'जू रोड पर कहां रहते हो?'

मोहन इतनी-सी जवाबतलबी से बेतरह घबड़ा गया। शर्मिला डैडी के पीछे ही खड़ी थी। उसने सच बात बता देने का इशारा किया। लेकिन दरवाजे के बाहर से, मंझली दीदी ने भी उसे इशारा करते हुए देख लिया था।

बहरहाल, मोहन ने जू रोड का पता-ठिकाना बता दिया। उसके बाद जरा अक्ल से काम लेते हुए, उसने विनीत लहजे में कहा, 'वहां मेरे पास सिर्फ

एक ही कमरा है। अब मैं जल्दी ही कोई अच्छा-सा बंगला ले लूंगा। लेकिन, अब आप ज्यादा बात न करें, आपको तकलीफ हो रही होगी।'

प्रमथेश साहब ने उसे जाने की अनुमति दे दी। सच ही उन्हें थकान लग रही थी।

उन्होंने दरवाजे की तरफ देखते हुए अपनी मंझली बेटी को आवाज देकर कहा, 'इसे ले जा। चाय-नाश्ता कराए बिना मत भेजना।' उन्होने मोहन की ओर मुखातिब होकर कहा, 'जाओ उन लोगों से भी मिल लो।'

मोहन हजारिका ने राहत की सांस ली। प्रमथेश बाबू के कमरे में वह पसीने-पसीने हो उठा था। प्रमिला के पीछे वह दुबारा उसी ड्राइंग-रूम में आ पहुंचा इतनी देर बाद मानो उसकी जान में जान आई।

कुछ देर बाद शर्मिला भी उस कमरे में दाखिल हुई। सिर पर फुल-स्पीड में पंखा घूम रहा था, लेकिन फिर भी मोहन के माथे पर पसीने की बूंदें झलक आईं। उसे कमरे में विठाकर मंझली दी चाय-नाश्ते का इन्तजाम करने चली गईं। जीजा लोग भी कमरे में नहीं थे। शर्मिला को अंदाजा लग गया, अंदर भूचाल मचा होगा। ना, अब किसी के लिए जानना-समझना बाकी नहीं रहा। अब शर्मिला भी अंदर-ही-अंदर थोड़ी लापरवाह हो आई। डैडी राजी हों, तो उसे दूसरे काजियों की कतई परवाह नहीं।

दीदियां लौट आईं। खाने-पीने का शाही इंतजाम। लेकिन चाय की महफिल खास जम नहीं पाई। दोनों दीदियों के मुंह कुप्पा और आंखों में आक्रोश।

मंझली दीदी ने एक बार उसे सुनाते हुए व्यंग्य भी कसा, 'मिस्टर हजारिका, आप तो कुछ खा ही नहीं रहे हैं। डैडी सुनेंगे तो हमें ही दोष देंगे कि हम लोगों ने आपकी खातिर-तवज्जुह नहीं की।'

'अरे, नहीं-नहीं! ऐसा क्यों कहेंगे भला! मैं तो काफी कुछ खा चुका हूं...'

असल में शर्मिला की मुद्रा देखकर वह अंदर ही अंदर बेतरह घबड़ा गया था!

थोड़ी देर बाद उसने विदा ली। मोहन ने जुबान से कुछ नहीं कहा, लेकिन उसके मन की बात समझने में शर्मिला को दिक्कत नहीं हुई। वह चाहता था, वह अभी, इसी वक्त उसके साथ हो ले!

उसे गाड़ी तक छोडने आते हुए रास्ते में उसने समझाकर कहा, 'तुम्हारे साथ जाना अच्छा नहीं दिखेगा...और भी बहुत सारी अड़चनें हैं...शाम

को तुम घर पर ही रहना, मैं आऊंगी !'

मोहन हजारिका चला गया। ड्राइंग-रूम के दरवाजे पर दीदियां मानो इसी इन्तजार में खड़ी थीं। जीजा लोग भी अपने-अपने कमरों के सामने खड़े दिखाई दिए।

शर्मिला की तरफ तिरछी निगाहों से देखते हुए, प्रमिला ने सवाल किया, 'अब हम लोग भी कुछ जान सकते हैं ?'

अन्दर ही अन्दर शर्मिला का मिजाज चढ़ गया, लेकिन उसने शांत आवाज में पूछा, 'क्या जानना चाहती हो ?'

प्रमिला का स्वर उग्र हो आया, 'हम लोग जानना चाहते हैं, इस सबका मतलब क्या है ?

'मुझे तो लग रहा है—मतलब तुम लोग बखूबी समझ गई हो...'

'यानी डैडी...जाने कहां के इस हजारिका से तेरा ब्याह रचा रहे हैं ?'

'कहीं का नहीं ! जीजाजी की तरह ही...वह भी एक शरीफ इंसान है, शिक्षा-दीक्षा में भी उन लोगों से कहीं बढ़-चढ़कर ही है।'

इस बार बड़ी दीदी उर्मिला चीख उठी, 'जुबानदराजी करते हुए तुझे शर्म नहीं आती ? मारे शर्म के हमारी तो गर्दन नीची हुई जा रही है ! तूने सोचा क्या है ? डैडी राजी हो गए, तो हम लोग कोई जांच-पड़ताल नहीं करेंगे ? हम लोग क्या उस आदमी के साथ यहां रहेंगे ?'

शर्मिला ने निर्विकार भाव से आगाह किया, 'चीखो मत ! डैडी की तबीयत ठीक नहीं। यू निश्चिंत रहो, तुम लोग अगर चाहोगी भी, तो मैं यहां नहीं रहने वाली !'

'लेकिन डैडी की क्या अक्ल मारी गई, जो वह राजी हो गए ?'

'डैडी की अक्ल तुम लोगों से अच्छी है। अब इस बात को लेकर उन्हें परेशान मत करना या उनसे जिरहबाजी भी मत करना।'

मझली प्रमिला झुंझला उठी, 'मान ले, अगर हमने बात छेड़ी भी तो हमारा क्या कर लेगी ?'

'डैडी की तबीयत को ध्यान में रखते हुए, तुम लोगों को निकाल बाहर करूंगी !'

शर्मिला उस कमरे से निकलकर सीधे डैडी के कमरे में चली आई। छोटी बहन का दुस्साहस देखकर दोनों बहनों को मानो लकवा मार गया। डैडी को वह कितनी दूर तक अपने वश में कर चुकी है, उसकी बातों से साफ जाहिर था।

अपने कमरे में चहलकदमी करते हुए मोहन हजारिका की नजर बार-बार अपनी घड़ी पर टिक जाती। नासमझ की तरह वह अंदर-ही-अंदर गुस्से से बिफर रहा था। वैसे उसे अपने गुस्से की वजह नहीं मालूम।

शर्मिला के आते ही उसने बिफर कर कहा, 'तुमने मुझे पहले क्यों नहीं बताया कि तुम लोग ऐसी शान-शौकत से रहते हो ? तुम्हारे डैडी इतने अमीर आदमी हैं ?'

शर्मिला का मूड भी बेतरह खराब था। जवाब में उसकी आवाज भी रूखी हो आई, 'सुनो, अब तुम ब्याह करने जा रहे हो, मेरा ख्याल है, तुम्हें अब थोड़ा मैच्योर हो जाना चाहिए।'

'क्यों ?'

'रोज-रोज गाड़ी हंकाकर, उस तरह पीछा करने से पहले या एक्सीडेंट करने से पहले, हमारी हैसियत का पता लगा लेते!' अगले ही पल कटुता के बावजूद वह हंस पड़ी, 'तब तुम लगातार दो दिनों तक उस किस्म के सपने भी नहीं देखते ! क्यों, मैं ठीक कह रही हूं न ?'

बावजूद इसके मोहन हजारिका मुंह फुलाए रहा, 'हां, लोग-बाग सुनेंगे तो यही कहेंगे न···कि तुम्हारे डैडी के पास इतनी दौलत है, इसी लालच में, मैं तुमसे जान-बूझकर जा टकराया···'

'भई, यह टक्कर होना गुनाह है या मेरे डैडी का दौलतमंद होना ? इसके अलावा लोग-बाग से तुम्हारा क्या मतलब है ?'

'तुम्हारी बहनें !'

'मेरे जीजा लोग तो मेरे डैडी को देखकर ही, मक्खी की तरह भिनभिनाने लगे थे।'

मोहन ने तैश में सिर झटकते हुए कहा, 'लेकिन मुझे वह सब नहीं चाहिए, मुझे तो सिर्फ तुम···'

शर्मिला को गुस्से की बजाय और भी हंसी आने लगी। उसने हंसते हुए कहा, 'इससे ज्यादा तुम्हें देने कौन जा रहा है ?'

जब मोहन का गुस्सा कुछ ठंडा पड़ा तो उसने अफसोस जाहिर करते हुए कहा, 'सच ही, तुम्हें बेहद तकलीफ होगी, शर्मि ! मुझे पता नहीं था। मैं सच ही तुम्हारे काबिल नहीं हूं !'

शर्मिला ने आंखें तरेरकर कहा, 'तब ऐसा करो, डैडी को फोन करके मना करा दो।'

उसकी इस बात पर वह एकदम से बेचैन हो उठा, '···तब तो···

मैं बेमौत मारा जाऊंगा !'

इस बार शर्मिला ने उसे दुलारते हुए कहा, 'सुनो, तुम बिल्कुल परेशान न हो। मुझे कोई तकलीफ नहीं होगी। तुम खुद भी इतना बड़ा बिजनेस करते हो, खासे रुपए कमाते हो, अपने को क्यों इतना छोटा समझते हो ! तुम क्या मुझे पानी में बहा रहे हो ?'

किसी नासमझ बच्चे की तरह, अपने अंतर्द्वन्द्व से जूझने के बाद, मानो अब उसकी जीत हुई हो। वह एकबारगी खुश हो उठा। उसने अपनी छाती ठोंक-कर कहा, 'पानी में—मैं तुम्हें इस सिंहासन की मलिका बनाऊंगा। मैं तुम्हें जो दूंगा उसका हिसाब रुपए-पैसे से नहीं हो सकता, यह मेरा दावा है !'

इस बार शर्मिला ने हंसकर उसे आंखें तरेरते हुए कहा, 'लेकिन हुजूर, मेरा दावा है···हिसाब रुपए-पैसे का भी होता है ! और सवा सोलह आने होता है !'

सप्ताह-भर बाद। सुबह करीब साढ़े दस बजे होंगे। मोहन हजारिका के घर के करीब ही मोटर-गैरेज के सामने एक विलायती डॉज गाड़ी आकर रुकी। गाड़ी से उतरकर प्रमयेश बरकाकुती, इधर-उधर आंखें फाड़े देखते रहे, उसके बाद गैरेज के सामने आ खड़े हुए।

सामने ही-कोई मिस्त्री काम कर रहा था। प्रमयेश साहब ने उसी से मोहन हजारिका के घर का पता पूछा। उस मिस्त्री ने अंगुली के इशारे से मोहन का घर दिखाते हुए कहा, 'लेकिन मालिक तो यहीं गैरेज में ही हैं ! ···वो रहे ! गाड़ी ठीक कर रहे हैं···'

उसने कुछ दूर पर खड़ी एक गाड़ी की तरफ इशारा कर दिया।

प्रमयेश साहब एकदम से बौखला गए। उस आदमी को जरूर कोई गलत-फहमी हो गई है। उन्होंने दुबारा दरयाफ्त किया, 'यह गैरेज किसका है ?'

'अभी-अभी आप जिसके बारे में पूछ रहे थे, उन्हीं मोहन हजारिका का।'

प्रमयेश एकबारगी विमूढ़ हो आए। धीरे-धीरे वह उस गाड़ी की तरफ बढ़े, जिसकी मरम्मत का काम चल रहा था। गाड़ी के नीचे, चटाई बिछा-कर उस पर चित लेटा हुआ, कोई मिस्त्रीनुमा आदमी काम कर रहा था। उसका चेहरा दिखाई नहीं दे रहा था, लेकिन तेल-कालिख पुते पायजामे सहित उसके दोनों पैर दिखाई दे रहे थे।

कोई रईस ग्राहक समझकर, उस छोकरे ने नीचे झुककर अपने मालिक को आवाज लगाई, 'मालिक···आपको एक साहब बुला रहे हैं···'

कोई एक दूसरा।

गाड़ी के नीचे से, तेल-कालिख में नहाया हुआ, जो व्यक्ति बाहर निकला, उसे देखकर प्रमथेश बरकाकुती मानो आसमान से गिरे। ऐसा बड़ा अजूबा जिंदगी में मानो पहली बार ही देख रहे हों!

उनके सामने जो व्यक्ति खड़ा था, उसके सिर पर भी मानो हथौड़ा पड़ा हो।

दोनों निर्वाक! दोनों ही स्तब्ध!

पहले प्रमथेश बरकाकुती ने ही जुबान खोली, 'मैं सही-सही देख रहा हूं न! तुम ही मोहन हजारिका हो न?'

उसने फटी-फटी आंखों से उनकी तरफ देखते हुए सिर हिलाकर सहमति जताई।

'तो तुम इस किस्म के ऑटो-इंजीनियर हो?'

उसने स्वीकृति में दुबारा सिर हिलाया।

'पान-बाजार में तुम्हारा गाड़ियों का कारोबार है? निजी दफ्तर है?'

उसने सिर हिलाकर मंजूरी दी, उसका कोई दफ्तर वगैरह नहीं है।

गुस्से के मारे प्रमथेश का समूचा चेहरा आगभभूका हो उठा। उन्होंने गरजकर पूछा, 'तुम यह हो, शर्मिला जानती है?'

उसने सिर हिलाकर जताया, वह नहीं जानती।

'तुम्हारा बी० एस-सी० होना भी फरेब है?'

इतनी देर बाद मानो उसे होश आया। उसने अस्फुट आवाज में कहा, 'एक मिनट!'

मानो यह उसके जीवन-मरण का प्रश्न हो, वह बेतहाशा अपने घर की तरफ दौड़ गया। दो मिनट में ही वापस भी लौट आया—उसके हाथ में बी० एस-सी० का सर्टिफिकेट था। उसने प्रमथेश साहब की ओर बढ़ा दिया।

प्रमथेश बरकाकुती ने उस पर एक नजर डालने की भी तकलीफ नहीं की। उसे तोड़-मरोड़कर उसके चेहरे पर दे मारा और हनहनाते हुए गाड़ी में जा बैठे। मोहन हजारिका विमूढ़ की तरह उनकी गाड़ी की तरफ देखता रहा। बाकी मिस्त्रियों की निगाहें भी उस पर गड़ी हैं, उसे इसका भी होश नहीं रहा।

मोहन हजारिका अपने कमरे में सिर पर हाथ रखे बैठा हुआ था। बदन पर वही तेल-कालिख पुता पायजामा और बदरंग बनियान। डेढ़ घंटे कहां गुजर गए, उसे होश नहीं। शर्मिला अभी अस्पताल में ही होगी। कई बार उसे ख्याल आया, वह इसी वक्त उससे मिल ले, लेकिन उसका मन कह रहा था, जो होना था, हो चुका। प्रमथेश बरकाकुती अब तक अपनी बेटी के पास पहुंच चुके होंगे। मोहन हजारिका का मन हो रहा था, वह अपने ही सिर के बाल

नोंच डाले। वह शर्मिला को सारी बातें सच-सच बता देना चाहता था, लेकिन दुविधा में पूरा हफ्ता गुजर गया। अब तो काफी देर हो चुकी।

वह चौंककर उठ खड़ा हुआ। शर्मिला दरवाजे पर खड़ी थी। उसकी आंखों से चिनगारियां निकल रही थीं, चेहरा गुस्से से आग! मोहन हजारिका उसी तरह भौंचक्का-सा खड़ा रहा।

शर्मिला की निगाहों ने एक बार आपादमस्तक उसका निरीक्षण किया, उसके बाद हिकारत-भरी आवाज में कहा, 'तो तुम्हारा असली परिचय आखिर खुल ही गया!'

'शर्मि···शर्मि···मैं···' वह तड़पकर आगे बढ़ा। वह कुछ कहना चाहता था ·

थी। उसकी इतनी आरजू-मिन्नतों के जवाव में, उसने उसके गाल पर कसकर एक तमाचा जड़ दिया। तमाचा खाकर, हठात मोहन हजारिका ने उसका रास्ता छोड़ दिया।

शर्मिला चली गई।

लेकिन, अव उस घर में वह अपना मुंह कैसे दिखाएगी? दीदियों ने जुवान से कुछ नहीं कहा, लेकिन पीठ-पीछे हंस रही होंगी। डैडी का कड़ा हुक्म नहीं होता तो वे लोग मुंह पर भी सुनाने से वाज नहीं आतीं। शर्मिला का सारा गर्व, सारा अहंकार धूल में मिल गया। उसने कितने गर्व से दीदियों के मुंह पर जड़ा था—उसने जिसे चुना है, वह जीजा लोगों की तरह ही शरीफ आदमी है। शिक्षा-दीक्षा में कहीं उनसे वढ़-चढ़कर! अव वे हंसेंगी नहीं? उसकी तरह दुनिया में और कोई वेवकूफ है?

उसके दिमाग में गुस्से और नफरत की लपटें उठती रहीं। छाती में भी शोले भड़कते रहे। मेडिकल कॉलेज में भी यह खवर फैल चुकी है। उसके मित्र-डाक्टर, यहां तक कि डाक्टर भट्टाचार्य भी विवाह के आमंत्रण की राह देख रहे हैं। मोहन हजारिका यहां के इतने चक्कर लगाता रहा है कि अव उनकी वात किसी से भी छिपी नहीं। उसके आते ही, अस्पताल में खुशी की धूम मच जाती।

अव उन लोगों के सामने भी उसके चेहरे पर कालिख पुत गई।

···करीव पंद्रह दिनों वाद, डैडी ने उसे अपने कमरे में वुलाकर कहा, 'हम लोग एक ठगराज के चंगुल में फंसने जा रहे थे, वह तो भगवान ने वचा लिया! तू इतनी दुःखी क्यों होती है?'

उसके लिए 'ठगराज' विशेषण सुनकर शर्मिला के दिल में जाने कैसी हूक-सी उठी! लेकिन डैडी की वात सच थी। दुनिया में उससे वड़ा फरेवी शायद कोई और नहीं! सचमुच भगवान ने उसकी रक्षा की!

अव प्रमथेश साहव अगली वात पर आए, 'तेरी दीदियों की इच्छा है, उनके किसी देवर से ही तेरा व्याह हो! लेकिन मुझे वे दोनों ही पसंद नहीं, तेरी क्या मंशा है?'

शर्मिला ने सिर हिलाकर पिता की राय में सहमति जताई।

'भूपेन देवशर्मा अपने वेटे के लिए अभी भी तुझे मांग रहे हैं, उनसे वात करूं?'

शर्मिला ने सिर हिलाकर, अपनी रजामंदी जाहिर कर दी, यानी उसे वहां व्याह करने में कोई एतराज नहीं।

लेकिन डैडी के कमरे से निकलकर, बार-बार उसे यही महसूस होता रहा मानो वह फांसी के हुक्मनामे पर खुद ही दस्तखत कर आई हो। उसे जरा और अच्छी तरह सोच लेना चाहिए था। लेकिन उसने खुद ही अपने को झिड़क दिया और सारी चिंता-फिक्र जबरन मिटा डालने की कोशिश की।

पहले भूपेन देवशर्मा तशरीफ लाए। उसके बाद उनके बेटे का आना-जाना शुरू हुआ। पैसेवाले पिता का कामकाजी, चुस्त-दुरुस्त बैरिस्टर बेटा। खूबसूरत शक्ल-सूरत, स्मार्ट। उसे नापसंद करने की कोई वजह भी नहीं थी। उसे पसंद करने के बारे में शर्मिला ने अपनी तरफ से कोई कमी उठा नहीं रखी। हालांकि मन ही मन वह अपने से बेतरह जूझ रही थी। उसकी आंखों के आगे रह-रहकर एक आर्त चेहरा तैर जाता, उसकी बेआवाज रुलाई उसके कानों में गूंजा करती। शर्मिला गुस्से से बिफरती हुई, खुद ही, उस चेहरे को जलाकर खाक कर देना चाहती। मन ही मन उसे नीच, धोखेबाज, बेईमान कहकर वह अपनी ही आवाज दबा लेती।

ब्याह पक्का हो गया। दिन भी तय हो गया। तीन सप्ताह के अंदर जो होना है, हो जाएगा। डाक्टर बहन, अब किसी अमीर बैरिस्टर की बीवी बनने जा रही है—दीदियों के सीने पर सांप लोटता रहा, लेकिन डैडी की ताकीद और हुक्म पर उन्हें ब्याह के आयोजन में शामिल तो होना ही पड़ेगा।

एक-एक दिन करके ब्याह का दिन करीब आता जा रहा था। अब बस, बारह दिन और बाकी हैं। शर्मिला निर्लिप्त भाव से अपने को किसी दृढ़ संकल्प में बांधे हुए, दिन ठेल रही थी।

'''उस दिन अस्पताल पहुंचते ही, डाक्टर विश्वनाथ भट्टाचार्य उसे एकांत में बुला ले गए। यूं वह काफी चुप्पे किस्म के इन्सान थे। हर वक्त अपने कामों में ही डूबे रहते। यूं किसी को एकांत में ले जाकर उन्होंने शायद ही कभी बात-चीत की हो।

उन्होंने बगैर किसी भूमिका के सीधा-सादा सवाल किया, 'सुन रहा हूं कि भूपेन देवशर्मा के बेटे कुशल देवशर्मा से तुम्हारा ब्याह होने जा रहा है!'

शर्मिला ने सिर हिलाकर सहमति जताई।

'लेकिन हम तो समझ रहे थे तुम्हारा ब्याह मोहन हजारिका से होनेवाला है! क्यों'''उससे ब्याह करने में क्या एतराज था?'

शर्मिला ने सर्द लहजे में जवाब दिया, 'मुझे ही एतराज था, इसीलिए रद्द हो गया!'

कुछेक पलों के लिए डाक्टर विश्वनाथ ईषत् विस्मय से उसे घूरते रहे, मानो उसे तौल रहे हों। अचानक उन्होंने पूछा, 'लेकिन यह ब्याह किसने ठीक किया है? तुमने या तुम्हारे डैडी ने?'

'डैडी ने। वैसे मेरी तरफ से भी कोई एतराज नहीं था !'

'लेकिन कुशल देवशर्मा के बारे में तुम्हारे डैडी ने अच्छी तरह छानबीन कर ली है ?'

अब शर्मिला के चौंकने की बारी थी, 'क्यों ! आप यह क्यों पूछ रहे हैं, बताएंगे ?

डाक्टर भट्टाचार्य मानो किसी दुविधा में फंसे हों। अचानक उन्होंने कहा, 'जब मैं इंगलैण्ड में था, तब से मैं भी उसे थोड़ा-बहुत जानता हूं। जहां तक मैं जानता हूं, उसको लेकर कोई अफवाह भी उड़ी थी। उसके बाद उसने वहीं की किसी लड़की से ब्याह भी कर लिया था। अब उसे छोड़कर हिंदुस्तान लौट आया है। जहां तक मेरा ख्याल है, पिछला ब्याह अभी रद्द नहीं हुआ। यहां अगर वह तुमसे भी ब्याह करता है, तो किसी-न-किसी दिन वह जालसाजी के केस में जरूर फंसेगा !' उसका विवाह कब और किससे हुआ था, उन्होंने उसका भी सारा हवाला दे दिया।

डाक्टर भट्टाचार्य चले गए। कुछेक क्षणों के लिए शर्मिला बिल्कुल काठ हो आई। डाक्टर भट्टाचार्य की बातों पर वह यकीन करे या न करे ? डाक्टर भट्टाचार्य जैसा इन्सान, अपनी खुदगर्जी के लिए, यूं झूठी बातें गढ़ने की साजिश करे, यह नामुमकिन है। अच्छा, उन्हें कहीं बड़ी गलतफहमी तो नहीं हुई ?

नहीं, डाक्टर भट्टाचार्य ने उससे जो कुछ कहा, उसे कहीं से बनावटी या किसी तरह की गलतफहमी मान लेने के बजाय, उनके शब्द-शब्द पर यकीन करना चाहती है। हैरत है, इससे भी ज्यादा हैरत इस बात की है कि ऐसी भयंकर खबर सुनकर भी उसे रत्ती-भर तकलीफ या दुख नहीं हो रहा। उल्टे उसकी छाती पर से मानो एक बहुत बड़ी चट्टान उतर गई हो। वह बेहद हल्की हो आई।

घर लौटकर वह सीधे डैडी के कमरे में गई। जो सुनकर आई थी, सारा किस्सा सुना डाला।

प्रमथेश बरकाकुती के सिर पर मानो बिना बिजली के वज्रपात हुआ।

काफी देर बाद, उन्होंने सवाल किया, 'यह सच है, इसका क्या सबूत है ?'

'अगर सच न निकला, तब तो कोई बात ही नहीं !' शर्मिला ने घोर-गम्भीर वाणी में कहा, 'लेकिन जब तक सच-झूठ का पता न चल जाए, तुम क्या इस ब्याह को आगे बढ़ाओगे ?'

प्रमथेश साहब ने सिर हिला दिया यानी पूरी बात का पता लगाए बिना बात आगे बढ़ाना नामुमकिन है।

आदमी के पास अगर रुपयों की ताकत हो तो इंगलैंड भला कौन-सा दूर है ? उनका एक घनिष्ठ रिश्तेदार, काफी सालों से वहीं जा बसा है। एक्सपोर्ट-इम्पोर्ट का लंबा-चौड़ा कारोबार है। उन्होंने उसी वक्त उसे कुशल देवशर्मा और उस लड़की के ब्याह के बारे में छान-बीन करने का टेलेक्स भेजा। इतने पर भी वह चैन से नहीं बैठ पाए। आधी रात को सागर-पार, उस रिश्तेदार को टेलीफोन पर जा पकड़ा, उन्हें पक्की खबर चाहिए। अगर कोई प्रमाण वगैरह हाथ लग जाए तो, किसी पायलट के हाथ फौरन भेजने का भी इंतजाम किया जाए। खर्चा वगैरह जो भी लगे।

तीन दिनों बाद प्रमथेश बरकाकुती के पास प्रमाण सहित पक्की खबर आ पहुंची। उस विदेशी लड़की के साथ कुशल देवशर्मा के विवाह का दिन, तारीख, ब्याह के पहले की घटना, ब्याह के बाद नव-दम्पती की एक युगल तस्वीर'''सारा कुछ उनके हाथ में था। विलायत से उनके रिश्तेदार ने यह खबर भी भेजी कि वह ब्याह कानूनी तौर पर अभी तक बहाल है, झूठे बहाने गढ़कर, कुशल देवशर्मा अपने देश भाग आया है।

प्रमथेश बरकाकुती गुमसुम से बैठे रहे। छोटी बेटी को भी सारी बातें बता दीं। उसे सारे प्रमाण भी दिखा दिए।

अगले दिन, शाम के वक्त उन्होंने कुशल देवशर्मा को बुला भेजा। भावी श्वसुर के बुलावे पर, वह खुश-खुश हाजिर हो गया।

प्रमथेश ने उसके परिणय की वह तस्वीर उसके सामने रखते हुए कहा, 'मुझे तुम्हारे बारे में इतने सारे प्रमाण मिले हैं, साथ ही तुम्हारा सारा कच्चा चिट्ठा भी। तुमने मेरा जो नुकसान किया है, उस बारे में खैर, अब मैं कोई बात नहीं करना चाहता। तुम अपने पिता से क्या कहोगे, कितना-सा बताओगे, यह तुम्हारा सिर-दर्द है। अब तुम जा सकते हो !'

बेंत खाए कुत्ते की तरह बैरिस्टर कुशल देवशर्मा बाहर अंधेरे में गायब हो गया।

बिना किसी शोरो-गुल या हंगामे के इतना बड़ा हादसा हो गया, लेकिन दीदियों को भनक तक नहीं मिली। एकमात्र शर्मिला को ही सारी बातों की खबर थी। वह अपने कमरे में बत्ती बुझाकर चुपचाप बैठी थी। आंखों के आगे, फिर किसी इन्सान का निरीह-आर्त चेहरा तैर गया। उसके कानों में फिर किसी की मिन्नतें बज उठीं, 'तुम मुझे चाहे जो सजा दे लो, लेकिन मुझे छोड़कर मत जाओ। मैं तुम्हें सचमुच'''दिल से प्यार करता हूं। मेरे बाहरी परिचय को ही तुम इतना बड़ा करके मत देखो, तुम मेरे अंदर भी झांककर देखो न ! वहां मैं किसी से भी छोटा नहीं, किसी से भी कम नहीं !'

शर्मिला ने तमाचा जड़कर उसके गाल पर अपनी पांचों अंगुलियों के निशान बना दिए थे।

वही—रात नींद में भी जाने कितनी बार, फिर-फिर, वही-वही आवाज ! वही मिन्नतें—'मेरे बाहरी परिचय को तुम इतना बड़ा करके मत देखो ! तुम मेरे अंदर भी झांककर देखो न !'

जितनी बार उसकी नींद टूटी, उतनी बार उसे महसूस हुआ, जिस कुशल देवशर्मा के बाहरी परिचय को उसने इतना बड़ा मान लिया था, उसका भीतरी परिचय कितना भयंकर, वीभत्स और कुत्सित साबित हुआ ! भगवान ने उसे यूं बचा लिया ! आखिर क्यों ?

अगले दिन···

ठीक वक्त पर वह गाड़ी लेकर अस्पताल के लिए चल पड़ी। शिलांग रोड पर पहुंची। लेकिन जू रोड के मोड़ तक आते-आते गाड़ी ने मानो सीधे जाने से इन्कार कर दिया। वह गाड़ी मोड़कर जू रोड की तरफ निकल आई।

···सामने वही गैरेज। लेकिन वह नहीं था, वहां कोई भी नहीं था, गैरेज बंद था !

वह गाड़ी से उतरकर पांव-पैदल मोहन हजारिका के घर तक आई। वहां भी घर के दरवाजे पर ताला लटका हुआ था।

शर्मिला की छाती पर मानो हथौड़े पड़े हों। वह दुबारा गैरेज की तरफ लौटी। कुछ दूर पर एक आदमी अपनी खटिया पर बैठा हुआ था। शायद यहां का कोई दरवान वगैरह होगा। शर्मिला ने उसी के पास जाकर, गैरेज और घर के मालिक के बारे में दरियाफ्त किया।

उसी आदमी ने बताया—महीना-भर हुआ, घर और गैरेज में ताला लगाकर, मालिक अपने गांव चला गया। अभी कुछ दिन पहले मालिक ने उसे खत दिया है। वह घर और गैरेज बेचना चाहता है। अगर कोई खरीददार मिले तो उसे फौरन सूचित करे।

शर्मिला की आवाज में आग्रह उतर आया, 'खत में उनका पता भी तो होगा, उनका गांव कहां है ?'

आदमी को ठिकाना भी मालूम था। गांव का नाम—फकीरा ! गौहाटी से पश्चिम की तरफ ६० मील का रास्ता है।

शर्मिला को उसी आदमी से उसके गांव के घर का अता-पता भी मिल गया। वह आदमी अपने मालिक के गांव भी हो आया है।

वापसी में शर्मिला की गाड़ी फिर अस्पताल की ओर दौड़ पड़ी ! इस बीच उसने अपना बैग भी टटोल लिया। बैग में ज्यादा रुपए नहीं थे। खैर, रुपए तो अस्पताल से ही मिल जाएंगे ! अभी तो उसने पिछले महीने का वेतन भी नहीं लिया। पिछले पांच-छह दिनों से मन की जो हालत थी, रुपए-पैसे की सुध ही नहीं आई।

अस्पताल में सबसे पहले डाक्टर भट्टाचार्य से मिलकर उसने उन्हें धन्यवाद दिया। उन्हीं के हाथ में पंद्रह दिन की छुट्टी का एक आवेदन भी थमा दिया। डाक्टर भट्टाचार्य ने उसका चेहरा पढ़ लिया था। उन्होंने कोई सवाल नहीं किया। शर्मिला अपनी सीट पर आ बैठी और पैड निकालकर डैडी के नाम एक छोटा-सा खत लिखा :

'डैडी, ऊपरवाले ने सिर्फ इसी बार मुझ पर मेहरबानी की है, पिछली बार नहीं ! आभिजात्य के मुखौटे के प्रति अब मेरे मन में कोई मोह नहीं रहा। हमने भयंकर गलती की है। महज गलतफहमीवश हम सबने मिलकर, जिसे बेतरह आहत किया है (सबसे ज्यादा मैंने), मैं उसीके पास जा रही हूं, हो सके, तो मुझे माफ कर देना !'

उसने एक बैरे को बुलाकर कहा, 'घर जाकर, यह खत मेरे डैडी को दे देना !'

उसने अस्पताल के कार्यालय से अपना वेतन लिया और निकल पड़ी।

हां, अब वह कृत-संकल्प है। उसके मन में अब किसी तरह की दुविधा या द्वंद्व नहीं !

दोपहर करीब बारह बजे वह फकीरा गांव आ पहुंची। इधर-उधर पूछती-पाछती यथास्थान भी पहुंच गई।

मिट्टी का घर। कई-नई कोठरियां। बीच में आंगन। उनमें से ही एक कोठरी के सामने मूढ़ा डाले बैठा था—मोहन हजारिका। कमर में लुंगी। नंगे बदन। ऊबड़-खाबड़ दाढ़ी। जाने कितने दिनों से सिर में तेल-पानी भी नहीं पड़ा ! शर्मिला की चिरपरिचित कार जब उसके घर के सामने आकर रुकी, तब वह एकबारगी चौंककर जागा।

वह अपनी आंखों पर विश्वास करे या न करे !

शर्मिला गाड़ी से उतरकर, उसके करीब आ खड़ी हुई। उसकी निगाहें एकटक मोहन को देख रही थीं, स्थिर ! अपलक !

वह भी विमूढ़ ! विह्वल !

शर्मिला ने बेहद सहज भाव से उलाहना दिया, 'वाह, क्या सूरत बनाई

है !'

जवाब में आहत अभिमान से तिलमिलाया हुआ स्वर गूंजा, 'मेरी सूरत चाहे जैसी हो, तुम यहां क्यों ?'

शर्मिला जाने क्या कहने जा रही थी कि अचानक उसने पीछे मुड़कर देखा। गांव में कोई लड़की ऐसी चमचमाती हुई गाड़ी चलाकर इस घर के सामने हाजिर हुई है—यह तमाशा देखने को छोटी-बड़ी उम्र के ढेर सारे बच्चे गाड़ी के पीछे-पीछे दौड़ते चले आए थे। बच्चों की भीड़ हैरतअंगेज आंखों से उसे निहारे जा रही थी। आस-पास कुछ वयस्क चेहरे भी ताक-झांक में लगे हुए थे।

शर्मिला ने पलटकर मोहन की तरफ देखा, 'चलकर यहीं आई हूं, यह तो तुम देख ही रहे हो। अब क्या सरेआम ही मेरी इज्जत उतारने का इरादा है ?'

मोहन की बुद्धि अभी तक ठीक तरह काम नहीं कर रही थी। उसके सीने में तो लहर-दर-लहर मान-अभिमान उमड़ आया था। वह उठकर आगे-आगे चला। उसके पीछे-पीछे शर्मिला भी कमरे में दाखिल हुई।

मोहन हजारिका पिछले अपमान की बात भूला नहीं था। उसने उसी बात को तूल देते हुए कहा, 'हम लोग ठहरे गरीब-गुरबा ! भला हम-जैसों को बेइज्जती करने का क्या हक है ? तुम लोगों के पास बेशुमार दौलत है, बेइज्जती करने का हक भी तो तुम्हीं लोगों ने खरीद लिया है !'

सारा कुछ भूलकर शर्मिला एकबारगी हंस पड़ी। जिस इन्सान का मन बच्चों जैसा भोला-भाला और सरल है, वह बाकायदा ढेर सारे मान-मनुहार और माफी मांगने के बाद ही तो मानेगा।

उसने आंखों में अचरज भर कर सवाल किया, 'भला मैंने तुम्हारी बेइज्जती कब की ?'

'हुंह ! टुच्चा ! मक्कार ! बेईमान कहते हुए, तमाचा मारकर चलती बनीं ! अब क्यों लौट आईं ? अभी और कुछ बाकी रह गया है ?'

शर्मिला ने एक नजर पीछे मुड़कर देख लिया। बच्चे अभी भी ताक-झांक में लगे थे ! उसने हाथ बढ़ाकर दरवाजा बंद कर दिया। उसके बाद, उसके करीब आकर अपना गाल उसके सामने कर दिया, 'चलो, तुम भी मुझे तमाचा मार लो !'

गांव के उसी घर में उनका विवाह संपन्न हो गया।

ब्याह-जैसा आयोजन ऐसा सीधा-सादा और बगैर किसी ताम-झाम के

संपन्न हो सकता है—ऐसा ब्याह, देखने की बात तो दूर, शर्मिला की कल्पना से भी परे था। लेकिन इसके लिए शर्मिला को कोई खेद या अफसोस भी नहीं। ऐसे ग्रामीण परिवेश में शायद ऐसा ब्याह ही शोभा देता। इससे ज्यादा ताम-झाम या हंगामा बनावटी लगता।

मोहन हजारिका के अलावा इस घर में एक बूढ़े दम्पती भी रहते हैं। वे लोग उसके रिश्तेदार तो नहीं, लेकिन उसके घर-द्वार, जर-जमीन की देखभाल वो ही करते हैं। वृद्ध दम्पती उत्साह से आगे बढ़ आए। उन्होंने ही गांव के मुखिया और कुछ अड़ोस-पड़ोस के लोगों को न्योता दे डाला और उनके सामने दोनों का ब्याह हो गया।

असली दिक्कत तो उसके बाद सामने आई। शर्मिला की छुट्टियां खत्म होने वाली हैं। लेकिन मोहन उसकी कोई बात सुनने को तैयार ही नहीं। गौहाटी वापस जाने को भी तैयार नहीं। उसके आतंक का कारण भी वह समझ गई थी।

मोहन को डर था, ब्याह हो जाने के बाद भी कहीं उसके अमीर श्वसुर, उसकी परिणीता को छीन न लें! गौहाटी जाकर उस रोबीले श्वसुर के सामने जाकर खड़े होने के ख्याल भर से उसकी समूची देह में कंपकपी फैल जाती। खैर, अगर वह उसकी बीवी को छीन नहीं पाए, तो कम-से-कम शर्मिला के कान भर-भरकर, उसके खिलाफ जहर तो भर सकते हैं—उसके मन में यह डर भी समा गया था। अमीरी माहौल के आस-पास, अपनी बीवी के साथ रहने में उसे डर के अलावा शायद कहीं दुविधा और संकोच भी था। बेहतर यही था कि वह अपने गांव में ही अपने मिजाज से रहे। वह यहीं अपनी दुल्हन को रानी बनाकर रखना चाहता था।

शर्मिला को ब्याह से पहले ही जिन-जिन बातों का अंदाजा लग चुका था, ब्याह के बाद, इन कुछेक दिनों में ही उस इंसान की वही-वही तस्वीर और उजागर हो गई। इसे लेकर उसके मन में कहीं हल्की-सी परेशानी भी जाग उठी थी, लेकिन वह उसे झटक फेंकने की भरसक कोशिश कर रही थी। उसकी कल्पना के पुरुष से इस व्यक्ति का कहीं कोई ताल-मेल नहीं था। खैर, इसकी उसे उम्मीद भी नहीं थी। वैसे हर पढ़ी-लिखी औरत सपना देखती है कि उसका शौहर विद्या-बुद्धि, आचार-व्यवहार, चाल-चलन में उससे बड़ा होगा। लेकिन जिस शख्स को उसने खुद आगे बढ़कर स्वीकार किया, उसके मन का सारा कुछ मानो किसी बचपने में कैद होकर रह गया था। जिंदगी में कहीं थोड़ा-सा हिसाब-किताब भी जरूरी है, इसकी अहमियत से उस आदमी का दूर-दूर तक कोई वास्ता नहीं था। हां, उसे एक ऐसा इंसान जरूर मिला था, जिस पर वह अपने मन का सारा प्यार-दुलार बरसाकर आकंठ डूब जाती

थी। वह उसका मनचाहा संगी भी था, जिसे रिझा-खिजाकर या हंसाकर, उसके बेपनाह प्यार में गले-गले तक भर उठी थी, लेकिन उसे एक अदद पति की भी तो जरूरत थी। इस बारे में गंभीरता से सोचते हुए, कहीं किसी कमी का भी अहसास होता, जो उसके मन में कांटे-सा चुभता रहता। नहीं, शर्मिला ऐसे ख्यालों को तरह नहीं देना चाहती। ब्याह के साथ-साथ पति की जगह एक वयस्क बच्चे को भी स्वीकार करने की जिम्मेदारी वह स्वेच्छया निभाने को तैयार हो चुकी है।

हालांकि उस इंसान पर काबू पाना काफी मुश्किल काम था, लेकिन डाक्टरी छोड़कर उसका यहां घर-गृहस्थी बसाना नामुमकिन है। उसे यह बात भी समझाने में वह कामयाब हो गई। उसने उसे आश्वस्त कर दिया, उसकी आजादी में कभी कोई दखल नहीं देगा। गोहाटी में जैसे वह पहले रहता था, वैसे ही रहेगा। गैरेज बंद रखने की कोई जरूरत नहीं। बल्कि उसे और बड़ा कैसे किया जाए, इसे वे दोनों मिलकर सोच लेंगे। और लोग चाहे जो सोचें-समझें, वह उसके काम को कभी छोटा करके नहीं देखेगी। उसके काम को अगर वह छोटा समझती, तो भला उसके पास आती?

अंततोगत्वा मोहन हजारिका को राजी होना पड़ा। गोहाटी जाने के लिए अपना मन बनाना पड़ा।

शर्मिला की गाड़ी में ही दोनों गोहाटी के लिए रवाना हो गए। लेकिन गोहाटी जैसे-जैसे करीब आता जा रहा था, मोहन का चेहरा बुझने लगा। उसकी हालत देख-देखकर शर्मिला को हंसी आने लगी।

गोहाटी पहुंचकर, उनकी गाड़ी जैसे ही चांदमारी के रास्ते पर मुड़ी, मोहन आतंकित हो उठा। नहीं, वह श्वसुर साहब के घर हरगिज नहीं जाएगा। पहले वह अपने घर जाएगा, फिर देखा जाएगा। श्वसुर साहब को खबर भेजी जाएगी। वह अगर बुलाएंगे, तभी वे जाएंगे।

शर्मिला ने उसकी बात को अनसुनी करते हुए, घर की तरफ गाड़ी मोड़ दी।

उसने उसे समझाने की कोशिश करते हुए कहा, 'क्यों, पहले वहीं चलें, तो क्या हर्ज है? डैडी या दीदियां क्या मुझे तुमसे छीनकर, ताले-चाबी में बंद कर देंगी?'

'ताले-चाबी में बंद न भी करें; लेकिन बेइज्जती तो कर सकती हैं!'

'करना तो नहीं चाहिए, लेकिन करेंगी जरूर! लेकिन इसके लिए मैं या तुम बुरा क्यों मानने लगे? तुमने क्या सच ही कोई अन्याय किया है?'

मोहन ने गर्दन झटकते हुए जवाब दिया, 'हरगिज नहीं !'

'फिर…?'

'लेकिन…जान-बूझकर हम बेइज्जत क्यों होने जाएं ?'

'डैडी का आशीर्वाद लेना हमारा फर्ज है, इसीलिए चल रहे हैं। अगर वह अपमान भी करें तो उसे माथे से लगाकर लौट आएंगे। और तब तुम्हें भी शायद समझ में आ जाए कि तुम्हारे लिए मैं कितना कुछ छोड़ आई।'

डैडी…बाहर बरामदे में ही बैठे थे। उसकी गाड़ी देखकर दीदी और जीजा लोग भी अपने-अपने कमरे से बाहर निकल आए। बच्चे भी इकट्ठे हो गए।

गाड़ी से उतरकर, शर्मिला मोहन को ड्राइंगरूम में बैठे रहने की हिदायत देकर, बिना किसी तरफ निगाह डाले, सीधे डैडी की तरफ बढ़ी। शर्मिला के सीने में अजब-सी हूक उठी। इन कुछेक दिनों में ही डैडी सूखकर आधे हो गए हैं। गाल पिचके हुए, आंखें धंसी हुई।

उसे करीब आते देखकर, प्रमथेश साहब ने उसे हाथ के इशारे से रोक दिया। चेहरा तमतमाया हुआ था।

शर्मिला करीब दस हाथ के फासले पर ठिठक गई।

प्रमथेश वधू-वेश में सजी बेटी को एकटक निहारते रहे। माथे पर बिंदी। मांग में सिंदूर ! गांव की दुल्हन की तरह हाथ में लाख की लाल-लाल चूड़ियां।

शर्मिला को ही पूछना पड़ा, 'क्यों ? प्रणाम नहीं करने दोगे ? आशीर्वाद भी नहीं दोगे ?'

दोनों दीदी और उनके बच्चे उनके पीछे आ खड़े हुए। दीदियों के चेहरे फूले हुए। निगाहें धार-धार। बच्चे सहमे हुए।

प्रमथेश साहब की आंखों में मानो आग बरस रही थी। उनकी आवाज में तीखा व्यंग्य उभरा, 'सिर्फ यही चाहिए ? और कुछ नहीं ?'

शर्मिला ने शांत भाव से जवाब दिया—'नहीं, और कुछ नहीं !'

प्रमथेश उसे एकटक घूरते रहे। अचानक उन्होंने कड़ककर कहा, 'इससे पहले एक खबर सुन लो तो बेहतर है ! मैंने एक वसीयत की है, दस्तखत वगैरह भी हो चुका। अचानक वसीयत करने की जरूरत क्यों आ पड़ी, मेरा ख्याल है, यह समझने में तुम्हें कोई दिक्कत नहीं होगी !'

'नहीं डैडी, हम लोगों को सिर्फ प्रणाम कर लेने दो ! हम दोनों को आशीर्वाद दो। इससे ज्यादा हम कुछ नहीं मांगेंगे !'

इतनी बेशुमार दौलत इकट्ठा करने में प्रमथेश साहब ने अपनी जिंदगी होम कर दी, उससे वंचित होने की खबर को…उनकी छोटी बेटी इतने शांत

भाव से लेगी, इसकी उन्होंने शायद कल्पना भी नहीं की थी। उनकी तिल-मिलाहट और तीखी हो आई, 'यह 'हम लोग' या 'हम दोनों' कौन ? तेरा वह मोटर-मिस्त्री !'

'हां ! तुम्हारा वह कोई नहीं, लेकिन मेरा पति है ! और वह रिरियाता हुआ मेरे पास नहीं आया था, मैं···तुम्हारी बेटी उसके पास गई थी। तुम्हें प्रणाम करके, तुम्हारा आशीर्वाद लेकर हम चले जाएंगे। उसका अपमान करके, तुम अपनी बेटी की नजर में छोटे मत बनो, डैडी !'

प्रमथेश साहब काफी देर तक गुमसुम से उसे घूरते रहे, उसके बाद कहा, 'अच्छा, जा, बुला ला !'

दीदी का बड़ा बेटा भागता हुआ गया और मोहन को ले आया। मोहन का हंसमुख चेहरा सकपकाया हुआ था। उसने आगे बढ़कर श्वसुर के पैर छूकर प्रणाम किया, दीदियों के भी पैर छूने को आगे बढ़ा। वे पीछे हट गईं ! शर्मिला ने भी डैडी के चरणों पर झुक कर प्रणाम किया।

प्रमथेश की जलती हुई निगाहें अपने दामाद पर गड़ गईं। उन्होंने क्षुब्ध स्वर में कहा, 'भगवान से मैं प्रार्थना करूंगा—मेरी बेटी छीन लेने का अभिशाप तुम्हें न लगे ! मुझे और कुछ नहीं कहना, अब तुम लोग जा सकते हो !'

किसी तरह जान छुड़ाने की गरज से मोहन हड़बड़ाकर पीछे मुड़ा।

शर्मिला ने उसे रोक लिया, 'रुको !' फिर वह दीदियों की तरफ मुखातिब हुई, 'इस बीच डैडी को किसी डॉक्टर को दिखाया है ?'

उर्मिला ने असहमति में सिर हिलाते हुए कहा, 'हम जब-जब पूछने जाते हैं, डैडी कह देते हैं, वह ठीक हैं, डॉक्टर बुलाने की जरूरत नहीं।'

प्रमथेश साहब ने बेसब्री से झुंझलाकर कहा, 'अब तुम्हें इन सब खोज-खबर की भी कोई जरूरत नहीं ! तुम अब जा सकती हो !' तुम्हारा जो सामान और किताबें वगैरह हैं, कल मैं भिजवा दूंगा···'

शर्मिला ने किंचित हंसते हुए कहा, 'सामान वगैरह तो सब तुम्हारा ही दिया हुआ है, डैडी। इनके बाद, वह सब भेजने की जरूरत नहीं। हां, किताबों की मुझे जरूरत पड़ेगी।'

वह अपने कमरे में गई। डैडी और मां की तस्वीर और ब्लडप्रेशर नापने की मशीन लेकर, उसी दम वापस लौट आई।

तस्वीर दीदियों को दिखाकर उसने कहा, 'चूंकि यह तस्वीर मैंने उतारी थी, इसलिए ले जा रही हूं।' इतना कहकर वह डैडी की तरफ मुड़ी, 'इतने दिनों से प्रेशर नहीं देखा, जरा देख लूं ?'

प्रमथेश साहब की छाती फटने लगी। उन्होंने तो सोचा था, वह उसके सामने खूब सख्त और कठिन बने रहेंगे, गुस्से और क्षोभ के मारे वह दिशाहारा

हो उठे थे। इस लड़की को माफ कर देने की कमजोरी को उन्होंने बिलकुल राह नहीं दी। वह तो उसे चरम आघात देकर, वही सजा देने के इंतजार में थे। लेकिन उनके अंदर रुलाई का सागर उमड़ आएगा, इसकी खबर उन्हें भी नहीं थी। बेटी की शांत-सौम्य सूरत निहारते हुए उनके सब्र का बांध मानो टूट गया। अपनी ही निर्ममता के प्रति गहरा अपराध-बोध जाग उठा।

उनके लिए शर्मिला की तरफ आंख उठाकर देखना भी मुश्किल हो आया। उन्होंने दूसरी तरफ मुंह फेर लिया।

शर्मिला अपने डैडी का दिल बखूबी पहचानती है। आगे बढ़कर उसने एक कुर्सी खींच ली और डैडी के बिल्कुल आमने-सामने आ बैठी। उन्हें देखते हुए मंद-मंद मुस्कराती रही। उसने प्रेशर-यंत्र कुर्सी के हत्थे पर रखा और तीन मिनट के अंदर डैडी का प्रेशर जांच लिया।

उसने सहज लहजे में कहा, 'हूं, प्रेशर बहुत ज्यादा तो नहीं। लेकिन फिर भी ऊंचा है।' वह दीदियों की तरफ मुड़ी, 'डैडी को देखने के लिए मेरा बार-बार आना, शायद तुम लोगों को न सुहाए; मैं डाक्टर भट्टाचार्य को कह दूंगी। बीच-बीच में वही आकर देख जाया करेंगे। उन्हें फीस दे देना।'

प्रमयेश निरे बच्चों की तरह बिफर पड़े, 'मैं बिलकुल अच्छा हूं। मेरी देखरेख के लिए किसी को आने की जरूरत नहीं।'

शर्मिला डैडी का चेहरा देखकर उनके मन की बात पढ़ सकती है।

उसने हंसकर जवाब दिया, 'लेकिन मैं आती रही तो दीदी लोगों को शक होगा कि मैं बहका-फुसलाकर, कुछ वसूल करने के मतलब से आती हूं।'

दोनों बेटियों की तरफ जलती हुई निगाह डालकर प्रमयेश साहब ने दूसरी तरफ मुंह फेर लिया। उनकी निगाहों में सिर्फ गुस्सा ही नहीं था, नफरत भी थी। दीदियों से यह बर्दाश्त नहीं हो पाया।

उर्मिला ने दबी जबान में झुंझलाकर कहा, 'इतना बड़ा कांड करके पहले तो डैडी के मुंह पर कालिख पोत दी, अब हम पर व्यंग्य कसने आई है? तुझे लाज भी नहीं आती? तेरी वजह से बाहर कहीं मुंह दिखाना मुश्किल हो गया है।'

शर्मिला ने सर्द लहजे में जवाब दिया, 'जब मेरा हिस्सा भी तुम्हारी किस्मत के नाम लिख दिया गया है, तो हंसता हुआ चेहरा दिखाने में ज्यादा देर भी नहीं लगेगी।…डैडी की बेटी होकर भी तुम लोगों का मन इतना…। उनके मुंह पर किसने कालिख लगाई है, जरा आइने के सामने खड़ी होकर देखो!'

प्रमिला चीख उठी, 'डैडी…यह लड़की हमारा अपमान कर रही है और तुम चुपचाप बैठे हो?'

प्रमथेश का चेहरा दर्द से जर्द हो आया। उन्होंने शर्मिला से ही कहा, 'अब तू जा, शर्मि...'

शर्मिला ने एक बार अपने डैडी को भरपूर निगाहों से देखा, उसके बाद वह कमरे से बाहर जाने को मुड़ी। अभी वह कुछ ही दूर गई थी कि अपनी चम्पई फिएट गाड़ी पर निगाह पड़ते ही, उसे फिर कुछ याद आ गया। उसने पीछे मुड़कर डैडी से कहा, 'गाड़ी अभी मैं लिए जा रही हूं, डैडी! शाम तक भिजवा दूंगी।'

प्रमथेश मानो आर्तनाद कर उठे, 'वह गाड़ी तो तेरी है। तेरी मां ने, अपने रुपयों से, तुझे वह गाड़ी खरीदकर दी थी। वह गाड़ी भी अगर न रखना चाहो, तो ब्रह्मपुत्र नदी में बहा देना...'

हां, शर्मिला अगर चाहती तो वह भी नाराज हो सकती थी। मां के कहने पर डैडी ने यह गाड़ी उसके लिए खरीदी थी। पता नहीं, इस गाड़ी में सचमुच मां के रुपये लगे थे या डैडी ने दीदियों को सुनाने के लिए कहा था। लेकिन सब कुछ से निर्वासित होने के बाद, महज एक गाड़ी की उम्मीद आखिर कौन करता है! लेकिन डैडी का चेहरा देखकर, शर्मिला की जुबान से यह बात नहीं निकली। शिथिल कदमों से वापस लौट गई।

एक अदद कमरे में गृहस्थी सजाने-संवारने में आखिर कितना वक्त लगता है! मोहन कोई बड़ा बंगला लेने को बेसब्र हो उठा। शर्मिला ने ही मना कर दिया—कोई बंगला किराए पर लेने की जरूरत नहीं। सुविधा देखकर, इसी घर में एक और कमरा बनवा लिया जाएगा। वैसे मरीजों को देखने के लिए उसे यूं भी एक अलग कमरे की जरूरत पड़ेगी। फिलहाल वह कहीं आस-पास ही एक कमरा किराए पर ले लेगी। अब उसे अपनी आमदनी तो बढ़ानी ही होगी।

मोहन भी अपना रोजगार बढ़ाने में जी-जान से जुट गया। इन दिनों उसमें जितनी फुर्ती आ समाई, उतना ही उत्साह भी। उसने गैराज का काम फिर से शुरू कर दिया। पुराने कर्मचारियों को भी दुबारा काम पर बहाल कर लिया। कहीं से ऊपरी रुपए मिलते ही, वह गैरेज में लगा देता। गैरेज को यथा-संभव बढ़ाना है, उसे बड़ा भी करना है। रातोंरात अमीर बन जाने का मानो उस पर नशा-सा सवार हो गया। लेकिन खर्च के वक्त उसके हाथों में मानो सुराख हो जाते। बीवी के लिए रुपए पानी की तरह बहाने में ही खुश। जो काम दस रुपये में हो सकता है, उसके लिए बीस रुपये खर्च कर डालता। शर्मिला

कुछ कहती या नाराज होती, तो उसका मुंह फूल जाता। चूंकि वह गरीब है, इसलिए उसका जरा-सा ज्यादा खर्च, बीवी को फिजूलखर्च लगता है। इतने दिनों से गैरेज बंद था, अतः रुपयों की भी तंगी। चूंकि वह बेहिसाब खर्च कर डालता था, अतः कभी-कभी ऐसा भी होता था कि गाड़ी की मरम्मत के लिए छोटे-मोटे पुर्जों को खरीदने तक के पैसे हाथ में नहीं होते। उस वक्त उसे सिर खुजाते हुए शर्मिला के सामने ही आकर खड़ा होना पड़ता, '''''जरा मुश्किल में पड़ गया हूं। कुछ रुपए दे सकोगी?'

शर्मिला हंस देती। अगले ही पल रुपए भी निकालकर उसके हाथ पर रख देती। लेकिन कुछ समझाने की कोशिश करो, तो जनाब साहब का पारा गरम!

शर्मिला की सारी खबरें अस्पताल में सिर्फ एक ही व्यक्ति जानता है—डाक्टर विश्वनाथ भट्टाचार्य। हमदर्द इंसान हैं। लेकिन मन की हमदर्दी कभी बाहर व्यक्त नहीं होने देते। कभी खुद आगे बढ़कर, किसी के मन की बात जानने का भी आग्रह नहीं दिखाते। बीच-बीच में ड्यूटी को देर आने का अनुरोध करते समय शर्मिला ने सिर्फ इसी व्यक्ति के आगे अपनी रामकहानी यह सुनायी थी। उसकी कहानी सुनकर डॉक्टर भट्टाचार्य ने जुबान से कुछ नहीं कहा, सिर्फ एकटक शर्मिला की ओर देखते रहे, मानो उसका मनोबल परख रहे हों।

उन्होंने उसे तसल्ली देते हुए कहा, 'फिक्र मत करो। कमाने को तो तुम खुद भी कमा सकती हो। लेकिन डेढ़-दो साल जरा जमकर मेहनत करके, एम० डी० भी कर डालो तो सहूलियत रहेगी।'

शर्मिला की भी यही मंशा थी। डाक्टर भट्टाचार्य ने खुद ही दौड़-धूपकर उसके लिए एक चेम्बर ठीक कर दिया और औरतों का केस आते ही उसके पास भेजना शुरू कर दिया। लेकिन नई जिंदगी की इस खुशकिस्मती के खिलाफ बगावत करता है अपना ही घरवाला। नाराजगी की तरह उसने साफ-साफ सुना दिया, 'सुबह से शाम तक तुम अपने काम में रहो, मैं अपने काम में। लेकिन शाम के बाद से हम दोनों में से कोई भी—ना काम-काज! एकदम''' कुछ नहीं! सिर्फ तुम और मैं! मैं और तुम!'

लाख समझाने पर भी जब वह समझना नहीं चाहता, तो उसे गुस्सा आने लगता है। शाम छह बजे से आठ बजे तक चेम्बर। इसके अलावा वह एम० डी० करने के चक्कर में भी है। रात को भी कुछ लिखाई-पढ़ाई न की जाए तो कैसे चलेगा? सुबह का वक्त तो अस्पताल की नौकरी में ही निकल जाता है।

लेकिन कौन किसकी सुनता है? वह गुस्से में चीख उठता, अभिमान

ठान लेता, हाथ का काम खत्म होते ही चेम्बर में आ धमकता। अस्तु, लाचार होकर, शर्मिला ने चेम्बर का वक्त पांच से सात कर दिया। रात में भी उस नासमझ इंसान को प्यार से सुलाने के बाद ही टेबल-लैम्प जलाकर किताब खोलने की फुर्सत मिल पाती। इसके अलावा उसे एक और जिम्मेदारी लेनी पड़ी है। परीक्षा होने तक या ठीक तरह पैर जमाने तक यानी तीन सालों तक इस नन्हीं-सी गृहस्थी में फिलहाल कोई मेहमान का लाना सरासर गलत होगा। उसने मोहन से भी इस बारे में बात की। उसने भी बेझिझक सहमति जाहिर की।

उसने कहा, 'सिर्फ तुम और मैं! फिलहाल क्यों, हमारे-तुम्हारे बीच कभी किसी दिन भी अगर कोई तीसरा न आए तो मुझे कोई एतराज नहीं!'

लेकिन एकांत में चरम सामीप्य के पलों में सतर्क होने की सारी जिम्मेदारी मानो सिर्फ शर्मिला की हो। उस वक्त वह आदमी जितनी मनमानी पर उतर आता है, उतना ही नासमझ भी बन जाता है। जवान जिस्म में आवेग और उत्तेजना की बेपनाह लहरें उमड़ेंगी ही, लेकिन सम्हलने-सम्हालने का जिम्मा उसका।

अस्तु, सतर्कता की समूची जिम्मेदारी भी एकमात्र शर्मिला के कंधों पर! •••वह तो गहरी नींद सो जाता है। सारे दिन की जी-तोड़ मेहनत के बाद उसके दिमाग में कोई चिंता-फिक्र बाकी नहीं रहती। जाहिर है कि टेबल-लैम्प की रोशनी में पढ़ते-पढ़ते शर्मिला की निगाहें अक्सर उसके नींद-डूबे चेहरे पर स्थिर हो जातीं।

कभी-कभी उसे हंसी भी आती है। ब्याह करके उसने पति हासिल किया है या पति की शक्ल में कोई शिशु! हां, कभी-कभी, फुर्सत के वक्त पापा के लिए भी मन छटपटाता है। दो महीने होने को आए, उन्हें देखा नहीं।

उस दिन डाक्टर भट्टाचार्य बता रहे थे, 'तुम्हारे पापा का ब्लडप्रेशर अब अक्सर ही उतरता-चढ़ता रहता है। लगता है, उनकी दिमागी अशान्ति और बढ़ गई है।'

भट्टाचार्य ही बता रहे थे—वह अपनी जुबान से बेटी के बारे में कुछ नहीं पूछते। लेकिन डाक्टर भट्टाचार्य जब उसके बारे में कुछ कहते हैं, तो लेटे रहने के बजाय अचानक उठकर बैठ जाते हैं और दत्तचित्त होकर उसके बारे में सुनते रहते हैं। डाक्टर भट्टाचार्य जब भी उन्हें देखने जाते हैं, वह जानबूझकर उसका जिक्र छेड़ देते हैं। डाक्टर साहब भी घुमा-फिराकर उन्हें आश्वस्त करते हैं कि वह बहुत मजे में है; दिनोंदिन तरक्की भी कर रही है। उन्होंने ही बताया कि उनकी बातें सुनकर पापा के चेहरे पर बेहद सकून झलक जाता है।

शर्मिला क्या करे, उसे सच ही समझ नहीं आता। वह उन्हें अस्पताल से फोन भी कर सकती है। लेकिन आजकल उन्होंने काम-काज देखना छोड़ दिया है, दफ्तर भी नहीं जाते। फोन घर पर ही करना होगा। घर पर फोन दीदी या जीजाजी उठाएंगे। वैसे बहुत संभव है, दीदी ही फोन उठाएं। पापा के लिए दर्द या खिचाव को वे कभी सीधी-सादी निगाह से नहीं देखेंगी, शक करना उनकी आदत में शुमार हो गया है। शर्मिला को उनसे बात करने में भी वितृष्णा होती है।

सुबह आठ बजे तक मोहन हजारिका भरपूर चाय-नाश्ता करके गैरेज चला जाता है। दोपहर एक बजे तक उसे दम मारने की भी फुर्सत नहीं। उसे काम पर भेजने के बाद, खुद नहा-धोकर वह इत्मिनान से अस्पताल जाने के लिए तैयार होती है।

...उस दिन मोहन को विदा करके वह गुमसुम-सी खिड़की के पास खड़ी थी। थोड़ी देर बाद ही वह चौंक उठी। पापा की लंबी-चौड़ी विलायती कार उसके दरवाजे आकर रुकी।

गाड़ी से खुद प्रमथेश साहब उतरे।

शर्मिला भागकर बाहर निकल आई। वह बाहें बढ़ाकर पापा से लिपट गई, 'तुम्हारी तबीयत इतनी खराब है। तुम क्यों चले आए, डैडी! तुम अस्पताल में मुझे एक फोन कर देते, मैं भागकर चली आती!'

डैडी पहले से ज्यादा सूख गए थे। उनका चेहरा भी कुछ लाल लग रहा था, आंखें भी ज्यादा धंस गई थीं। बेटी की बांहों से अपने को रिहा करते हुए उन्होंने गाड़ी से एक भारी-भरकम पोटली निकाली।

शर्मिला की तरफ देखते हुए उन्होंने भर्रायी हुई आवाज में कहा, 'बस, कमरे में बस...'

शर्मिला सहम गई। उसने पोटली की तरफ इशारा करते हुए कहा, 'इसमें क्या है, डैडी?

उन्होंने मीठी-सी झिड़की लगाते हुए कहा, 'तू क्या यहीं खड़ी-खड़ी सारा कुछ पूछ लेगी? घर में नहीं घुसने देगी?'

खुशी और उत्तेजना से शर्मिला का अंग-अंग कांप रहा था। उसने मकपका कर दोनों हाथों में डैडी का एक हाथ थामते हुए कहा, 'चलो पापा, आओ चलो!' अगर वह उनके हाथों से पोटली ले लेती तो उनका वजन हल्का हो जाता, लेकिन जाने क्यों, वह ऐसा नहीं कर पाई।

कमरे में लाकर, उसने पापा को बिस्तर पर बिठा दिया। पापा की

निगाहें कमरे का मुआयना करती रहीं। उनकी आवाज भर्रा आई, 'उस कम्बख्त ने अभी भी तुझे एक ही कमरे में डाल रखा है? ऐसा ही था तो कोई बड़ा-सा बंगला किराए पर लेने की...लम्बी-चौड़ी डींग क्यों हांकी थी?'

डैडी को शांत करने के लिए उसने बेहद नरम लहजे में कहा, 'वह तो लेना चाहते थे, डैडी, मैंने ही मना कर दिया। यहां से गैरेज पास पड़ता है, देख-रेख में काफी सुविधा रहती है। तुम विश्वास करो डैडी, मैं बहुत मजे में हूं! यह भी मेरी एक तपस्या है, तुम मुझे सिर्फ आशीष दो...'

लेकिन डैडी को उसकी सफाई से कोई खुशी नहीं हुई। उन्होंने गरजकर सवाल किया, 'वह स्काउण्ड्रल है कहां?'

'गैरेज में होंगे। बुलाऊं?'

'नहीं, मैं उसका मुंह भी नहीं देखना चाहता।'

शर्मिला खिलखिलाकर हंस पड़ी, 'इससे क्या मुझे खुशी होगी, डैडी? तुम मेरा भला चाहते हो और उनका न चाहो, ऐसा भला तुम कर सकते हो!'

प्रमथेश साहब कुछ पलों को गुम हो रहे। थोड़ी देर बाद उन्होंने दुबारा बात शुरू की, 'अभी रहने दे। जाते समय उससे मिल लूंगा।' उन्होंने सामने पड़ी हुई पोटली दिखाते हुए कहा, 'मुझसे जब तूने नाता तोड़ ही लिया, तो तेरी अमानत भला मैं क्यों रखूं? ये सब तेरे हैं। ले, सम्हाल!'

नाता किसने तोड़ा है, शर्मिला ने इस बहस को आगे नहीं बढ़ाया। वह पोटली देखकर परेशान हो उठी, 'इसमें क्या है, डैडी?'

'तेरी मां के गहने। तेरी दीदियों ने अपने-अपने हिस्से के गहने, ब्याह के बाद ही ले लिए थे, तेरे गहने मेरे पास पड़े थे।'

शर्मिला को उन गहनों की बात मालूम थी। चूंकि वह सबसे छोटी बेटी थी, इसलिए उसके हिस्से में ज्यादा गहने आए थे, यह भी उसे मालूम था। कम-से-कम डेढ़ सौ भरी के गहने, मां ने उसके लिए पहले से ही निकाल-कर रख दिए थे। हाथ में रुपए आते ही, मां गहने बनवा लेती। जब उसने अठारहवां साल पूरा कर लिया, तब उसके लिए जाने कितने सारे नए-नए गहने भी बनवाकर रख लिए। दीदियों ने इस बात को ले कर, मां-पापा को कम उलाहने नहीं दिए।

शर्मिला की छाती में अजब-सी टीस कसक उठी। उसने कहा, 'डैडी, तुम ये गहने क्यों ले आए? इन्हें मैं कैसे ले सकती हूं?'

प्रमथेश साहब एकदम से भड़क उठे। उन्होंने गाड़ी के संदर्भ में जो कहा था, वही फिर दुहरा दिया, 'तुझे अगर नहीं लेना है तो इन्हें ब्रह्मपुत्र में बहा आ!

तेरी जो मर्जी में आए, कर ! तेरी मां जिसे जो-जो दे गई है, उसे क्या मैं अपनी छाती पर लादकर ले जाऊंगा ? या मैं ये गहने कहीं से चुराकर लाया हूं ? बैंक के लॉकर में पड़े थे, कल इन्हें निकालकर घर ले आया। आज तेरी दीदियों को बताकर उनकी आंखों के सामने ही लेकर आया हूं ! अब तू क्या अपनी मां की चीजें भी लौटाकर मेरी बेइज्जती करेगी ? तू मुझे रुलाना चाहती है···'

शर्मिला उनसे सट कर बैठ गई। उनकी पीठ पर हाथ फेरते हुए उसने कहा, 'ठीक है, डैडी, मैं ले लूंगी ! तुम शांत होवो···'

'हुंह, शांत होवो ! जैसे मेरे लिए जाने कितना दर्द है तुझे। दो महीने हो गए, तू मुझे देखने भी नहीं आई ! क्यों ? कभी यह भी खबर नहीं ली कि मैं मर गया या जिंदा हूं ? क्यों नहीं ली खबर ?'

पापा को शांत करने के लिए शर्मिला दुबारा खिलखिलाकर हंस पड़ी। उसने हंसते हुए कहा, 'खबर मैं ठीक लेती रहती थी ! अच्छा, अब से मैं तुम्हें नियम से देखने आऊंगी ! अब से तुम्हारे इलाज का सारा जिम्मा मेरा !'

प्रमथेश गुस्सा भूलकर अब सचमुच दुःख से बिफर पड़े। बेटी के दोनों हाथ थामते हुए कहा, 'सिर्फ जिम्मा लेने से काम नहीं चलेगा। मुझे अपनी गलती सुधारने का मौका भी देना होगा तुझे ! तेरी दीदी और जीजा लोगों से मैंने कह दिया है, वह वसीयत मैं फाड़ डालूंगा। मेरे पास जो कुछ है, उसका पैसे-पैसे का हिसाब करके, उसके तीन हिस्से बराबर-बराबर होंगे। तेरा हिस्सा, तुझे खुद ही समझ-बूझ लेना होगा। इस दिन से वे लोग मुझे कैसे-कैसे बेध रहे हैं, तुझे नहीं मालूम, शर्मि ! पहले जो कुछ किया उनके डर और अत्याचार के दबाव में किया। अभी भी मुझे उनसे हमेशा डर लगा रहता है, वे लोग मुझे जान से भी मार सकते हैं ! जानती है, मैं उनके हाथ के बने खाने पर भी भरोसा नहीं कर पाता !'

शर्मिला कुछ देर को स्तब्ध हो गई। डैडी की ऐसी डरी-डरी, बौखलाई हुई सूरत, उसने पहले कभी नहीं देखी।

उसने उन्हें तसल्ली देनी चाही, 'तुम बेकार ही डरते हो, डैडी ! मुझे मालूम है, उन्हें तुम्हारी दौलत और जायदाद का जबरदस्त लोभ है, लेकिन वे लोग इतने बुरे नहीं हो सकते !'

डैडी और ज्यादा उत्तेजित हो उठे, 'वैर, हो सकता है, मैं बेकार ही डरता रहता होऊं ! लेकिन वे तुझसे क्यों उतना जलते हैं ? कहीं मैं हाथ उठाकर तुझे कुछ दे न दूं, इस आशंका से मेरे दोनों दामाद, हर वक्त मेरी चौकीदारी करते रहते हैं ! जब तक मैं मर नहीं जाऊंगा, वे इसी तरह मेरी छाती पर सवार

रहेंगे, समझ ले ! लेकिन तू क्या मुझे यह समझाना चाहती है कि मैं यह सब बर्दाश्त कर लूं ? नहीं, हरगिज नहीं, आंखें मूंदने के पहले, मैं पक्का इंतजाम कर जाऊंगा, ताकि कोई तेरा हिस्सा न मार सके !'

शर्मिला ने उनके बदन और पीठ पर हाथ फेरते हुए उन्हें शांत किया। थोड़ा ठहरकर उसने बेहद अनुनय-भरे स्वर में कहा, 'पापा, एक बात कहूं, तुम गुस्सा तो नहीं होगे ?'

'नहीं रे, नहीं ! अब मैं तेरी किसी बात पर नाराज नहीं हो सकता ! मैं जो करने जा रहा हूं, मुझे रोकना मत !'

'लेकिन, अगर तुम मेरी सलाह मानो, तो अभी कुछ मत करना ! वरना उस घर में जाकर, तुम्हारा इलाज करने में मुझे दिक्कत होगी। तुम्हारी भी दुर्दशा बढ़ जाएगी। अभी जो जैसा है, वैसा ही रहने दो। पहले तुम अच्छी तरह ठीक हो लो, उसके बाद, जो चाहे करना। तब मैं कुछ नहीं कहूंगी।'

प्रमथेश साहब का गला रुंध आया। वह एकटक अपनी बेटी को देख रहे थे। उनकी आंखों में आंसू चमक उठे।

···लेकिन अब सचमुच उनका वक्त करीब आ गया है, शर्मिला सोच भी नहीं सकती थी। पंद्रह दिनों के अंदर, उन्हें जोर का दौरा पड़ा। वह धक्का सम्हाल नहीं पाए। पूरे बहत्तर घंटे बेहोश रहे। उस हालत में भी जी-जान से जूझते रहे। शर्मिला ने भी मौत के हाथों से अपने डैडी को छीन लाने में पूरी ताकत लगा दी। उन चार दिनों में उसे नहाने-खाने की भी फुर्सत नहीं मिली। शहर के तमाम बड़े-बड़े डाक्टरों को, अपने डैडी के आगे ला खड़ा किया। डाक्टर भट्टाचार्य ने भी, ये कई दिन, उसी घर में गुजार दिए।

बीच-बीच में डैडी आंखें फाड़-फाड़कर देखने की कोशिश करते। उनकी आंखें शर्मिला को खोजतीं। उसे अपने चेहरे पर झुका पाकर वह कुछ कहना चाहते थे। लेकिन···कुछ भी नहीं कह पाए। एकाध बार उनकी दीन-हीन आंखें अपनी दोनों बेटियों पर भी ठहर गईं, लेकिन उनसे भी वह कुछ नहीं कह पाए। लेकिन शर्मिला का ख्याल था, डैडी जो कहना चाहते थे, दीदियां समझ गई थीं।

प्रमथेश बरकाकुती ने संसार से विदा ली। उर्मिला, प्रमिला धाराप्रवाह रोती रहीं। हां, सिर्फ शर्मिला ही नहीं रो पाई।

डैडी का क्रिया-कर्म समाप्त होने तक, वह जुबान पर ताला डाले, उसी घर में रुकी रही। उनके श्राद्ध-कर्म से पहले, घर छोड़ कर चले जाने से, डैडी की आत्मा को तकलीफ होती।

···लेकिन उस नासमझ इंसान को इसमें भी सख्त एतराज था। उसे साथ ले जाने के लिए प्रायः रोज ही आकर धरना देता। शर्मिला भी पूरी सख्ती से उसे लौटा देती। वैसे दीदियों के चेहरे से साफ जाहिर था कि वे यह समझ रही हैं कि वह किसी उम्मीद में रुकी है। डैडी थोड़े-बहुत रुपए-पैसे या जमीन-जायदाद शायद उसके नाम कर गए हों। मुमकिन है, उसे लेकर दोनों बहनों में काफी सलाह-मशविरा भी हो रहा हो।

डैडी का श्राद्ध काफी विशाल पैमाने पर संपन्न हुआ। खैर, सारी दौलत ही डैडी की थी। गंगाजल से गंगाजल की पूजा!

शर्मिला ने उसी दिन रात को अपने घर लौट जाने की तैयारी कर डाली।

दोनों दीदियों ने उसे रोकने का फर्ज निभाते हुए कहा, 'अभी दो-चार दिन और रुक जा न! आज ही जाने की क्या जरूरत है?'

शर्मिला ने जवाब दिया, 'मेरे रुके रहने से तुम्हारे हिस्सा-बांट में असुविधा होगी, इसके बाद तो अब उसी की बारी है, मुझे वह नजारा देखने की कोई इच्छा नहीं!'

दीदियां बुद्धिमती थीं! इतना सब सुनने के बाद भी उन्होंने नाराजगी नहीं दिखाई।

दोनों ने बारी-बारी से अपनी सफाई दी, 'इसमें भला हमारा क्या कसूर है, तू ही बता! तूने खुद ही ऐसा कांड कर डाला कि डैडी ने गुस्से में आकर वसीयत तक लिख डाली। अब तेरे जीजा लोगों को समझाना मुश्किल है।··· खैर, डैडी यकीनन काफी हद तक तुझे माफ कर चुके थे, वरना मां के सारे गहने तुझे भला क्यों दे जाते? उन्होंने दो-एक बार वसीयत बदलने का भी जिक्र उठाया था। मुमकिन है कुछ रुपए-पैसे तेरे नाम भी करना चाहते हों! अब जितना नगद माल है—उसमें तीन हिस्से करने में, हम दोनों को कोई एतराज नहीं! तू हमारी सगी बहन है; लेकिन फितूर में आकर ऐसा पागलपन कर बैठी कि कुछ कहते नहीं बनता!'

शर्मिला ने सर्द लहजे में जवाब दिया, 'अब तुम ज्यादा न बोलो दीदी, वरना मुझे हंसी आने लगेगी! रही तुम्हारी उदारता, वह मुझे याद रहेगी! हिस्सा-बांट जो करना है, वह आपस में ही कर लो। उसके बाद, रोज ईश्वर से प्रार्थना करना, तुम लोगों ने जैसा व्यवहार उनसे किया, कहीं तुम्हारे बच्चे, तुमसे वैसा ही व्यवहार न करें! मुझे तुम जैसी सगी बहनें मिली हो, तुम्हारे बच्चे भी वैसा ही सगापन न निभाएं! अच्छा, मैं चलूं···'

डैडी के घर से सारे रिश्ते-नाते वहीं खत्म हो गए।

रहेंगे, समझ ले ! लेकिन तू क्या मुझे यह समझाना चाहती है कि मैं यह सब बर्दाश्त कर लूं ? नहीं, हरगिज नहीं, आंखें मूंदने के पहले, मैं पक्का इंतजाम कर जाऊंगा, ताकि कोई तेरा हिस्सा न मार सके !'

शर्मिला ने उनके वदन और पीठ पर हाथ फेरते हुए उन्हें शांत किया। थोड़ा ठहरकर उसने बेहद अनुनय-भरे स्वर में कहा, 'पापा, एक बात कहूं, तुम गुस्सा तो नहीं होगे ?'

'नहीं रे, नहीं ! अब मैं तेरी किसी बात पर नाराज नहीं हो सकता ! मैं जो करने जा रहा हूं, मुझे रोकना मत !'

'लेकिन, अगर तुम मेरी सलाह मानो, तो अभी कुछ मत करना ! वरना उस घर में जाकर, तुम्हारा इलाज करने में मुझे दिक्कत होगी। तुम्हारी भी दुर्दशा बढ़ जाएगी। अभी जो जैसा है, वैसा ही रहने दो। पहले तुम अच्छी तरह ठीक हो लो, उसके बाद, जो चाहे करना। तब मैं कुछ नहीं कहूंगी।'

प्रमथेश साहब का गला रुंध आया। वह एकटक अपनी बेटी को देख रहे थे। उनकी आंखों में आंसू चमक उठे।

···लेकिन अब सचमुच उनका वक्त करीब आ गया है, शर्मिला सोच भी नहीं सकती थी। पंद्रह दिनों के अंदर, उन्हें जोर का दौरा पड़ा। वह धक्का सम्हाल नहीं पाए। पूरे बहत्तर घंटे बेहोश रहे। उस हालत में भी जी-जान से जूझते रहे। शर्मिला ने भी मौत के हाथों से अपने डैडी को छीन लाने में पूरी ताकत लगा दी। उन चार दिनों में उसे नहाने-खाने की भी फुर्सत नहीं मिली। शहर के तमाम बड़े-बड़े डाक्टरों को, अपने डैडी के आगे ला खड़ा किया। डाक्टर भट्टाचार्य ने भी, ये कई दिन, उसी घर में गुजार दिए।

बीच-बीच में डैडी आंखें फाड़-फाड़कर देखने की कोशिश करते। उनकी आंखें शर्मिला को खोजतीं। उसे अपने चेहरे पर झुका पाकर वह कुछ कहना चाहते थे। लेकिन···कुछ भी नहीं कह पाए। एकाध बार उनकी दीन-हीन आंखें अपनी दोनों बेटियों पर भी ठहर गईं, लेकिन उनसे भी वह कुछ नहीं कह पाए। लेकिन शर्मिला का ख्याल था, डैडी जो कहना चाहते थे, दीदियां समझ गई थीं।

प्रमथेश सरकाकुती ने संसार से विदा ली। उर्मिला, प्रमिला धाराप्रवाह रोती रहीं। हां, सिर्फ शर्मिला ही नहीं रो पाई।

डैडी का क्रिया-कर्म समाप्त होने तक, वह जुबान पर ताला डाले, उसी घर में रुकी रही। उनके श्राद्ध-कर्म से पहले, घर छोड़ कर चले जाने से, डैडी की आत्मा को तकलीफ होती।

···लेकिन उस नासमझ इंसान को इसमें भी सख्त एतराज था। उसे साथ ले जाने के लिए प्रायः रोज ही आकर धरना देता। शर्मिला भी पूरी सख्ती से उसे लौटा देती। वैसे दीदियों के चेहरे से साफ जाहिर था कि वे यह समझ रही हैं कि वह किसी उम्मीद में रुकी है। डैडी थोड़े-बहुत रुपए-पैसे या जमीन-जायदाद शायद उसके नाम कर गए हों। मुमकिन है, उसे लेकर दोनों बहनों में काफी सलाह-मशविरा भी हो रहा हो।

डैडी का श्राद्ध काफी विशाल पैमाने पर संपन्न हुआ। खैर, सारी दौलत ही डैडी की थी। गंगाजल से गंगाजल की पूजा!

शर्मिला ने उसी दिन रात को अपने घर लौट जाने की तैयारी कर डाली।

दोनों दीदियों ने उसे रोकने का फर्ज निभाते हुए कहा, 'अभी दो-चार दिन और रुक जा न! आज ही जाने की क्या जरूरत है?'

शर्मिला ने जवाब दिया, 'मेरे रुके रहने से तुम्हारे हिस्सा-बांट में असुविधा होगी, इसके बाद तो अब उसी की बारी है, मुझे वह नजारा देखने की कोई इच्छा नहीं!'

दीदियां बुद्धिमती थीं! इतना सब सुनने के बाद भी उन्होंने नाराजगी नहीं दिखाई।

दोनों ने बारी-बारी से अपनी सफाई दी, 'इसमें भला हमारा क्या कसूर है, तू ही बता! तूने खुद ही ऐसा कांड कर डाला कि डैडी ने गुस्से में आकर वसीयत तक लिख डाली। अब तेरे जैसा लोगों को समझाना मुश्किल है।··· खैर, डैडी यकीनन काफी हद तक तुझे माफ कर चुके थे, वरना मां के सारे गहने तुझे भला क्यों दे जाते? उन्होंने दो-एक बार वसीयत बदलने का भी जिक्र उठाया था। मुमकिन है कुछ रुपए-पैसे तेरे नाम भी करना चाहते हों! अब जितना नगद माल है—उसमें तीन हिस्से करने में, हम दोनों को कोई एतराज नहीं! तू हमारी सगी बहन है; लेकिन फितूर में आकर ऐसा पागलपन कर बैठी कि कुछ कहते नहीं बनता!'

शर्मिला ने सर्द लहजे में जवाब दिया, 'अब तुम ज्यादा न बोलो दीदी, वरना मुझे हंसी आने लगेगी! रही तुम्हारी उदारता, वह मुझे याद रहेगी! हिस्सा-बांट जो करना है, वह आपस में ही कर लो। उसके बाद, रोज डैडी से प्रार्थना करना, तुम लोगों ने जैसा व्यवहार उनसे किया, कहीं तुम्हारे बच्चे, तुमसे वैसा ही व्यवहार न करें! मुझे तुम जैसी सगी समझती हो, तुम्हारे बच्चे भी वैसा ही सगापन न निभाएं! अच्छा, मैं चलूं···'

डैडी के घर से सारे रिश्ते-नाते वहीं खत्म हो गए।

दिन, महीने, साल…वक्त गुजरता रहा। शर्मिला की प्रैक्टिस जोरों से चल निकली, नौकरी में भी तरक्की होती गई। लेकिन शर्मिला ने इस तरह की आमदनी या तरक्की कतई नहीं चाही थी। अस्पताल या बाहरी दुनिया में एकमात्र अपने व्यक्ति रह गए थे—विश्वनाथ भट्टाचार्य। वह भी लंबी छुट्टी लेकर विदेश चले गए। फिलहाल सरकारी तौर पर दो सालों के लिए वहां के किसी बहुत बड़े अस्पताल में नौकरी कर ली। स्वदेश लौटने पर, फिर इसी अस्पताल से जुड़े रहेंगे, यह भी निश्चित नहीं था। जाने से पहले, भट्टाचार्य ही तदबीर करके, शर्मिला को अपनी जगह बिठाल गए। सिर्फ यही नहीं, उन्हीं की सिफारिश से, उनके मरीज भी अब उसकी शरण में आने लगे। इतनी कड़ी मेहनत के बावजूद इम्तहान देने का संकल्प उसके दिमाग में पक्की तौर पर घर कर गया था।

लेकिन उसे कहां पता था, अभी और कोई हादसा होने वाला है, जो उसकी समूची जिंदगी ही उलट-पलट देगा!

हर मामले में उसे अपने इस हमसफर को छोटे बच्चे की तरह बहलाना-सम्हालना पड़ता है। उसका उत्साह, फुरती, गुस्सा, नादानी—सारा कुछ ज्यों-का-त्यों बरकरार है। उन्होंने एक नया कमरा भी बनवा लिया। गैरेज भी पहले से काफी बड़ा आकार ले चुका है। लेकिन उसे चैन नहीं। उसकी रुपयों की चाह बढ़ती ही जा रही है। अतः इन दिनों उसे धुन सवार है, गांव वाला घर बेच डाला जाए। पेट्रोल-पंप खोलने के लिए परमिट का इंतजाम भी लगभग पक्का कर चुका है। परमिट मिलते ही, वह और थोड़ी-सी जमीन खरीदकर एक पेट्रोल-पंप बिठाने वाला है। उस वक्त एक और मोटर-सर्विस-यूनिट चालू की जाएगी। शर्मिला ने अपने गहने भी निकालकर देने चाहे थे।

उसने उसे समझाना चाहा, ये गहने लॉकर में ही तो पड़े हैं। रुपयों के लिए अगर सचमुच तुम्हें दिक्कत हो रही है, तो इन्हें ले लो! इन गहनों के रुपयों से पेट्रोल-पंप, सर्विस-स्टेशन सारा कुछ बन जाएगा!'

उसकी इन बातों ने मानो बारूद में आग दिखा दी हो। वह बुरी तरह भड़क गया, 'हां, और क्या बाकी है? बीवी के गहने बेचकर मैं बड़ा आदमी बनूंगा! मेरी बीवी उसे इतना निकम्मा और नकारा समझती है?'

गुस्से में बड़बड़ाता हुआ, वह घर से बाहर निकल गया। दोपहर को काफी मान-मनुहार के बाद वह खाना खाने के लिए घर लौटा।

अतः काफी सोच-विचार के बाद, उसे गांव का घर-द्वार, तालाब, जमीन बेचने के बारे में सहमति देनी ही पड़ी। वैसे उसने जिन समस्याओं का जिक्र किया था, वह गलत नहीं था। देखभाल के बिना सारा कुछ जंगल होता जा

रहा है। उस पर जैसा जमाना आया है, कोई कहीं से उड़कर आए और जम-कर बैठ जाए, बस...किस्सा खत्म! मुसीबत आने पर सब कुछ की रक्षा करना, उन बूढ़े-बूढ़ियों के वश की बात नहीं। इस बीच उन्होंने कई-कई बार आने-जाने वालों की मार्फत कहला भेजा है, अब उनसे काम-काज नहीं होता, खेत से फसल, तलैया से मछलियां तक चोरी हो जाती हैं। इसके अलावा घर-द्वार की हालत भी ठीक नहीं। दीवारें तक जगह-जगह से टूटी पड़ रही हैं।

इधर ठीक उसी वक्त जगह-जमीन की कीमत आग की तरह तेज होती जा रही है। शहर के अमीरजादे, ऊंची कीमतों पर जमीनें खरीदकर घर-द्वार बनवा रहे हैं। जरा-सी कोशिश की बात है। मोहन हजारिका भी इस मौके पर खासे रुपए कमा सकता था। कुछ लोगों से उसने बातचीत भी कर डाली। जब उसे गांव वाले घर में रहना ही नहीं है, तब मौका देखकर बेच ही क्यों न डाले? नया धंधा शुरू करने के लिए उसे जितने रुपयों की जरूरत है, सारे उस जमीन से ही उठ आएंगे।

इस तरह की बातें सुनने के बाद, उसे रोकने का कोई मतलब नहीं होता।

करीब पंद्रह दिनों के अंदर, उसने गांव वाली जगह-जमीन, घर-द्वार—सब कुछ एक साथ ही बेचने का इंतजाम पक्का कर डाला। ऐसे कामों में उसके उत्साह या तत्परता में रत्ती-भर भी कमी नहीं। वह जो सोच लेता, उसे कर गुजरने में भी उसे खास वक्त नहीं लगता।

लिखा-पढ़ी, लेन-देन का सारा मामला तय हो गया। रुपए भी मिल गए, बैंक में जमा भी हो गए। इसी सिलसिले में कई-कई बार फकीरा गांव के भी चक्कर लगाने पड़े। सारा काम निपटाने के बाद, नए मालिक को सारा कुछ समझा-बुझाकर, वह यहां-वहां बिखरी अपनी मां की यादगार समेटकर शहर लौट आएगा, इस इरादे से वह आखिरी बार फकीरा गांव के लिए रवाना हो चुका था। कल उसे लौट आना है।

जैसे सुराफाती बच्चा घर से बाहर हो, तो मां बेतरह चिंतित हो उठती है, मोहन के बाहर जाने से, शर्मिला भी कुछ उतनी ही परेशान। कल का दिन गुजर जाए; उसके बाद निश्चिंत। दुबारा जाने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

अगले दिन भी वह परम निश्चित मूड में अस्पताल आई। मोहन की ट्रेन करीब १० बजे गोहाटी स्टेशन पहुंचेगी। वहां पहुंचकर या तो वह खुद फोन करता है या सीधे अस्पताल चला आता है। शर्मिला को एक दिन भी न देखे तो छटपटाने लगता है। काम-काज में फंसी हुई शर्मिला को वक्त का ख्याल नहीं रहा। सरकारी दफ्तर से कोई जरूरी खबर आई थी। खबर सुनते ही शर्मिला का खून जमकर पानी हो गया। उस वक्त दोपहर के बारह बजे थे।

गौहाटी से पंद्रह मील दूर, अमुक डाउन ट्रेन के साथ एक मालगाड़ी की टक्कर हो गई है। डाउन ट्रेन कुछ लेट आ रही थी। सिगनल की गड़बड़ी की वजह से, दिन-दहाड़े भयंकर दुर्घटना हो गई। चार-पांच डिब्बे बिल्कुल चकनाचूर हो गए हैं, सैकड़ों जख्मी हुए हैं, बहुत-से मारे गए हैं। अस्पताल के अधिकारी तैयार रहें, बहुत-से जख्मी लोगों को भर्ती करना होगा।

उसी डाउन ट्रेन से मोहन भी वापस आने वाला था!

स्टेशन फोन करके शर्मिला ने दुर्घटना-स्थल का पता लगाया और पागलों की तरह गाड़ी लेकर दौड़ पड़ी।

···ऐसी भयंकर विभीषिका वह जिंदगी में पहली बार देख रही थी।

यह मानो कोई सच्ची घटना न हो, कोई भयंकर दुःस्वप्न हो! ढेर सारे हंसते-बोलते, सजीव इंसान मानो ममी बना दिए गए हों! मौत का तांडव, कटे हुए जिस्म, विकलांग देह, दबी-कुचली लाशों का मानो नर्क उग आया हो! चीख-पुकार और आर्तनाद से समूचा वातावरण गूंज उठा था। अनेक सेवा-समितियां जख्मी और मृतक लोगों के उद्धार में व्यस्त थीं!

लगभग डेढ़ घंटे की तलाश के बाद मोहन का पता चला। एक चकनाचूर डिब्बे के नीचे से उसे भी खींच कर बाहर निकाला गया। उसकी छाती से करीब आठ महीने का एक शिशु भी चिपका हुआ था। उस बच्चे के बदन पर एक खरोंच तक नहीं आई थी। वह चीख-चीखकर रोए जा रहा था।

मानो कोई ममतालु इंसान उस नन्हे-से छौने को अपनी बांहों और सीने के बीच दुबकाए, उसकी रक्षा में पेट के बल लेटा हुआ हो!

उस आदमी को उलटकर सीधा करने से पहले ही शर्मिला पहचान गई। अंदर से कलेजा चीरकर एक मूक आर्तनाद गूंज उठा, लेकिन गले से कोई आवाज नहीं निकली। मोहन के सिर के बाल खून में भीगे हुए, बाकी शरीर पर कहीं कोई चोट नहीं आई थी।

शर्मिला उससे लिपट गई। उसने उसकी नब्ज टटोली, हाथ रखकर दिल की धड़कनें गिनने की कोशिश की। उसके दिमाग ने जो कहा, उसे झुठलाते हुए उसने कांपते हाथों से कानों पर स्टेथस्कोप लगाकर, उसकी जांच की।

ना! अब देखने को कुछ भी बाकी नहीं रहा! उसके सामने जो इंसान पड़ा था, वह अब किसी दिन भी आंखें नहीं खोलेगा, किसी दिन भी नहीं बोलेगा, किसी दिन भी धरती मैया की हवा में सांस नहीं लेगा! लेकिन उसकी आंखों के आगे जो बेजान चेहरा पड़ा था, उस पर क्या वह यकीन कर ले? मानो उसने किसी खुराफात के इरादे से आंखें मूंद ली हों, लेकिन उसके होंठों की कोरों पर वही चिरपरिचित शरारती हंसी चिपकी हुई थी।

फोटोग्राफरों ने आगे बढ़कर उस बेजान सीने से चिपके हुए सजीव शिशु की तस्वीर अपने कैमरों में कैद कर ली ! किसी नर्स ने उस शिशु को गोद में उठा लिया । शर्मिला की आंखें कुछ देख नहीं पा रही थीं । मोहन को अपना पति शिनाख्त कर लेने के बाद, उस नर्स ने फौरन उस शिशु को उसकी गोद में डाल दिया । मोहन की बेजान देह के पास ही वह निस्पंद काठ बनी बैठी थी । गोद में शिशु पाकर भी, उसका होश वापस नहीं लौटा । उसकी उस पथराई हुई मुद्रा की भी कई तस्वीरें उतार ली गईं ! रोते-रोते उस बच्चे की आवाज रुंध आई थी । लेकिन हठात् उसकी गोद में आते ही, उसे भी मानो कोई अपना मिल गया हो । शर्मिला को देखते हुए वह रोते-रोते अचानक हंस पड़ा । वह उसके सीने में दुबकने के लिए हाथ-पैर चलाने लगा ।

कुछ सोचने-विचारने का वक्त नहीं था । सभी ने यही मान लिया कि वह बच्चा उन्हीं दोनों का है ।

शर्मिला किसी से कुछ भी नहीं कह पाई । उसने उस दुधमुंहे, फूल जैसे शिशु को अपने सीने से लगा लिया । मोहन जाने कहां से एक शिशु, उसकी गोद में डाल गया ! नर्स कहीं से दूध की एक बोतल लाकर उसे थमा गई । मुंह से लगाते ही, बच्चा इत्मिनान से दूध पीने लगा ।

बच्चे को सीने से लगाए हुए, वह लगभग शाम तक यहीं इधर उधर भटकती रही । उसने स्वयंसेवकों को अपना परिचय देते हुए सूचित किया कि यह बच्चा उसका नहीं है । बच्चे के मां-बाप का पता लगाया जाए । रेल के उस डिब्बे से बहुत-से औरत-मर्दों की विकृत लाशें निकलीं । घायल यात्रियों को तो पहले ही ले आया गया था । लेकिन शाम तक भी कोई उस बच्चे की खोज में नहीं आया ।

शर्मिला का परिचय पाने के बाद, बच्चे को उसी के जिम्मे छोड़ देने में किसी को भी एतराज नहीं हुआ । शर्मिला बिल्कुल घबरा गई थी । लेकिन इस हालत में भी वह खुद भी स्वयंसेवकों के साथ-साथ बच्चे के मां-बाप का पता लगाती रही । उसके अनुरोध पर, बाकी मृतकों के साथ मोहन का शव भी एम्बुलेंस में रखकर, गौहाटी ले आया गया । हैरत है ! शर्मिला बच्चे को कभी अपनी गोद में, कभी बगल में लिटाकर या बैठाकर एक हाथ से उसे थामे हुए, दूसरे हाथ से गाड़ी चलाती रही । ना, दुःख का कोई सवाल नहीं था, दुःख से तो वह पत्थर हो गई थी !

चलो, अपना कहने को, अब कोई नहीं रहा । उसने अपनी दीदियों को भी खबर नहीं दी । किसी और से खबर पाकर, वे दोनों खुद ही मातमपुर्सी को

आईं। बच्चे को देखकर तो वे लोग भी एक बार चकरा गईं। उन्होंने सलाह दी, उस बच्चे को किसी अनाथालय वगैरह में भेजकर, बहन उनके पास चली आए। लेकिन शर्मिला ने उनके आगे भी किसी तरह का रंज जाहिर नहीं किया। उसे मालूम था, वे लोग आएंगी, उसे साथ ले जाने की जिद भी करेंगी। बहन आखिर डाक्टर है, अच्छा-खासा कमा लेती है, अब तो कहीं कोई बंधन भी नहीं। बिल्कुल मुक्त ! वह पास रहेगी तो अपकार के बजाय, उपकार ही होगा। अतः बहन की गोद में जाने कहां का, किसका अजनबी बच्चा देखकर आखिर और क्या सलाह देतीं ? अपनी सगी बहनों के इतने सारे बाल-बच्चों के होते हुए, किसी पराए बच्चे की जिम्मेदारी उठाने की क्या जरूरत ?

शर्मिला गुमसुम-सी उनकी बातें सुनती रही। उसने अपने भविष्य के बारे में भी कोई बातचीत नहीं की। वैसे उसके मन की जो हालत थी, किसी पराए बच्चे का जिम्मा उठाने का उसका कोई इरादा भी नहीं था। वह तो, बस, अपना फर्ज निभा रही है। बच्चे के गले में सोने की एक पतली-सी चेन थी। उसके साथ पुरानी डिजाइन की गिन्नी का एक लॉकेट भी जुड़ा हुआ था। लॉकेट पर अंग्रेजी में 'डी' अक्षर का मोनोग्राम खुदा था। उसने बच्चे के गले से वह चेन उतार ली और उसकी तस्वीर उतारकर तमाम अखबारों में प्रकाशित करा दी। अगर उस बच्चे का कहीं कोई रिश्तेदार होगा तो वह जरूर आएगा। लॉकेट और चेन ही उसका सबूत होगा। लेकिन किसी ने भी खोज-खबर नहीं ली।

दो महीने बीत गए। शर्मिला को लगने लगा, इतने दिनों बाद, अब कोई अगर उस बच्चे को खोजता हुआ आ पहुंचे या उसका दावेदार बन जाए, तो उसकी छाती पर मानो दूसरा वज्रपात होगा। वह शिशु जब अपनी दोनों नन्ही-कोमल बांहें बढ़ाकर उससे लिपट जाता है, उसे देखते हुए खिल-खिल हंसता है, तब शर्मिला को लगता है, वह पागल हो जाएगी। अब न उसका काम-काज में मन लगता है, न प्रैक्टिस में। कहीं बाहर निकलते ही तड़पने लगती है। उसका मन होता है, वह भाग कर घर पहुंच जाए और उस बच्चे को अपनी छाती से लिपटा ले ! हाड़-मांस का सजीव खिलौना, कितना प्यारा होता है, उसने पहले कभी महसूस नहीं किया। यूं उसने दीदी के बच्चों को भी खिलाया है, लेकिन यह भी जानती थी, ये बच्चे उसके अपने नहीं। खैर, यूं तो यह बच्चा भी अपना नहीं। लेकिन इस शिशु ने उसे मातृत्व का स्वाद दिया है। शर्मिला के सीने में असहनीय हाहाकार मचा रहता। रोटी-रोजगार के चक्कर में, ऊंची डिग्री के मोह में वह मां होने की संभावना से, सबसे ज्यादा दूर-दूर रही। अब

ख्याल आता है तो अपने ही [illegible] का [illegible] होता है। उसने उस बच्चे की तस्वीर अखबार में क्यों प्रकाशित कराई ? दो महीने भी गुजर गए, लेकिन अब कोई नहीं आ धमकेगा, ठीक-ठीक प्रमाण देकर बच्चे पर दावा नहीं करेगा, कौन कह सकता है ? शर्मिला रात को नींद में भी यह दुःस्वप्न देख-कर चौंक-चौंक उठती।

नहीं, उसकी जिंदगी में पति नहीं, बल्कि सचमुच कोई शिशु आया था, जिस पर उसने समस्त प्यार-ममता लुटा दी थी। वह खुद साथ नहीं रह पाया। उसे तंग करने के लिए ही, जाने किस प्रकार बच्चे को अपनी बाँहों में छुपाकर, दुर्घटना के हमले से बचा लिया और उसे उपहार में दे गया। यह भी मानो उसके बचपने का कोई शरारती अंदाज हो ! लेकिन अब इस उपहार को, अपने जीते जी, अपने से काटकर अलग कैसे कर पाएगी ? काटने के ख्याल भर से उसकी छाती में भयंकर ऐंठन होने लगती है, अगर किसी दिन सच ही, उसे छोड़ना पड़ा तो वह जिंदा कैसे रहेगी ? क्या लेकर जिंदा रहेगी ?

वह अपना खौफ किसी के सामने जाहिर भी नहीं कर सकती, लेकिन, फिर भी एक व्यक्ति को उसके मन की हालत का कुछ-कुछ अंदाजा जरूर हो गया था। उसका नाम था—पार्वती चेटिया ! उस बच्चे को घर लाने के फौरन बाद ही—उसने पार्वती को उसकी देखभाल के लिए घर पर ही नियुक्त कर लिया था।

पार्वती गारो···यानी मेघालय प्रदेश की औरत थी। अभी सन् १९७१ चल रहा था। दो साल पहले खासी, जयन्तिया और गारो को मिलाकर मेघालय प्रदेश बना दिया गया। पार्वती की उम्र पैंतीस या छत्तीस। ऊंचा-लंबा कद, गठीला शरीर। पति असमय ही मर गया। उसे थोड़ा-बहुत लिखना-पढ़ना भी आता था, लेकिन नौकरी-चाकरी के लायक कोई डिग्री नहीं थी। अतः दोनों बड़े भाइयों के गले का ढोल बनने को विवश हो गई। लेकिन वह इस तरह किसी पर बोझ बनने को राजी नहीं। काम-काज की तलाश में उसने काफी दौड़-धूप की। ज्यादातर आया की नौकरी मिलती। कभी-कभी एक-डेढ़ साल के लिए नौकरी मिली भी, लेकिन वैसे ही छूट भी गई।

आखिरी दो सालों से वह अपने भाई के पास थी। कोई काम नहीं मिल रहा था। अंत में वह किसी दूर के रिश्तेदार के साथ गोहाटी चली आई। यहां बहुत सारे सरकारी-गैरसरकारी अस्पताल थे। शायद कहीं पक्की नौकरी मिल जाए। पिछले छह महीनों से वह इसी अस्पताल में थी और पक्की नौकरी के लिए शर्मिला के पीछे पड़ी थी। शर्मिला भी उस औरत को पसंद

करती। अस्पताल में उसके लिए कुछ छुट्टा काम-काज का भी इंतजाम करा दिया। पार्वती बोलती कम थी, मन लगाकर काम करती। असल में उसकी तकदीर ही दुश्मन थी, लाख कोशिशों के बावजूद उसे पक्की नौकरी नहीं मिल रही थी।

पक्की नौकरी न मिलने की खास वजह भी थी---पांव का ऐब। करीब सात-आठ साल पहले उसके पांव में जाने कैसे चोट लग गई। कुछ दिनों बाद, जख्म तो भर गया, लेकिन अब कुछ लंगड़ाकर चलती है। किसी आया में ऐसा कोई नुक्स हो तो सरकारी अस्पतालों में नौकरी मुश्किल होती है। उस पर से उम्र भी हुई। जब कोई अमीर मरीज या मरीजा अस्पताल के केबिन में भर्ती होती है, तब अपने निजी खर्च पर आया भी रखी जाती है। इतने दिनों से, शर्मिला पार्वती को इसी तरह के काम पर लगाए रही। वह किसी हफ्ते बेकार बैठी रहती, किसी हफ्ते कोई नौकरी जुट जाती।

···दुर्घटना-स्थल से उस शिशु को लेकर, शर्मिला पहले अस्पताल ही आई थी, क्योंकि मोहन हजारिका का शव पोस्ट-मार्टम के लिए अस्पताल में जमा था। पहले दिन से ही बच्चे की देखभाल का सारा जिम्मा उसने पार्वती को सौंप दिया। उन दिनों वह बेकार थी।

शाम को जब वह बच्चे के साथ घर लौटी, तब पार्वती को भी अपने साथ लेती आई। इस वक्त कुछ सोचने-विचारने की रत्ती भर भी ताकत नहीं थी। जितने दिनों वह बच्चा अपने ठौर-ठिकाने पर नहीं पहुंच जाता, उसकी देखभाल के लिए, किसी एक व्यक्ति की जरूरत पड़ेगी। पार्वती से ज्यादा योग्य और विश्वस्त और कौन मिलेगी ?

उसी दिन से पार्वती चेटिया उसके पास रह गई। अस्पताल में पक्की आया को शुरू-शुरू में जो वेतन दिया जाता है, शर्मिला ने भी पार्वती को उसी पर नियुक्त किया। वैसे खाने-पीने-रहने का हिसाब लगाया जाए, तो उस पर कुछ ज्यादा ही खर्च पड़ जाता है। पार्वती चेटिया जुबान से कुछ नहीं कहती, लेकिन मन-ही-मन शर्मिला के प्रति बेहद कृतज्ञ है।

वह उम्र में शर्मिला से आठ-नौ साल बड़ी है, लेकिन घर में नौकरी करने के बाद से ही उसे दीदीजी कहने लगी है। उस बच्चे की वजह से वे दोनों और करीब आ गईं। उसकी जुबान से डाक्टर हजारिका या मिसेज हजारिका सुनना अच्छा भी नहीं लगता। पार्वती अपनी दीदीजी के मन का चोर महसूस करती है। वैसे थोड़ी-बहुत दहशत तो खैर उसके मन में भी है। रास्ते में अचानक मिले हुए उस बच्चे से उसका भी स्वार्थ बंधा हुआ है। अगर कोई

दावेदार सचमुच आ धमका, तो वह फिर वही बेकार-की-बेकार ! वैसे भी उसने अपनी दीदीजी को जितना पहचाना है, यह बच्चा अगर रह गया, तो उसकी भी बाकी जिंदगी की अनिश्चयता मिट जाएगी। उसे अपनी दीदीजी शुरू से ही बहुत अच्छी लगी थीं, लेकिन वह इतनी उदार और स्नेही हैं, इसकी उसे जानकारी नहीं थी।

शर्मिला ने बेटे को नाम दिया—बाबुल। उसने पार्वती को बार-बार आगाह कर दिया, अखबार के विज्ञापन का हवाला देते हुए या किसी और बहाने, अगर कभी, कोई अजनबी जांच-पूछ के लिए आए, तो वह उससे जरा भी बात न करे और न बाबुल को ही सामने लाए। सबसे पहले उसे फोन करे। वैसे भी, अस्पताल या चेम्बर में चाहे वह कितने भी जरूरी काम में व्यस्त क्यों न हो, घर पर तीन-चार बार फोन करके बाबुल की खोज-खबर लेना, उसका नियम बन चुका है। शर्मिला ने गैरेज बेच दिया, सिर्फ वहां का फोन घर पर उठा लाई।

दो महीने गुजर गए। शर्मिला मन-ही-मन मनाती रही। इसी तरह दो-एक महीने और बीत जाएं तो वह निश्चिन्त हो जाए ! उसके बाद कोई खोज-खबर लेने नहीं आएगा। अखबार का विज्ञापन भी पुराना पड़ जाएगा। लेकिन अगले दो महीने गुजर जाने के बावजूद, उसके मन से आतंक की छाया नहीं मिटी। अब तो बेटा छिन जाने की संभावना के ख्याल भर से, उसकी छाती और बुरी तरह धड़क उठती। बाबुल अब टुपुर-टुपुर चलने भी लगा है, टूटे-फूटे अंदाज में पुटुर-पुटुर बोलने भी लगा है ! शर्मिला बाहर से जब लौटती है, तब वह मां-मां की गुहार लगाता हुआ, बांहें फैलाए, ठुमक कर उसकी गोद में चढ़ जाने की कोशिश करता है ! मां के गाल, छाती से मुंह रगड़-रगड़ कर मां को प्यार करता है !

शर्मिला के जिंदा रहने का अब एक ही मतलब, एक ही बहाना है—वह बच्चा ! उसके पास अब पैसों की कमी नहीं ! मां के दिए हुए, पोटली भर गहने बैंक के लॉकर में पड़े हैं। मोहन का गांव वाला घर, जमीन-जायदाद और गैरेज बेचकर मिले हुए रुपए भी बैंक में हैं। पति रेलवे-दुर्घटना में मरा था, अतः उसका मुआवजा भी मिला है। इसके अलावा उसकी मासिक आमदनी भी अब काफी है। अब वह कुछ न करे, तब भी वह अपने बेटे के साथ आराम से जिंदगी गुजार सकती है। कभी-कभी उसका मन होता है, यहां की नौकरी और प्रैक्टिस छोड़छाड़कर वह अपने बेटे और पार्वती के साथ कहीं दूर, किसी अनजानी जगह में जा बसे, जहां उनकी जान-पहचान का कोई न हो ! इसके अलावा चाहे वह जहां भी जाए, थोड़ी-बहुत प्रैक्टिस तो कहीं भी जमा सकती है। अखबार के विज्ञापन में डाक्टर मिसेज हजारिका का नाम

था। कहीं और जिंदगी शुरू की, तो हजारिका नाम भी मिटा देगी। डाक्टरी सर्टिफिकेट में उसके नाम में हजारिका नहीं जुड़ा था। जहां वह नया घर बनाएगी, वह फिर शर्मिला बरकाकुती नाम ओढ़ लेगी।

एकमात्र पार्वती चेटिया ही थी, जिससे वह मन की बात कह-सुन सकती थी। किसी से कुछ कहे-सुने बिना, अगर कहीं चल दिया जाए तो कैसा रहे—इस बारे में उसने उससे भी सलाह ली।

उसने कहा, 'सुनो पार्वती, यहां अब अच्छा नहीं लग रहा!' शर्मिला ने जाने या अच्छा न लगने की वजह तो नहीं बताई, लेकिन वह अंदाजा लगा सकती थी। वह फौरन तैयार हो गई। दीदीजी के मन में छिपे हुए खौफ की वजह से वह भी अंदर-ही-अंदर बौखलाई रहती थी। इस मसले के साथ, उसका सिर्फ स्वार्थ ही नहीं जुड़ा हुआ था, अब वह बच्चा उसकी भी आंखों का तारा बन गया था। उसे छोड़कर भला वह भी कैसे रह सकती है!

लेकिन किसी अकारण भय से, यह जगह छोड़कर, चोरों की तरह भाग जाने का इरादा, शर्मिला ने खुद ही रद्द कर दिया। नहीं, यह शराफत नहीं होगी! सारी जिंदगी वह अपराध-बोध से बेचैन रहेगी! इसमें उसका या उसके बेटे—किसी का भी मंगल नहीं होगा। जिंदगी में उसने कभी झूठ का सहारा नहीं लिया। बल्कि भागने का ख्याल, उसे अपनी ही नजर में कहीं से छोटा कर गया। सत्य का सहारा लिए रहो, तो कभी कहीं, कुछ भी नहीं खो सकता! हां, सत्य ही उसका एकमात्र सहारा है।

वैसे उसका स्वस्थ दिलो-दिमाग यह भी बखूबी समझ गया था कि जब चार-पांच महीने गुजर गए, अब कोई उसकी पूछताछ करने नहीं आ सकता! किसी दूर की रिश्तेदारी का सूत्र थामे, कोई बच्चे पर दावा करे, इतनी गरज आखिर किसे है? अगर किसी को सचमुच गरज होती, तो अब तक जरूर हाजिर होता। मान लो, अगर कोई रिश्तेदारी निकालकर आ भी गया, तो भला वह इतनी आसानी से बाबुल को कैसे छीन सकता है? इतने दिनों बाद, अगर कोई आया, तो समझना होगा, वह जरूर रुपए-पैसे के लोभ में आया है। जरूरत पड़ी तो वह रुपए-पैसे देकर भी उसे दफा कर देगी!

हां, अब वह इसी सीधे-सादे सच पर निर्भर करती है। इसके अलावा, सामने दीवार पर टंगी मोहन की बड़ी-सी तस्वीर भी उसे भरोसा देती रहती है।

कभी-कभी उस तस्वीर की तरफ देखती हुई, वह मन-ही-मन उससे बातें भी करती, 'सुनो, क्या खूब शरारत सूझी तुम्हें! बाबुल को मेरे पास भेज कर खुद तो मजे से चले दिए! अब अगर तुम्हें नहीं लौटना है, तो तुम्हारे सौंपे हुए बाबुल को, मुझसे छीन लेने का दुस्साहस भला कौन कर सकता है?'

मानो तस्वीर में मोहन के चेहरे और आंखों में मीठी-शरारती हंसी झरती रहती।

इसी तरह पूरे पांच साल गुजर गए। शर्मिला के लिए अब भय-डर की कोई वजह नहीं रही। पार्वती चेटिया भी निश्चित हो आई। लोग-बाग भी पुरानी बातें भूल-भुला गए। नए लोग यही समझते, डाक्टर मिसेज हजारिका के पति नहीं रहे, एक बेटा है, खिले फूल-सा, नन्हा-नटखट बेटा, बाबुल—बाबुल हजारिका! बाबुल ने छठा पार करके अब सातवें वर्ष में कदम रखा है। जितना सुंदर है, उतना ही शैतान। मां भी जितना उसे प्यार करती है, उतना ही कड़े अनुशासन में भी रखती है। वह रोज नियम से, उसे दो घंटे पढ़ाती है। पढ़ाने के लिए उसे खेलने का नाटक करना पड़ता है। साल-भर से उसे एक नर्सरी स्कूल में दाखिल कराया गया है। पार्वती ही उसे पहुंचाने-लाने जाती है। मां से ज्यादा अपनी आंटी से उसका झगड़ा, प्यार, मान-मनुहार का खेल चलता है।

आंटी ने ही वर्षों पहले उसे दीवार पर टंगी तस्वीर दिखाकर, बापी की पहचान कराई थी। उसी दिन से वह रोज सुबह-सवेरे, सोकर उठने के बाद, अपने बापी की तस्वीर की तरफ देखकर 'गुड-मार्निंग' करता है। उसके बाद बाकायदा हाथ जोड़कर प्रणाम करता है। शाम को सैर के वक्त या स्कूल में अगर कोई उसके पापा के बारे में पूछता है, वह गंभीर मुद्रा में जवाब देता है—'बापी इज इन हेवेन!—स्वर्ग में हैं!'

अब जाकर पार्वती को भी जिंदगी में सुख के दिन नसीब हुए हैं। इसलिए नहीं कि अब वह पहले से दुगना वेतन पाने लगी है, वेतन की तो वह खास खोज-खबर भी नहीं रखती। महीना खत्म होते ही, दीदीजी उसकी तनख्वाह, उसके नाम बैंक में जमा कर देती हैं। पास-बुक भी दीदीजी के पास रहती है। इतने सालों में उसके नाम कितने हजार रुपए जमा हो गए, यह भी ठीक तरह याद नहीं। कभी किसी तीज-त्योहार या किसी की ब्याह-शादी पर, मेघालय भाइयों को रुपए भेजने के लिए, जब वह बैंक से रुपए निकालने की बात कहती, दीदीजी वे रुपए अपने ही पास से निकालकर दे देतीं, बैंक से रुपए नहीं निकालने देतीं। इतने सालों में कुल जमा दो बार भाइयों के यहां गई है। अब वहां उसकी खूब कद्र होती है। उसकी खातिरदारी में कोई कमी नहीं होती। लेकिन पार्वती एक बार भी चार-पांच दिन से ज्यादा नहीं रह पाई। उसका मन ही नहीं लगता। इसके अलावा उसमें दायित्व-बोध भी है। वह जानती है, उसकी अनुपस्थिति में यहां की गृहस्थी बिल्कुल अचल हो जाएगी। अतः ज्यादा दिन

रहने का सवाल ही नहीं उठता।

शर्मिला हजारिका भी अब बत्तीस पार करके तैंतीसवें साल में कदम रख चुकी है। लेकिन उसे देखकर यही लगता है कि उसकी उम्र कहीं एक जगह ठिठक कर ठहर गई है। उसके अंग-अंग में संयम और शुचिता का दिव्य स्पर्श है। बस, हर वक्त काम में डूबी रहती है। हां, बाहर काम और घर में बाबुल—बस, ये ही दो बातें उसे राहत देती हैं। उसके स्निग्ध संयम और सौम्य व्यक्तित्व की लक्ष्मण-रेखा पार करके कोई उसके करीब आने का साहस नहीं कर पाता। हालांकि, अभी भी कई-कई लोग आने को बेचैन और उन्मुख हैं। उसकी तरफ से अगर उन्हें जरा भी प्रश्रय मिलता, तो वे धन्य हो जाते। लेकिन उसने कभी किसी को प्रश्रय नहीं दिया। अगर वह चाहती, तो उसके लिए सुयोग्य साथी की कमी नहीं थी। अगर बाबुल उसके जीवन में न आता, तो भी उसके मन में किसी साथी की चाह पैदा होती या नहीं यह बताना मुश्किल है। जो उसकी जिंदगी में आया था, उसके चले जाने के बाद भी, उसके प्रति स्नेह-ममता मिटी नहीं थी। आज वह नहीं है, उसकी जगह बाबुल है। किसी सुयोग्य साथी के अभाव को न पहले उसने दिल में जगह दी, न आज देने को राजी है।

उस शाम···वह अपने चेम्बर में मरीज देख रही थी। टेलिफोन पर पार्वती ने धीमी आवाज में बताया, 'अभी-अभी एक अपरिचित आया है। उसे पहले कभी नहीं देखा। आते के साथ वह सीधे कमरे के अंदर घुसा चला आया। आपको पूछा। बाबुल आपका बेटा है, सुनकर उसको भी खूब लाड़-दुलार किया। उसके बापी के बारे में भी पूछ रहे थे!' पार्वती सख्ती बरतते हुए, उन्हें बगल वाले कमरे में ले गई है। बाबुल को रोक रखा है। बगल वाले कमरे से वह भले आदमी बाबुल को दुबारा आवाज पर आवाज दिए जा रहे हैं। पार्वती ने उनका नाम भी पूछा। लेकिन उन्होंने उसे टालते हुए कहा, 'तुम मुझे नहीं पहचानोगी! चेम्बर में फोन करके उसे पकड़ो! मैं खुद उससे बात करूंगा।'

शर्मिला किसी आशंका से कांप उठी। उसकी छाती बेतरह धड़कने लगी। आखिर कौन हो सकता है, वह अंदाजा नहीं लगा पाई। हालांकि उसकी बातों से लग रहा है, वह कोई परिचित व्यक्ति भी हो सकता है! लेकिन···पार्वती भी जिसे नहीं पहचानती, ऐसा भला कौन हो सकता है?

उसने पार्वती से कहा, 'अच्छा, जाओ! उनका नाम पूछ आओ! कहना, मैंने ही जानना चाहा है। चूंकि फोन बेडरूम में है, इसलिए पहले नाम जानना

जरूरी है।

कुछ ही पलों में पार्वती ने लौट कर नाम बताया—डॉक्टर विश्वनाथ भट्टाचार्य !

शर्मिला विस्मय और खुशी से भर उठी। उसने कहा, 'हां-हां, वह बिल्कुल अपने आदमी हैं ! उन्हें फोन दो। और सुनो, मैं आधे घंटे में चेम्बर बंद करके आती हूं, तब तक तुम उनकी खातिर-वातिर करो। बाबुल को भी उनके पास भेज दो। और हां, बढ़िया-सी चाय-नाश्ते का इंतजाम कर डालो।'

पार्वती रिसीवर रखकर डॉक्टर भट्टाचार्य को बुलाने चली गई। शर्मिला बेसब्री से फोन पर कान लगाए रही।

मिनट-भर बाद ही डॉक्टर भट्टाचार्य की आवाज सुनाई दी, 'हलो'''यानी पहचान का आदमी ही निकल आया मैं ?'

'कमाल है !' शर्मिला ने खुशी से उमड़ते हुए कहा, 'आपने अपना नाम तक नहीं बताया ! मैं भला कैसे पहचानती ?'

पार्वती दरवाजे पर ही खड़ी थी। उसकी तरफ देखते हुए डॉक्टर भट्टाचार्य ने जवाब दिया, 'भई, मेरे स्वागत के लिए जो लड़की, तुम्हारे बेटे की चौकीदारी में है, उसकी सूरत से यही जाहिर हो रहा था मानो सई-सांझ घर में किसी डाकू ने हमला कर दिया हो ! इसीलिए मैंने भी नाम नहीं बताया, जरा मजा ले रहा था !'

'बड़ा अच्छा कर रहे थे ! अब फोन रखती हू, आप आधे घंटे बैठिए। यहां बस, दो मरीज और रह गए हैं, उन्हें चटपट निपटाकर मैं भागकर आती हूं ! आप चले मत जाइएगा !'

'कोई बात नहीं ! तुम इतमिनान से आओ !'

शर्मिला आधे घंटे से भी पहले ही पहुंच गई। गाड़ी से उतरकर कमरे में जाते हुए उसने देखा, पार्वती दरवाजे पर ही खड़ी है।

उसे देखकर, वह पास चली आई और दबी आवाज में कहा, 'मेहमानजी ने सिर्फ एक प्याली चाय के अलावा और कुछ नहीं लिया। बाबुल को गोद में समेटे, चुपचाप बैठे हैं।'

पार्वती ने उनकी चुप्पी की वजह भी बताई, 'मेहमानजी जब आए थे, तब काफी खुश-खुश थे। बाबुल से उसके बापी के बारे में पूछने पर, वह उन्हें बेडरूम में खींच ले गया और वह तस्वीर दिखाते हुए बोला—बापी इज इन हेवेन ! यह सुनने के बाद से ही वह जाने कैसे तो चुप से हो गए ! मुझसे भी पूछा था। मैंने सिर्फ इतना ही बताया कि साहब रेल-दुर्घटना में चल बसे।'

शर्मिला ने एक गहरी सांस ली और होंठों पर सायास मुस्कान खींचकर कमरे में दाखिल हुई। उसने कहा, 'वाकई, आपने सरप्राइज दिया ! पार्वती से

जब तक आपका नाम नहीं सुना, मैं सोच भी नहीं सकता था कि आप आए हैं !'

डॉक्टर भट्टाचार्य एक बार उसे आपादमस्तक देखते रहे। ब्याह के पहले जैसा कुंवारा वेश ! जो न जानता हो, वह कल्पना भी नहीं कर सकता कि इस लड़की की जिंदगी में इतना बड़ा हादसा गुजर चुका है।

उन्होंने जबरन हंसने की कोशिश की, लेकिन फिर भी हंसी नहीं आई। उन्होंने बामुश्किल कहा, 'हां, सरप्राइज हम दोनों के लिए ही है ! यहां आकर जो सुना, अगर न आता, तो शायद बेहतर होता !'

बाबुल ने ऐलान किया, 'मम्मी, अंकल बहुत अच्छे हैं !'

'हां, हां, बहुत अच्छे हैं ! चल, बहुत गप्पें मार लीं ! अब जाकर खेल आ !'

बाबुल आंटी को खोजता हुआ कमरे से बाहर चल दिया।

डॉक्टर भट्टाचार्य ने पूछा, 'यह हादसा हुआ कब ?'

शर्मिला ने बेहद सहज भाव से बात को टालते हुए कहा, 'बहुत दिन हो गए ! जब बाबुल कुल आठ-नौ महीने का था।'

'अरे !' डाक्टर भट्टाचार्य की आवाज में रंज उभर आया, 'मुझे तो पता ही नहीं था…'

शर्मिला ने फौरन प्रसंग बदलते हुए पूछा, 'आप कब आए ? यहीं ज्वाइन किया है न ?'

डाक्टर भट्टाचार्य हंस पड़े।

उनकी हंसी का मतलब थोड़ी देर बाद ही जाहिर हो गया।…करीब दो साल हुए उन्हें स्वदेश लौटे ! इन दिनों वह अरुणाचल के किसी छोटे-से शहर में नौकरी कर रहे हैं। शहर का नाम है—दिरांग। अभी भी उस जगह को ठीक शहर नहीं कहा जा सकता…शहर बन रहा है।

शर्मिला हैरान रह गई। देश-विदेशों में इतने तजुर्बे के बाद, अंत में वह अरुणाचल में जा बसे ! जिसका दो-तिहाई बियावान जंगल है और लगभग सारा कुछ बर्फ से आच्छादित।

उनके इस निर्णय की वजह भी सुनी। ना, उन पर किसी ने जबर्दस्ती नहीं की। भारत सरकार की अपील पर उन्होंने खुद ही यह ऑफर मंजूर कर लिया। इससे पहले उन्होने घूम-घूमकर वह जंगल और बर्फ का देश देख डाला। वहां लाखों-लाखों आम इंसान सिर्फ प्रकृति की मेहरबानी पर जिंदगी का दामन थामे हुए हैं। न दवा-दारू, न इलाज…और फिर भी बिना किसी शिकायत के, दूर-दराज गांवों के लोग पटापट दम तोड़ देते हैं। चूंकि वह सीमांत प्रदेश है, अतः सीमा की पहरेदारी के लिए बारहों महीने वहां फौजी-

कैंप लगा रहता है। दक्षिणी असम के अलावा, बाकी तीनों तरफ देश की सीमांत-रेखा ! अतः वहां ज्यादातर मिलिटरी के जवानों का ही बोलबाला है। हाल मे वहा जो थोडी-बहुत तरक्की हुई है, वह भी उन जवानों की मेहनत और कोशिशों का ही नतीजा है।

मिलिटरी, शिक्षित लोगों और पदस्थ कर्मचारियों की सुविधा का, कमोबेश पूरा पूरा इंतजाम है। लेकिन चूंकि दुर्गम रास्ता है, अतः दूर-दराज गांवों के दीन-हीन-गरीब इंसान, साल-भर में, जाने कितनी-कितनी बार, इस सभ्य इलाके से कटकर, अलग हो जाते हैं। दैवी प्रकोप तो लगा ही रहता है। समूचे अरुणाचल मे लगभग तीन हजार गांव हैं, जहां हर तीन सौ व्यक्ति के लिए कम-से-कम एक डाक्टर की जरूरत होनी चाहिए, वहां तीन हजार लोगों पर भी, एक डाक्टर मयस्सर नही। अस्पताल भी इतनी दूर-दूर हैं कि बहुत-से लोगो की पहुच के बाहर।

भारत सरकार तो और भी कई सिविल अस्पताल खोलना चाहती है। आस-पास के गांवों के लिए, निकटतम छोटे शहरों मे कम-से-कम एक-एक अस्पताल का इंतजाम किया जा रहा है। हर अस्पताल के मातहत दो-तीन चेन-कैंप होंगे। इन चेन-कैंपो मे एक डिप्लोमाप्राप्त डॉक्टर और एक-एक कंपाउंडर बहाल किए जाएंगे। यानी इतने सारे गांवों के मरीजो को मुख्य अस्पताल नही दौड़ना होगा। उनकी बीमारी समझकर, जरूरत पड़ी तो ये कैंप ही उन्हें मुख्य अस्पताल मे भेजने का इतजाम करेंगे। ये कैंप, छोटे शहरों की देख-रेख मे चलाए जाएंगे और इन अस्पतालो को बड़े शहर के अस्पताल से जरूरी मदद मिलती रहेगी।

भारत सरकार ने लोगो के आने-जाने के लिए सडक बनाने की भी योजना बना ली है और इस मामले मे उसने सैनिक जवानों से हाथ मिलाया है। सैनिक जवानो ने सड़क बनाने की जिम्मेदारी अपने कधो पर ले ली है।

डॉक्टर भट्टाचार्य का अस्पताल बोमडिला से पाच सौ मील दूर, करीब दो हजार फुट नीचे एक छोटे-से शहर दिराग के बीचोबीच स्थित है। उन्होंने इस अस्पताल को केंद्र बनाकर, उसके आगे-पीछे के गांवों के लिए कम-से-कम दो चेन-कैंप बनाने का सकल्प लिया है। य् शहर के बाद वाले गावो के लिए वह एक और कैंप भी शुरू करना चाहते हैं ताकि दूर-पास के बीस-बीस गांवों से भी संबध कायम हो सके। लेकिन अभी तक सिर्फ एक ही कैंप शुरू कर पाए हैं। डॉक्टरों का अभाव है। वैसे वहां जाने वालों को वेतन जरूर कुछ ज्यादा ही मिलता है, लेकिन जहां प्राइवेट प्रैक्टिस का सवाल नहीं उठता, वहां वेतन थोड़ा बढ़ भी जाए, तो भी किसे गरज पड़ी है ? जब तक लोक-सेवा का स्वय-सकल्प न हो, इतना धक्का भला कौन बर्दाश्त करेगा ?

स्थायी डॉक्टर मिलना मुश्किल है। हां, साल-दो साल के लिए ही सही, एक दो उत्साही नौजवान डाक्टरों को जुटाया जा सके, वह इसी चक्कर में गोहाटी आए हैं।

उन्होंने अचानक आग्रह-भरे स्वर में शर्मिला से कहा, 'तुम भी मेरी ही तरह बदकिस्मत हो गईं, तुम चलोगी ? अगर तुम्हारा मन वहां लग सके, तो तुम्हें वहां बहुत अच्छा लगेगा। अपना दुःख-दर्द भी बहुत साधारण लगेगा; यह मैं दावे के साथ कह सकता हूं।···लेकिन हां, प्राइवेट प्रैक्टिस में, तुम यहां शायद बहुत ज्यादा कमा लेती होगी ! ऐसा करो, पहले तुम एकाध साल के लिए ही 'ऑफर' लो ! ऐसा खास नुकसान नहीं होगा। अगर तुम चाहोगी, तो सरकार शायद तुम्हें कुछ अतिरिक्त सुविधा देकर यहां से रिलीज कर देगी।'

ना, नुकसान या अतिरिक्त सुविधा की उसे कोई परवाह नहीं। अगर वह नौकरी या प्रैक्टिस न करे, तो भी उसका आराम से चल जाएगा। इस एकरस जीवन से वह खुद भी ऊब गई है। कुछ साल पहले, वह खुद भी खौफ के मारे यहां से भाग जाना चाहती थी। अब पांच-छह साल गुजर गए, वह डर भी मिट गया। लेकिन डॉक्टर भट्टाचार्य का प्रस्ताव सुनकर उसके मन में एकबारगी लोभ हो आया। लेकिन अचानक कहीं दुविधा भी जाग उठी। उसने कहा, 'लेकिन मेरा बेटा···? उसकी लिखाई-पढ़ाई ?'

डॉक्टर भट्टाचार्य की राय में यह तो कोई समस्या ही नहीं थी। वहां अंग्रेजी मीडियम वाला बेहतरीन स्कूल है। बल्कि वहां वह अपने बेटे की देख-भाल में ज्यादा समय दे सकेगी। उसका बेटा अगर उस प्राकृतिक माहौल में रहकर इंसान बन सका, तो उसे अपने पैरों पर खड़े होने में कोई दिक्कत नहीं होगी।

डॉक्टर भट्टाचार्य अभी तीन दिन तक वहीं रहेंगे। शर्मिला ने सोचने के लिए वक्त मांगा। जितना-जितना सोचा, जाने की चाह बड़ी होती गई। नहीं, अब वह किसी अनागत आशंका या किसी सच्चाई के खौफ से भाग नहीं रही है। जिंदगी की एकरसता को तोड़ने के लिए, उसे भी थोड़े-से नयेपन की जरूरत है। शुरू में वह साल-भर का कांट्रैक्ट लेकर ही जाएगी, अच्छा नहीं लगा तो लौट आएगी।

इस मामले में डॉ० भट्टाचार्य कुछ ज्यादा ही उत्साहित दिख रहे थे। शायद इसीलिए वह खुश होने के साथ-साथ कहीं से थोड़ी आशंकित भी हो उठी। डॉक्टर साहब उससे उम्र में दस वर्ष बड़े ही होंगे। शर्मिला के लिए कम-से-कम अब यह कोई समस्या नहीं थी। लेकिन यह मित्रवत् संबंध अंतरंगता की ओर खिचने लगे, यह वह हरगिज नहीं चाहती थी। लेकिन अगर

कहीं उन्होंने ही करीब आने की कोशिश की, तो ?

शर्मिला ने इस प्रसंग को घुमा-फिराकर आखिर डॉक्टर साहब के सामने रख ही दिया। उसने कहा, 'सुनिये, यहां मैं बहुत मजे में हूं। रुपए भी काफी कमा रही हूं। लेकिन यहां मन नहीं लगता। अब मैं अपनी बाकी जिंदगी बाबुल और अपने काम में डूबे रहकर चैन से गुजार देना चाहती हूं। वैसे यहां मेरे लिए सुख-चैन की कमी तो नहीं, लेकिन और ज्यादा का लोभ मुझे घेरे हुए है, मैं जानती हूं। शायद इसीलिए कभी-कभी मन होता है, यहां से चल दूं!'

डॉक्टर भट्टाचार्य कुछेक पल को उसका चेहरा पढ़ते रहे। उसके बाद एकदम से सवाल किया, 'तो अब तुम्हारे सामने समस्या क्या है···? कहीं मुझे लेकर तो नहीं ?' उन्होंने जोर का ठहाका लगाकर कहा, 'मुझे जिंदगी का बहुत बड़ा मतलब मिल गया है, शर्मिला!···इसलिए तुम मेरी तरफ से निश्चिंत रह सकती हो!'

शर्मिला संकोच से गड़ गई। उसने मन ही मन अपने को सैकड़ों लानतें भेजीं। ना, अगर ऐसी कोई बात होती, तो उसके ब्याह से पहले ही सामने आ जाती।

डॉक्टर भट्टाचार्य ने दुबारा कहा, 'तुम मुझे अच्छी लगती हो, यह सच है! लेकिन इस वजह से तुम्हारी शान में कोई गुस्ताखी नहीं होगी, तुम्हें भीख देने की जरूरत नहीं। मन में किसी तरह की दुविधा या खौफ हो, तो मत जाना!'

शर्मिला ने आगे बढ़कर, उनके पांव छूकर प्रणाम करके कहा, 'मैं चलूंगी! आप इंतजाम कर दीजिए।'

इसके बाद, दुनियावी सोच-विचार, सलाह-मशविरे हुए। अभी ठंड का मौसम है! यही सबसे ज्यादा तकलीफ और मुसीबत के दिन हैं। उस नन्हे-से बच्चे को लेकर, अभी वहां जाने का सवाल ही नहीं उठता। अप्रैल से पहले नया कैंप भी तैयार नहीं होगा।

अतः अप्रैल के मध्य में, यानी चार महीने बाद, उसके जाने का पक्का इंतजाम हो गया। डॉक्टर भट्टाचार्य ने भी फिलहाल साल-भर के कॉन्ट्रैक्ट की बात की। वहां मन लग जाए, और बच्चे को वहां का मौसम सूट कर जाए, तो कॉन्ट्रैक्ट की अवधि बढ़ा दी जाएगी। वह यहां के अस्पताल के उच्चाधिकारियों से भी बातचीत पक्की कर गए। पार्वती को भी काफी मोटी तन्खाह का लालच दे गए! कैंप के लिए वहां प्रशिक्षित नर्सों की बेहद कमी है। शर्मिला की प्रशिक्षित परिचारिका की हैसियत से, उसे भी काफी अच्छी तन्खाह मिलेगी—रहने-खाने का खर्च अलग! वैसे चूंकि वह अपनी दीदीजी के पास ही रहेगी, इसलिए उसे फायदा-ही-फायदा रहेगा।

बाबुल अभी नासमझ है ! शर्मिला और पार्वती रोमांच से भर गईं ! ये बीच के चार महीने उन दोनों के लिए काफी लंबे हो आए।

लेकिन अभी महीना-भर भी नहीं गुजरा कि नीले आसमान से अचानक मानो बाज गिरा हो ! शर्मिला चकित और विमूढ़ हो आई। यह खबर सच है या झूठ, इसकी जांच-पड़ताल से पहले ही, वह किसी अजाने अंधेरे में गले-गले तक डूब गई।

पार्वती के मंझले भाई की बेटी का ब्याह था, उसका मेघालय जाना बेहद जरूरी हो आया। भाई की जोरदार सिफारिश ! कम-से-कम दो-चार दिनों को वह ब्याह में जरूर आए। शर्मिला ने भी कोई आपत्ति नहीं की। वैसे भी, वह बहुत दिनों से अपने गांव नहीं गई थी। तीन महीने बाद, नई जगह जाने के बाद, फिर जाने कब इन रिश्तेदारों से मिलना हो ! पार्वती हफ्ते-भर में लौट आने का वायदा करके चली गई। लेकिन दस दिन हो गए, उसके लौटने के कोई आसार नहीं ! ऐसा कभी नहीं हुआ ! उसकी सारी माया-ममता तो इस घर से बंध गई है, हमेशा वह निश्चित दिन से बहुत पहले ही लौट आया करती थी। कहीं वह बीमार तो नहीं हो गई, शर्मिला चिंतित हो उठी। अचानक यदि वह बीमार भी पड़ गई, तो कम-से-कम उसे एक खत तो डाल देना चाहिए था !

पार्वती पूरे बारह दिनों बाद लौटी। ब्याह के हंगामे से लौटी थी, लेकिन चेहरा मुर्झाया हुआ। शर्मिला ने सबसे पहले उसकी तबीयत का हाल पूछा। पार्वती ने सिर हिलाकर उसे आश्वस्त किया, वह बिल्कुल ठीक है ! उसने अपनी तरफ से बातचीत का कोई आग्रह नहीं दिखाया, अतः शर्मिला ने भी खास पूछ-ताछ नहीं की। पार्वती ने ही बताया, उसकी भतीजी का ब्याह वगैरह भी अच्छी तरह निपट गया।

दो-तीन दिन गुजर गए, लेकिन उसका चेहरा उसी तरह सूखा-सूखा, चुपचाप अपने काम में डूबी हुई। खैर, वैसे भी वह बातचीत बहुत कम करती, लेकिन इन दिनों बच्चे तक से भी उसने हंसना-बोलना छोड़ दिया था। हर वक्त किसी गहरी परेशानी में डूबी हुई।

आखिरकार, शर्मिला ने एक दिन खुद ही बात छेड़ी, 'तुमको हुआ क्या है, बताओ तो ! गांव से लौटने के बाद से ही, तुम हर वक्त बेहद परेशान दिखती हो, बात क्या है ?'

पार्वती ने स्वीकार किया कि कई दिनों से वह दीदीजी को कुछ बताना चाहती है, लेकिन अजीब दुविधा में फंस गई है। दीदीजी से उसे कुछ बेहद जरूरी बातें करनी हैं।

'क्या बात है?' शर्मिला ने चकराकर पूछा, 'बाहर इतनी दूर जाकर रहने में तुम्हें कोई परेशानी हो रही है?'

पार्वती ने कहा, 'नहीं दीदीजी, जब तक आप और बाबुल हमारे साथ हैं, हमको दुनिया में कहीं जाकर रहने में कोई परेशानी नहीं। मैं तो आपके और बाबुल के लिए परेशान हूं। लेकिन···हो सकता है, मुझे गलतफहमी हुई हो, शायद मैं बेमतलब ही परेशान हो रही हूं!' शर्मिला धक् से रह गई।

पार्वती के बड़े भइया वहीं नौकरी करते हैं, जमीन की खरीद-बिक्री में दलाली भी करते हैं। भतीजी के ब्याह के दौरान ही, उन्होंने एक मकान की बिक्री में मध्यस्थता की थी। मकान के मालिक अरुणाचल में कहीं मिलीटरी अफसर हैं। ब्याह के उत्सव के वक्त हाथ में मोटी रकम पाकर उसके भइया भी खुश हो गए। बातों-ही-बातों में उस घर के मालिक की बदनसीबी का जिक्र भी उन्होंने किया। करीब छह साल पहले किसी रेल-दुर्घटना में उसकी बीवी और आठ महीने का बच्चा चल बसे। उसकी बीवी मेघालय से चलकर असम के किसी रिश्तेदार से मिलने आई थी! वहां से गौहाटी आते हुए, ट्रेन-दुर्घटना में सारा खेल खत्म!

शर्मिला भी सारी कहानी सुनकर पत्थर हो आई।

···ब्याह के शोर-गुल में पार्वती कोई खास खोज-खबर भी नहीं ले पाई। लेकिन ब्याह से उसका जी उचट चुका था। काम-काज निपट जाने पर, उसने बड़े भइया से भी बिना कुछ कहे-सुने, खुद ही उस घर का पता-ठिकाना खोज निकाला। उस घर के पुराने आस-पड़ोस वालों से दोस्ती गांठकर, जितनी कुछ खोज-खबर हासिल कर सकी, उससे उसकी परेशानी और बढ़ गई। वह अपनी आंखों से ही देख आई है। उनका घर-मकान, काफी बड़ा है। काफी जमीन-जायदाद भी है। मालिक का नाम है दिलीप डेका। वह मिलिटरी इंजीनियर हैं! सरकार से जरूरी निर्देश पाकर वह अपनी बीवी-बच्चे को अपनी बूढ़ी मां के यहां छोड़कर, पश्चिम पाकिस्तान चले गए थे। यह सब १९७१ की बात है। उन दिनों पश्चिम में भी युद्ध चल रहा था।

बूढ़ी मां को ट्रेन-दुर्घटना में बहू और बच्चे की मौत की खबर पांच दिन बाद मिली। मुमकिन है, वह जिस रिश्तेदार के यहां गई थी, उन्होंने या गौहाटी में जिनके पास जानेवाली थी, उन्होंने खोज-खबर लेने के बाद, उन्हें सूचना दी हो। वहां के मिलिटरी दफ्तर के मार्फत यह खबर पाकिस्तान, दिलीप डेका को भी भेजी गई। बेटे की इंतजार में बेचारी बुढ़िया आखिरी

सांसें गिनती रही। उसके बाद, उसने भी आंखें मूंद लीं। उसके बेटे के पास यह खबर भी भेजी गई।

…लेकिन करीब दो साल बाद पता चला, उन साहब को कोई तार वगैरह नहीं मिला, क्योंकि वह युद्धबंदी के रूप में लाहौर जेल में दिन बिता रहा था। इतने सालों बाद जेल से छूटते ही, उन्हें यह बुरी खबर मिली। करीब आठ-दस दिनों के लिए, वह अपने गांव आए थे। लेकिन उन्होंने न किसी से हेल-मेल किया, न बातचीत। पांच-छह महीनों बाद वह दुबारा आए और पार्वती के भाई के आगे घर बेचने का इरादा जाहिर किया। इतने दिनों बाद वह घर भी बिक गया।

पार्वती के सीने पर मानो हथौड़े पड़े हों!

शर्मिला ने उसे तीखी निगाहों से बेंधते हुए पूछा, 'इसमें तुम्हें डरने की क्या बात है? यह तो सच है कि एक्सिडेंट में बहुत सारी औरतें-बच्चे मरे होंगे। तुमने बाबुल के बारे में किसी से कुछ कहा तो नहीं?'

पार्वती ने आहत-भाव से सिर हिला दिया। ना, उसने किसी से एक शब्द भी नहीं कहा। उनके बेटे के गले की जंजीर में एक लॉकेट भी था, जिसमें 'डी' खुदा हुआ था। इसीलिए वह ज्यादा आशंकित हो आई। कहते हैं, डेका-परिवार में उस बच्चे का अन्नप्राशन भी काफी धूमधाम से हुआ था। बाप ने बहुत सारे रुपए खर्च किए थे। उसके तीन दिनों बाद ही, जरूरी निर्देश पर उसे जाना पड़ा था।

शर्मिला जब थोड़ी आत्मस्थ हुई तो उसने अरुणाचल जाने का इरादा रद्द कर देने का फैसला किया। डॉक्टर भट्टाचार्य का ठिकाना उसे मालूम है। ना, उन्हें कोई वजह बताए बिना सिर्फ इतना ही लिख देना काफी होगा कि उसका जाना संभव नहीं है।

लेकिन दिन गुजरते गए, उसका खत लिखना टलता रहा। हालांकि अंदर-ही-अंदर उसकी परेशानी दिनोंदिन बढ़ती जा रही थी। उसका न जाने का इरादा, ज्यों-ज्यों मजबूत होता जा रहा था, उतना ही वह अपने को छोटा महसूस कर रही थी। लेकिन जब उसे बाबुल के छिन जाने का ख्याल आता, उसकी यंत्रणा बर्दाश्त के बाहर हो जाती।

होगा। उसके बारे में सोच-सोचकर वह बेकार सिर-दर्द मोल ले रही है
डॉक्टर भट्टाचार्य तक को यही मालूम है कि बाबुल उसका सगा बेटा है
अरुणाचल पहुंचकर वह क्या बाबुल के बारे में डुगडुगी पिटवाकर, दिलीप डेक
को खोजती फिरेगी ? इसके अलावा लॉकेट में खुदा हुआ 'डी' अक्षर मिलता
जुलता है, बस, इसी वजह से यह मान लेना होगा कि बाबुल उसका वाक़
है ? रेल-दुर्घटना की खबर अखबारों में सुर्खियों में प्रकाशित हुई थी। लेकि
उसके पास सिर्फ उसी अखबार की कुछेक प्रतियां बच रही हैं, जिसमें वह
इश्तेहार छपा था। उसका मन हुआ, वह अखबार के किसी बड़े दफ्तर में
जाकर पिछली फाइल उलट-पलटकर यह पता करे कि उस रेल-दुर्घटना में छह
से लेकर आठ महीने की उम्र के कितने बच्चे मरे थे। जहां तक उसे याद
पड़ता है, अखबारों में ऐसे बच्चों की बहुत-सी तस्वीरें छपी थीं, जिन्होंने अपनी
मां की गोद में दम तोड़ दिया था।

अंततोगत्वा शर्मिला मन की इस कमजोरी को झाड़ फेंकने में कामयाब हो
गई। हां, वह जाएगी ! उसके बाद, उसका सच, उसे जहां ले जाकर खड़ा
कर देगा, वह सिर झुकाकर अपनी नियति को कबूल कर लेगी।

किसी निश्चित फैसले पर पहुंचने के बाद, कम-से-कम उसकी विवेक-पीड़
थोड़ी कम हो गई। दिलीप डेका नामक अनजाने-अचीन्हे शख्स के बारे में किंचित
कुतूहल भी जाग उठा। वैसे भी जो लोग विवेक-सम्पन्न और समझदार होते
हैं, उनके मन में ऐसा कुतूहल स्वाभाविक ही है।

असम के तेजपुर से साठ किलोमीटर का रास्ता तय करने के बाद है—भालु-
कपोंग। शर्मिला बाबुल और पार्वती के साथ वहां तक ट्रक से आई। डॉक्टर
भट्टाचार्य ने सूचना भेजी थी, वहां उनके स्वागत के लिए वह खुद उपस्थित
रहेंगे। यही है देश की दक्षिणी सरहद। यहीं से अरुणाचल का इलाका शुरू
होता है। यहां से सिविल और मिलिटरी, दोनों ही तरह की बस्तियां शुरू
हो जाती हैं। डॉक्टर भट्टाचार्य ने बताया, यहां अधिकांश हिस्सों में मिलिटरी
जवान ही अधिक नजर आते हैं।

मिलिटरी का जिक्र आते ही, शर्मिला को किसी अदेखे-अजनबी का नाम
याद आ गया। इस इलाके में मिलिटरी सैनिकों का जमघट है, यह सुनकर
उसे अंदर-ही-अंदर कहीं घबराहट भी हुई। अगले ही पल उसने जबरन अपनी
आशंकाओं को झटक दिया।

डॉक्टर भट्टाचार्य एक छोटा-मोटा ट्रक ही ले आए थे। उन्हें मालूम था,
बच्चे के साथ पहली बार इतनी दूर का सफर, माल-असबाब जरूर कुछ

अधिक होगा। इस ठंडे प्रदेश में गर्मी का मौसम आता ही नहीं। बस, कुछ दिनों मौसम बदलने का आभास भर मिलता है। इसके अलावा हर वक्त या तो बारिश का मौसम या सर्दी का। अतः डॉक्टर भट्टाचार्य की हिदायत के मुताबिक जरूरी साज-सरंजाम कुछ ज्यादा लाया गया था। डॉक्टर भट्टाचार्य को निजी काम-काज के लिए अस्पताल से एक जीप मिली थी। अतः अपनी जरूरत का हवाला देते हुए, उन्होंने मिलिटरी-विभाग से एक ट्रक मांग लिया था। वैसे हर काम में यहां मिलिटरी की मदद ली जाती है, इस सूचना से भी वह खुश नहीं हो पाई।

डॉक्टर भट्टाचार्य ने हंसते हुए बताया, 'यहां पहुंचने के पहले ही, तुम काफी मशहूर हो गई हो। जहां मर्द डॉक्टर कदम रखना नहीं चाहते, वहां स्वेच्छा से एक महिला डॉक्टर आ रही है—ग्राम-सेवा के लिए, यह कोई मामूली बात तो नहीं!'

अच्छा, इतनी अच्छी बातें भी शर्मिला को अच्छी क्यों नहीं लग रहीं? वह क्या यहां ख्याति पाने या काम में डूबने के लिए आई है? असल में ख्याति का रिश्ता प्रचार से होता है और प्रचार ही तो उसके लिए सबसे घातक है।

शर्मिला को यूं गुमसुम देखकर, डॉक्टर भट्टाचार्य उसे उत्साहित करने की कोशिश कर रहे थे। उन्हें मालूम है, ऐसी जगहों में मन लगाने में आदमी को थोड़ा वक्त लगता है। भालुकपांग में कदम रखते ही अगर वह यूं चुप हो आई है, तो दिरांग बस्ती-कैंप तक पहुंचते-पहुंचते, शायद वह और सहम जाए।

अतः उसे हौसला देने के इरादे से डॉक्टर भट्टाचार्य ने कहा, 'असल में कैंप में रहने का, यह तुम्हारा पहला मौका है न! थोड़ी तकलीफ भी जरूर होगी, संगी-साथी भी खास नहीं मिलेंगे, लेकिन एडवेंचर के ख्याल से रहने लगो, तो बुरा नहीं लगता। मान लो, अगर यहां मन नहीं भी लगा, तो तुम बॅमडिला वाले बड़े अस्पताल में चली जाना। डॉक्टर की जरूरत तो हर कहीं है। बॅमडिला पूरी तरह आधुनिक शहर है। वहां तुम्हें कोई तकलीफ नहीं होगी।'

इतनी देर बाद शर्मिला ने जुबान खोली। उसने बेहद शांत लहजे में कहा, 'मुझे कोई तकलीफ नहीं होगी। मैं तो गांववालों की सेवा करने के लिए ही आई हूं। आप भी जहां तक संभव हो, मुझे गांव की तरफ ही रखें।'

डॉक्टर भट्टाचार्य ने उसकी बातों का बिलकुल सीधा-सादा-सा अर्थ लगाया। उसके भीतर की घबड़ाहट की उन्हें कोई खबर नहीं थी। उन्होंने उसके इस परिवर्तन को गहरी हमदर्दी से महसूस किया।

खाना-पीना निपटाकर, वे लोग फिर रवाना हो गए। यहां से करीब नब्बे मील का सफर तय करके, बॅमडिला पहुंचना था। यह आठ हजार फुट ऊंचे पहाड़ पर बसा हुआ शहर है। वहां से दिरांग पच्चीस मील दूर था। बॅमडिला

से करीब दो हजार फुट नीचे उतरना था। आज वे लोग बॅमडिला में ही आराम करेंगे, अगले दिन सुबह-सुबह ही दिरांग की तरफ उतर जाएंगे।

शमिला चुपचाप उनकी बातें सुनती रही। अभी दोपहर के कुल ग्यारह बजे थे। इतना सारा पहाड़ी रास्ता तय करने के बाद, बाबुल कैसा रहता है, यह देख-सुनकर, वह अगली यात्रा की बात सोचेगी। अगर संभव होता, तो वह शहर में रात भी गुजारने से इंकार कर देती।

बाबुल की जुबान से बातों की फुलझड़ियां छूट रही थीं। उसके साथ उसकी मां है, आंटी है, अंकल भी हैं—ऐसी अद्भुत जगह आकर उसे बुरा क्यों लगता!

वह तो इसी सवाल में उलझा हुआ था कि इतने ऊंचे पहाड़ पर आदमी भला रहता ही क्यों है? वे लोग आखिर खाते क्या हैं? काम-काज क्या करते हैं?...इस जगह का नाम भालुकपांग क्यों है? यहीं यहां भालू तो नहीं रहते!

डॉक्टर भट्टाचार्य भी हंसते-हंसते उसकी जिरह का जवाब देते जा रहे थे। हालांकि इस जगह का नाम भालुकपांग है, लेकिन यहां जंगल में भालुओं से ज्यादा जंगली हाथियों का उत्पात ही अधिक है। दोनों तरफ से कभी-कभी हाथियों का दल धावा बोल देता है और सारा कुछ तहस-नहस कर डालता है। उन हाथियों को भगाने के लिए मिलिटरी बुलानी पड़ती है। उन्होंने हाथों के इशारों से पीछे टंगा साइन-बोर्ड भी दिखाया, जिस पर लिखा था—हाथियों से सावधान!

रास्ते के दोनों ओर घने जंगल। जंगली केलों के अनगिनत पेड़। पेड़ों से लटकते हुए केलों के बड़े-बड़े गुच्छे। हाथी इन केलों के पेड़ों और फलों के लोभ में, जब-तब हमला बोल देते हैं।

कुछेक मील बाद, दूर-दूर तक बियाबान जंगल। बस्ती का नामोनिशान तक नहीं। दोनों तरफ ऊंचे-ऊंचे पहाड़ और दरख्त। ट्रक अब चढ़ाई पर था। कभी-कभी नीचे भी उतरना पड़ता। सामने या पीछे की तरफ से एकाध मिलिटरी-ट्रक या जीप के अलावा कहीं किसी आदमी या आदमजात का पता नहीं।

आकाश बिल्कुल साफ। रास्ते धुले हुए। शमिला चुपचाप उन पहाड़ों के नज़ारों में खोई रही। उसे अच्छा लग रहा था। पहाड़ों से झरते हुए झरने। यहां के लोग उन झरनों को 'झोरा' कहते हैं।

डॉक्टर भट्टाचार्य ने कहा, 'ये झरने अभी कितने खूबसूरत लग रहे हैं! लेकिन बरसात के दिनों में इनकी वजह से खासी मुसीबत होती है। ये 'झोरे' पल-पल अपना बहाव बदलते रहते हैं और रास्ते-घाट, गांव-के-गांव तूफान में बहा ले जाते हैं। बारिश और सर्दी में इन जगहों में जीते वे

कोई गुड़ दूसरा...

जबर्दस्त-जंग छिड़ जाती है। पहाड़ से चट्टानें टूट-टूटकर गिरने लगती हैं, बर्फीली आंधी इन चट्टानों पर पर्त-दर-पर्त बर्फ बिछा देती है। लकड़ी के पुल टूट जाते हैं। रास्ते-बास्ते बिल्कुल बंद हो जाना आम बात है। उन दिनों मिलिटरी का काम बहुत बढ़ जाता है। सबसे मुश्किल काम होता है, रास्ते पर जमी हुई चट्टानें साफ करना और नए पुल बनाना।

हर मोड़ पर लकड़ी के पुल। अब तक वे लोग जाने कितने पुल पार कर आए थे। अगर कहीं ये पुल टूट जाएं तो जाना-आना ठप्प हो जाए।

पार्वती चेटिया बड़े ध्यान से डॉक्टर और बाबुल की बातचीत सुन रही थी। उसे खास डर तो नहीं लग रहा था, लेकिन बदन में झुरझुरी जरूर फैल जाती। उसे बहुत उम्मीद थी कि मेघालय से लाई हुई वह खबर सुनने के बाद दीदीजी यहां आने का इरादा बदल देंगी। अब उसे रह-रहकर यही ख्याल आ रहा था कि बेटे को लेकर ऐसी बीहड़ जगह चले आना भयंकर दुस्साहस की बात है।

बातचीत के दौरान डॉक्टर साहब ने बाबुल से ही पूछा, 'क्यों रे, यह सब सुनकर कहीं तुझे डर-वर तो नहीं लग रहा ?'

उसने उसी तरह छाती फुलाकर जवाब दिया, 'डर क्यों लगेगा ? मां जो मेरे साथ है !'

शर्मिला भी अनायास हंस पड़ी।

बॅमडिला···

पहाड़ पर बसा हुआ लकदक शहर। डॉक्टर भट्टाचार्य ने कुछ भी बढ़ा-चढ़ाकर नहीं कहा था। यह जगह सैनिकों से ठसी हुई है। अनगिनत मिलिटरी कैंप। आते-जाते बेशुमार ट्रक और जीप। अस्पताल पहुंचते ही कई एक मिलि-टरी-अफसर और डॉक्टर उनकी अभ्यर्थना के लिए आगे बढ़ आए।

उन्हें खबर मिल चुकी थी कि यहां काम करने के लिए कोई महिला डॉक्टर आ रही है। लेकिन नन्हे-से बच्चे के साथ ऐसी किसी महिला को देखेंगे, यह उन्होंने नहीं सोचा था। उन लोगों का हर्षमिश्रित विस्मय भी, जाने क्यों उसे परेशान कर गया। डॉक्टर भट्टाचार्य ने बारी-बारी से सबका परिचय कराया। परिचय-पर्व के बाद शर्मिला ने राहत की सांस ली। इन मिलीटरी-अफसरों में किसी का भी नाम दिलीप डेका नहीं था। मन-ही-मन वह अपने से बेतरह नाराज हो उठी। उसके दिमाग पर उस नाम का कोई भूत तो नहीं सवार हो गया !

सभी ने बारी-बारी से उसे सलाह दी। वह दो-चार दिन यहीं ठहर जाए,

इस जगह से अच्छी तरह परिचित हो ले, उसके बाद दिरांग जाए।

लेकिन शर्मिला ने उनकी सलाह पर रंचमात्र भी ध्यान नहीं दिया। उसने डॉक्टर भट्टाचार्य से कहा, 'जगह घूम-फिरकर देखने के बहुत मौके मिलेंगे। पच्चीस मील की उतराई का सफर तय करने में हद-से-हद घंटा-भर लगेगा। अभी तो कुल चार भी नहीं बजे! चलिए!' वह उसी वक्त दिरांग के कैंप में पहुंचने को बेसब्र हो उठी।

दो पहाड़ों के बीचोबीच, कमोवेश समतल भूमि पर बसा हुआ दिरांग। शहर के बीचोबीच छोटा-सा अस्पताल। इस अस्पताल से जुड़ा हुआ करीब तीन मील के फासले पर कैंप। यह कैंप डेढ़ साल पहले ही शुरू किया गया है।

शर्मिला के लिए जो कैंप तैयार किया गया है, वह अस्पताल से करीब ढाई मील के फासले पर है। आगे-पीछे दो-एक छोटी-छोटी बस्तियां। पिछले कुछेक गांवों का जिम्मा शर्मिला के कंधों पर होगा।

अतः अस्पताल पहुंचने से पहले ही शर्मिला का कैंप आ गया।

डॉक्टर भट्टाचार्य ने कहा, 'इतना-सारा माल-असबाब लादे-फांदे, अस्पताल जाने की जरूरत नहीं। आज अपने डेरे पर ही उतर जाओ और सामान वगैरह लगा डालो।'

कैंप के बारे में शर्मिला ने जो कल्पना की थी, यह डेरा अप्रत्याशित रूप से बेहतर था। दो कमरों वाला लकड़ी का बंगलो। इस बंगलो में खाने की जगह और रसोई भी थी। बीच में आंगन, फूलों का छोटा-सा बाग। बाग की परली तरफ लकड़ी के ही दो कमरे। एक में दवा तथा अन्य सामान सजे हुए थे। यानी डिस्पेंसरी थी और दूसरा कमरा मरीजों को देखने के लिए। लेकिन रात के समय यह कमरा खाली ही रहेगा, क्योंकि यहां के एक स्थानीय आदमी को ही कंपाउंडर के पद पर बहाल किया गया है। काफी दिनों तक बॅमडिला-अस्पताल में रहकर उसने कंपाउंडर का काम-काज सीख लिया है। इन जगहों पर डिग्रीयाफ्ता कंपाउंडर आखिर मिलते कहां हैं! जिन लोगों ने थोड़ी-बहुत स्कूली पढ़ाई-लिखाई की है, उन्हें ही पकड़कर इन कामों में लगाया जाता है। डॉक्टर की मदद से ये लोग बखूबी काम चला लेते हैं। बंगले के सामने ही ढका हुआ बरामदा। वहां बैठने के लिए, करीने से सजाई हुई बेंत की कुर्सियां और छोटी-सी मेज।

कमरे लकड़ी के बने हुए थे। सिर पर टीन की छाजन। लेकिन छाजन टिन की है या काठ की, यह अंदाजा लगाना मुश्किल था। भीतर-बाहर खूबसूरती से रंगा-पुता। दूर से देखो तो दालान और मटकोठेवाला बंगला नजर

आएगा। कमरों में बिजली का भी इंतजाम और पानी भी चौबीसों घंटे।

शर्मिला या पार्वती—किसी को भी ऐसे खूबसूरत बंगले की उम्मीद नहीं थी।

वैसे स्थानीय लोगों को यह खबर बहुत पहले ही मिल चुकी थी कि इस बंगले में उनके लिए एक महिला डॉक्टर आ रही है। अब इधर के गांवों के लोगों को ढाई-तीन मील का फासला तय करके बड़े अस्पताल तक जाने की जरूरत नहीं होगी। वैसे महिला-डाक्टर के आने की सूचना ने सबको चकित कर दिया था। गांव के बच्चे-बूढ़े किसी ने भी, आज तक किसी महिला-डॉक्टर की सूरत नहीं देखी। इससे भी ज्यादा ताज्जुब की बात यह थी कि यह डॉक्टर सिर्फ औरतों का ही नहीं, मर्दों का भी इलाज करेगी।

अस्तु, बंगलो के सामने माल-असबाब समेत ट्रक रुकते ही, देखने वाले भागकर आसपास के गांवों में खबर दे आए—डॉक्टर साहिबा आ गई हैं! खबर मिलते ही, आधे घंटे के अंदर, आदिवासी लोग आकर जमा हो गए। उनके साथ कंपाउंडर भी भागा-भागा आ पहुंचा। उसका नाम था—हॉनडिक। उम्र करीब पैंतीस-छत्तीस।

डॉक्टर भट्टाचार्य ने परिचय कराया। यहीं के स्कूल में उसने आठ दर्जे तक पढ़ाई की है। उसके बाद कई-कई अस्पतालों में कंपाउंडर का काम कर चुका है। हिंदी बखूबी बोल लेता है, कमोबेश अंग्रेजी बोलना भी सीख गया है।

महिला-डॉक्टर उसकी बॉस होगी, इस ख्याल से मन-ही-मन कहीं सहमा हुआ था। लेकिन शर्मिला का हंसमुख चेहरा देखकर वह भी खुश हो गया।

डॉक्टर भट्टाचार्य का आदेश पाकर, कई लोगों ने सामान उतारने में मदद की और उन्हीं लोगों ने कमरे में करीने से सजा भी दिया। खबर पाकर, दूर-दूर के गांवों के लोग भी नई डॉक्टर साहिबा को देखने आ पहुंचे।

उन लोगों की बातचीत और हाव-भाव देखकर, शर्मिला फौरन समझ गई—डॉक्टर भट्टाचार्य उनके नितांत अंतरंग और अपने व्यक्ति हैं। डॉक्टर साहब उनकी 'मेम्पा' भाषा भी बखूबी सीख-पढ़ गए थे।

सभी उनसे कुछ-कुछ पूछ रहे थे, वह भी हंस-हंसकर जवाब देते जा रहे थे। शर्मिला ने अंदाज लगाया, उनका कुतूहल और पूछताछ उसी के बारे में ही है।

थोड़ी देर बाद डॉक्टर भट्टाचार्य ने उसके करीब आकर कहा, 'डाक्टरी पास करने के बाद, उनकी दवा-दारू के लिए तुम यहां रहने को राजी हो जाओगी, इस बात पर उन्हें यकीन ही नहीं हो रहा। तुम जरा इनसे बातचीत करो...देखना कितने खुश होंगे! हां, हिंदी में ही बोलना, लोग ठीक समझ

जाएंगे। जो नहीं समझ सकेंगे, उन्हें बाकी लोग समझा देंगे।'

शर्मिला ने दरवाजे पर खड़े होकर, सामने लगी भीड़ को संबोधित करते हुए कहा, 'मैं आप ही लोगों में से एक हूं। आप लोगों की सेवा करने आई हूं। जब तक आप लोग चाहेंगे, उम्मीद है, मैं यहीं रहूंगी। वैसे यहां का जर्रा-जर्रा बेहद खूबसूरत है। यहां का आकाश, हवा, पहाड़, जंगल सब मुझे बेहद भले लग रहे हैं। आप लोग भी बेहद शरीफ हैं!'

भीड़ के तमाम लोग खुशी से झूम उठे। बदन पर साड़ी होने के बावजूद वह लोगों की मेम दीदी बन गई।

डॉक्टर भट्टाचार्य ने उन्हें इत्तिला देते हुए कहा, 'तीन-चार दिनों के अंदर ही तुम्हारी दीदी के कैंप में मरीजों का इलाज शुरू हो जाएगा। कोई गंभीर बीमारी नहीं हुई तो अब से तुम लोगों को तीन मील दूर, अस्पताल तक नहीं जाना होगा।'

गांववालों ने खुशी-खुशी विदा ली। वैसे नजदीकी अस्पताल भी शहर के अस्पताल के मुकाबले काफी छोटा था। अगले दिन ही शर्मिला, पार्वती और बेटे समेत वह अस्पताल भी देख आई। डॉक्टर भट्टाचार्य ने अपनी जीप भिजवा दी थी। कुल मिलाकर पंद्रह बेड। फिलहाल पंद्रह-बीस अतिरिक्त बेड की तो अभी इसी वक्त जरूरत है। यहां एक और डॉक्टर भी रहते हैं। दो पुरुष-नर्स भी हैं। गांव में कोई बीमारी फैली हो तो डॉक्टर के अलावा इन नर्सों को भी रोगी के इलाज के लिए दौड़-धूप करनी पड़ती है। डॉक्टर भट्टाचार्य तो लगभग हर रोज ही किसी-न-किसी गांव के दौरे पर निकल पड़ते हैं, मरीजों का इलाज करते हैं। अगर जरूरत पड़ी, तो शर्मिला को भी वही करना होगा। आस-पास के गांव तक पैदल भी जाया जा सकता है, गांव तक जाने के लिए बारी-बारी से जीप भी मंगायी जा सकती है। अस्पताल से संपर्क बनाए रखने के लिए, दो-चार दिनों के अंदर, डॉक्टर भट्टाचार्य ने ही फोन के एक्सटेंशन का इंतजाम कर दिया। दो-दो औरतें एक बच्चे के साथ रहेंगी, अतः उनकी जिम्मेदारी भी कुछ कम नहीं थी।

तीन दिनों के अंदर कंपाउंडर हॉनडिक भी पास वाले अस्पताल से लिस्ट मिलाकर दवा और बाकी का सरंजाम भी, खच्चर पर लदवाकर, अपने कैंप में ले आया और डिस्पेंसरी सजाकर बैठ गया। इस काम में वह आदमी खासा उत्साह दिखा रहा था। डॉक्टर भट्टाचार्य के आदेश पर वह शर्मिला को अपनी तरफ के गांवों का भी चक्कर लगवा लाया। बाहर से कोई अजनबी जब गांव में आता है, तब सबसे पहले गांव के मुखिया से मुलाकात करना, यहां का

शिष्टाचार है। यहां के लोग गांव को ही बस्ती कहते हैं। गांव के मुखिया या सरदार को 'गांव-बूढ़ा' के नाम से संबोधित करते हैं। उनसे जान-पहचान रहे तो गांव में नेकनामी भी होती है और वक्त-जरूरत पर उनसे काफी मदद भी मिलती है। शर्मिला एक दिन जीप लेकर आस-पास के चार-पांच गांवों का चक्कर लगा आई। हर जगह उसे समादर और अभ्यर्थना मिली।

यूं अभ्यर्थना के सिलसिले में खुद डॉक्टर भट्टाचार्य ने ही एकाध बातों के लिए आगाह कर दिया था। यहां जब कोई मेहमान मिलने के लिए आता है, तब गांव-बूढ़ा उसके स्वागत में, उसके हाथों में 'छंग' थमा देता है। छंग यानी देशी ठर्रा। अपने एक हाथ में छंग का गिलास थामे, दूसरे हाथ से मेहमान के कान, हल्के से छूकर गिलास उसके आगे कर देगा। चूंकि शर्मिला औरत है, उसका इसी प्रकार स्वागत करने वाली थी; गांव-बूढ़ी यानी सरदार की बीवी। शर्मिला चाहे छंग की एक बूंद भी न चखे, लेकिन बड़े सम्मान से गिलास पकड़कर कम-से-कम एक बार अपने होंठों से लगाना होगा। पीने से इंकार करना या गिलास हाथ में न लेना—उनका अपमान करना है।

हर बस्ती के सरदार की बीवी ने उसका इसी तरह स्वागत किया। उसके कान छूकर, छंग का गिलास उसके आगे रख दिया गया। शर्मिला ने हंसते-हंसते वह गिलास थाम लिया। लोग खुशी से गद्गद हो उठे। हर गांव के गांव-बूढ़े ने उसे आश्वासन दिया—मेम दीदी उनके इलाज के लिए, अपना घर-द्वार त्यागकर, उनके पास आई है, यह एहसान वे जिंदगी-भर नहीं भूलेंगे, जरूरत पड़ी तो उसकी मदद के लिए अपनी जान तक कुर्बान कर देंगे!

शर्मिला ने हर गांव के मुखिया को सूचित कर दिया, उसका कैंप अब बिल्कुल तैयार है। गांव के किसी भी आदमी की तबीयत अगर जरा भी गड़बड़ हो, तो वह बेहिचक उसके कैंप में चला आए। उसका इलाज भी होगा और मुफ्त दवा भी दी जाएगी। अगर कोई ज्यादा बीमार हो जाए, तो उसे तकलीफ उठाकर कैंप तक जाने की भी जरूरत नहीं। खबर पाकर, वह खुद ही आकर मरीज को देख जाएगी।

लोगों के हावभाव में ऐसा उत्साह झलक उठा कि शर्मिला को लगा, चाहे कोई बीमारी हो या न हो, ये लोग कैंप तक जाने को यूं ही तैयार हैं। हैरत है! अगले दिन से सिर्फ उसकी योग्यता परखने के लिए दूर और पास के गांवों के अनगिनत लोग उसके पास आने-जाने लगे।

डॉक्टर भट्टाचार्य ने खुश होकर अपनी राय जाहिर की, 'भई, तुमने आते ही बाजी जीत ली!'

यहां, बस एक ही असुविधा है। बेटे का अंग्रेजी मीडियम स्कूल यहां से काफी दूर है। सबसे निचली जगह पर, कामेंग नदी के किनारे दिरांग के बड़े-बड़े मिलिटरी-कैंप और क्वार्टर। स्कूल भी उसी कैंप के करीब। करीब छह मील का पैदल रास्ता। उस स्कूल में सिर्फ सैनिकों के बच्चे या उच्च पदस्थ सिविलियन के बच्चे ही नहीं जाते, हर तबके के लोगों के बच्चे जाते हैं। वहां कोई फीस भी नहीं लगती; बच्चों के लिए किताब-कापियों का इंतजाम भी सरकार की तरफ से किया जाता है।

डॉक्टर भट्टाचार्य ने बाबुल के लाने-ले जाने का प्रबंध भी सहज ही कर दिया। चूंकि वह बहुत अच्छे डॉक्टर थे, अतः मिलिटरी-इलाके में भी उनकी काफी खातिर-इज्जत थी। कोई सैनिक अगर गंभीर रूप से बीमार हो जाता, तो उस विभाग का बूढ़ा डाक्टर उन्हें ही बुला भेजता। यहां के तमाम रास्तों पर मिलिटरी-जीप और ट्रकों का हमेशा ही आवागमन रहता। स्कूल में पढ़ने वाले सिविलियन बच्चे भी उन्हीं जीप और ट्रकों के आसरे-भरोसे रहते हैं। स्कूल शुरू होने और छुट्टी के वक्त तो तीन-तीन मिलिटरी-गाड़ियां बच्चों को लाने-ले जाने के लिए तैनात रहती हैं। डॉक्टर भट्टाचार्य ने बाबुल को स्कूल में दाखिल करने के बाद, उसी दिन ही किसी पदस्थ मिलिटरी अफसर से मिलकर उसके लाने ले जाने का इंतजाम भी तय कर डाला। शर्मिला भी उनके साथ थी। यहां भी मिलिटरी-स्टाफ के बहुत-से लोगों से परिचय हुआ। लोग उससे काफी गर्मजोशी से मिले। उन्होंने उसे आश्वस्त किया, बाबुल को लाने-ले जाने के लिए किसी जवान को तैनात कर देंगे। जो भी जीप उधर से आ रही होगी, बाबुल को घर से ले लेगी और शाम के वक्त भी जीप उसे घर छोड़ जाएगी। उन्होंने उसे हर तरह से तसल्ली देते हुए कहा, उसे यहां किसी भी तरह की तकलीफ नहीं होगी।

...कामेंग नदी के किनारे मिलिटरी क्वार्टर होना कोई खास बात नहीं थी। यहां के जवान ज्यादातर रास्तों की मरम्मत, देखभाल और दूर-पास के निर्माण के काम में अधिक व्यस्त रहते थे। अतः यहां के सिविलियन लोगों से भी उनकी खासी जान-पहचान थी। वे लोग भी उनकी मदद के लिए हमेशा तैयार रहते थे। समूचे अरुणाचल के मिलिटरी विभाग में यह खासियत मौजूद थी। यहां के आम लोग भी बहुत कुछ उन्हीं पर निर्भर करते हैं। उनकी मदद के बिना, वे लगभग अपाहिज हो जाते हैं। हालांकि कुछ खास-खास जगहों और निषिद्ध इलाकों की बात अलग थी। वहां सख्त पहरा रहता था।

लेकिन बेटे के मामले में यह इंतजाम शर्मिला को कतई पसंद नहीं आया।

पसंद न आने की वजह भी वह जानती है। लेकिन अपनी जुबान से क्या कहे? हारकर उसने सारा कुछ उस ऊपर वाले के रहमो-करम पर छोड़ दिया। ना, उसकी अपनी इच्छा से कभी कुछ नहीं हुआ, होगा भी नहीं! इतना सोच-सोचकर आखिर वह कर भी क्या सकती है? यूं हर वक्त आलतू-फालतू सोचते हुए, वह खुद अपने पर ही खीज उठी। जिस बच्चे को स्कूल में भर्ती किया गया है, दुनिया की नजर में वह डॉक्टर मिसेज हजारिका का बेटा, बाबुल हजारिका है। अगर वह खुद आगे बढ़कर किसी को कुछ न बताए, तो भला कौन जान-समझ सकता है? उसकी खीज की एक वजह यह भी थी कि इस दहशत और फिक्र के कारण हर वक्त किसी अनजाने अपराध-बोध से दबी रहती थी। उसने क्या सचमुच किसी का बेटा चुराया है, जो इस कदर परेशान है? लेकिन यह भी सच है कि वह दिलीप डेका नामक किसी अदेखे मिलिटरी-इंजीनियर को देखने-जानने को बेतरह बेसब्र हो उठी है। वह शख्स मेघालय में अपना घर-मकान बेचने अकेला गया था। लेकिन यह भी तो मुमकिन है कि अब तक अपना पिछला शोक भूलकर उसने दूसरा ब्याह रचा लिया हो और अब अपनी नई गृहस्थी में मजे में रच-बस गया हो! हो सकता है, इन तीन महीनों में उसकी फिर कहीं बदली हो गई हो और वह अरुणाचल छोड़कर ही चला गया हो!

यहां काम में डूबे न रहो तो वक्त काटना मुश्किल हो जाए। यूं यहां इतना काम है कि सुबह से शाम तक फुर्सत न मिले। दो महीनों के अंदर शर्मिला को एक नई बात पता चली, जो इतने दिनों से डॉक्टर भट्टाचार्य की निगाह में भी नहीं आई थी! यहां की अधिकांश लड़कियां और औरतें भयावह बीमारी की शिकार हैं, जो अधिकतर मर्दों के देह-संसर्ग का परिणाम है। महिला-डॉक्टर पाकर, गांव की औरतों ने उस पर भरोसा करके, उसके आगे अपने 'गुप्त-रोग' का हवाला दे-देकर इलाज के लिए आने लगीं। धीरे-धीरे शर्मिला को पता चला कि बहुत-सी प्रौढ़ा औरतें भी यही बीमारी भुगत रही हैं। डॉक्टर भट्टाचार्य को इस भयंकर रोग की जानकारी देते हुए, उसने इस बारे में विचार-विमर्श भी किया। उसने जिस रोग का नाम लिया था, सुनकर डॉक्टर भट्टाचार्य भी सन्न रह गए।

उन्होंने खुद भी स्वीकार किया, 'हां, बहुत बार कानाफूसी जरूर सुनी है कि यहां की बहुत-सी लड़कियां इस रोग की शिकार हैं। लेकिन यहां के मर्द इस मामले में बिल्कुल चुप्पी मारे रहते हैं। अगर बीमारी बहुत बढ़ जाती है, तब उन औरतों के पति ही आभास-इंगित में दो-चार बातें बताकर,

उनसे दवा ले जाते थे।' डॉक्टर भट्टाचार्य भी उन्हें अंदाज से दवा दे देते।

डॉक्टर भट्टाचार्य ने अपना मन्तव्य दिया कि असल में यह जगह मिलिटरी जवानों से खचाखच भरी हुई है। यहां यही एक अभिशाप है। यहां के मर्दों को दारू का लोभ देकर बेहतर तरीके से बहलाया-फुसलाया जा सकता है। बढ़िया दारू के लोभ में ये लोग अनायास ही उनकी क्षणिक अय्याशी के लिए, कुछ देर को ही सही, अपनी बहू-बेटियों को उनके हाथ सौंप सकते हैं। उन्होंने भी सुना है, अभी कुछ दिनों पहले तक ये मिलिटरी-जवान, गांव में हमला बोलते थे और वहां के मर्दों को दारू पिलाकर जी भरकर औरतबाजी करते थे। शायद यहीं से इस रोग का सूत्रपात हुआ होगा। आजकल इस मामले में काफी सख्ती भी बरती जा रही है। लेकिन चोरी-छिपे कहां, क्या हो रहा है, इसकी खबर कौन रखता है?

यह किस्सा जानने के बाद तमाम मिलिटरी-जवानों के प्रति, शर्मिला के मन में भयंकर हिकारत भर गई। अपने बेटे को स्कूल भेजने के लिए, उनकी मदद लेना उसे जहर लगने लगा। अपनी गाड़ी वह बेच आई है। यहां नई गाड़ी खरीदने का सवाल ही नहीं उठता। सरकारी विभाग की गाड़ियों की अक्सर ही नीलामी होती है। वह डॉक्टर भट्टाचार्य के आगे भी अपना इरादा व्यक्त कर चुकी है। सुविधानुसार कोई गाड़ी मिल जाए, तो वह खरीदना चाहती है। लेकिन डॉक्टर भट्टाचार्य उसके इन पहाड़ी रास्तों पर गाड़ी चलाने के प्रस्ताव पर ध्यान देने को भी राजी नहीं हुए।

उन्होंने उसे समझाने की कोशिश की, 'पहले तुम यहां की बरसात तो देख लो, उसके बाद गाड़ी चलाने की बात सोचना!'

आखिर जून के दूसरे सप्ताह बारिश भी आ गई। कहते हैं, इस बार बारिश का मौसम कुछ देर से ही आया है। अब सितंबर के आखिरी सप्ताह तक ऐसा ही मौसम रहेगा। उसके बाद एकदम से ठंड का मौसम! शुरू से ही स्नो-लाइन यानी बर्फ की रेखा दिखाई देने लगेगी। चार हजार फुट ऊपर तक तमाम रास्ते-घाट, पहाड़, बर्फ से ढक जाएंगे। मिलिटरी की ट्रेकिंग-कार के अलावा इस भारी सर्दी में चलना-फिरना तक सुरक्षित नहीं।

इन तीन महीनों के दरमियान शर्मिला तीन बार बॅमडिला भी हो आई। वहां का बड़ा अस्पताल मुख्य केंद्र है। दवा वगैरह की जरूरत दिनोंदिन बढ़ती ही जा रही है। औरतों के साथ इलाज के लिए वह जी-जान से जुट गई है, इसके लिए कुछेक हजार रुपयों की अतिरिक्त दवाओं की जरूरत है। डॉक्टर भट्टाचार्य का सिफारिशी खत लेकर, रुपयों और संबद्ध सरंजामों के प्रबंध करके, हर बार, ट्रक भर-भरकर दवा ले आती है। हां, यह सच है कि

इस मामले में सरकार भी मदद में कहीं किसी तरह की कंजूसी नहीं बरतती।

बारिश के दौरान ही शर्मिला भयंकर मुसीबत में फंस गई। उसी दिन से उसकी जिंदगी में भी भयंकर उलट-फेर होने लगा।

उसका बच्चा अचानक बीमार हो गया। अक्सर उसे हल्का-हल्का बुखार रहने लगा। कभी-कभी बुखार १०४-१०५ डिग्री तक पहुंच जाता। बेटे के इलाज का जिम्मा खुद डॉक्टर भट्टाचार्य ने अपने कंधों पर ले लिया। लेकिन बीमारी बढ़ती ही गई। शर्मिला बुरी तरह घबड़ा उठी। ठंडे दिमाग से काफी सोच-विचार के बाद, डॉक्टर भट्टाचार्य ने एक ऐसी दवा का नाम बताया, जो कम-से-कम दिरांग में कहीं उपलब्ध नहीं थी। विलायती दवा। डॉक्टर भट्टाचार्य ने अगले ही दिन उसे जीप लेकर बॅमडिला जाने की सलाह दी। उन्हें मालूम था, यह दवा वहां जरूर मिल जाएगी। वहां के अस्पताल में फोन करने पर पता चला, फिलहाल यह दवा उनके पास भी नहीं, लेकिन खोजने पर जरूर मिल जाएगी। अस्पताल वालों ने भी उस दवा का पता लगाने का आश्वासन दिया।

शर्मिला सुबह आठ बजे ही जीप लेकर निकल पड़ी। गाड़ी का बूढ़ा ड्राइवर शर्मिला को काफी पसंद करता था, उसे बिटिया कहकर पुकारता था।

उसने भी शर्मिला को तसल्ली देते हुए कहा, 'बारिश की वजह से अगर रास्ते में कहीं पुल वगैरह न टूटा हो और कोई गंभीर गड़बड़ी नहीं हुई हो, तो हम दोपहर के बारह बजे तक मुन्ना बाबू की दवा का इंतजाम कर लाएंगे!'

डॉक्टर भट्टाचार्य ने भी उसे आश्वासन दिया कि जब तक शर्मिला लौट नहीं आती, वह बाबुल के पास ही रहेंगे। यहीं से वह सुबह के मरीज निपटाएंगे।

जब वह बॅमडिला आ रही थी, उन्होंने उसे पैंसठ हजार रुपयों का चेक भी थमा दिया कि वापसी में वह रुपए भी लेती आए। बॅमडिला के सरकारी बैंक से चैक कैश कराना था। सामने की लाइन में तीसरा कैंप, बारिश के पहले ही, लगभग तैयार हो चुका था। वहां का बकाया चुकाने और वेतन वगैरह के लिए रुपयों की जरूरत थी। बॅमडिला के अस्पताल के संबद्ध सरकारी विभाग में चेक भी कैश कराना था। खैर, इतने रुपए न सही, लेकिन महीने के खर्च के लिए, जो चेक मिला था, शर्मिला पहले भी एक बार, डॉक्टर भट्टा-चार्य का खत लेकर, कैश करा लाई थी। वह भी तो आखिर गजेटेड अफसर थी, खास असुविधा भी नहीं हुई।

उस दिन सुबह से ही आकाश के आसार अच्छे नहीं थे। रह-रहकर मूसलाधार बारिश। इससे भी ज्यादा भय की बात यह थी कि रह-रहकर तूफानी हवाएं भी चल रही थीं। ये तूफानी हवाएं ही जब रौद्र रूप धारण करतीं, तब रास्ते वगैरह की हालत बिगाड़ देतीं, दहशत बन जातीं। लेकिन जीप के बूढ़े ड्राइवर को मालूम था, मुन्ना बाबू सख्त बीमार हैं और उसके लिए दवा की सख्त जरूरत है। अतः वह भी शर्मिला को हर तरह से आश्वासन देता रहा, भगवान चाहेगा तो कोई मुसीबत नहीं आएगी, वे लोग दवा लेकर राजी-खुशी लौट आएंगे।

दिरांग से बमडिला तक दो हजार फुट की चढ़ाई। कई-कई जगहों पर पत्थर के बड़े-बड़े चट्टान रास्ते में अड़े हुए थे। बूढ़ा होने के बावजूद उस ड्राइवर की बांहों में आसुरी बल था। इसके अलावा रास्ते के पत्थरों को हटाने का सरंजाम, वह साथ लेकर चला था। ऐसे में पांच-सात मन की चट्टान हटाकर, रास्ता बनाना, खास मुश्किल भी नहीं था। उसे सिर्फ यही डर था कि चट्टान के फिसलने से, कहीं कोई पुल न टूट गया हो। हालांकि बमडिला के रास्ते में ऐसी संभावना कम थी, क्योंकि बारिश का मौसम शुरू होने के पहले ही, मिलिटरी तमाम पुलों की जांच और मरम्मत का काम पूरा कर चुकी थी।

सुबह आठ बजे वे लोग रवाना हुए। रास्ते की छोटी-मोटी मुसीबतें पार करके, बमडिला पहुंचते-पहुंचते दोपहर के साढ़े ग्यारह बज गए। लेकिन वहां पहुंचने के पहले ही, बूढ़े ड्राइवर का चेहरा बुझा हुआ लगा। पहाड़ पर चढ़ाई के दौरान, गाड़ी ज्यादातर सैकंड गीयर में चलती है। फिर भी गाड़ी चलाने में उसे बेहद परेशानी हो रही थी। गाड़ी में आसानी से गीयर नहीं लग पा रही थी। फर्स्ट गीयर में भी बहुत बार गाड़ी अटक-अटक जाती और अजब-सी घरघराहट भी हो रही थी।

शर्मिला ने कई बार बेसब्री से सवाल किया, 'क्यों? कोई परेशानी तो नहीं है?'

ड्राइवर ने कोई जवाब नहीं दिया, लेकिन उसके चेहरे से साफ जाहिर था कि आसार अच्छे नहीं। किसी तरह अस्पताल तक पहुंच जाए, तो जान में जान आए। लेकिन अस्पताल अभी करीब डेढ़ मील दूर था। अचानक वे लोग मुसीबत में फंस गए।

जीप एकबारगी रुक गई। गीयर लगाने पर बेतरह घर्र-घर्र करती हुई, एकदम अचल हो गई।

शुक्र है, अस्पताल करीब है, शर्मिला ने मानो अपने को ही तसल्ली दी। राहगीरों से पूछने पर पता चला, करीब दस मिनट का रास्ता है। गाड़ी को

अगर कुछ दूर धकेलकर ले जाया जाए, तो कोई न कोई बढ़िया मोटर-गैरेज जरूर मिल जाएगा। वे लोग गाड़ी को धकेलते हुए आगे बढ़े। उनकी मदद के लिए, कई राहगीर भी उनके साथ हो लिए।

वातावरण अभी से ही काफी भयावह हो आया था। चारों ओर बर्फ ही बर्फ। कटकटाती हुई सर्दी। बूढ़ा ड्राइवर काफी तजुर्बेकार भी था। अगर कहीं उसका शक सच हो गया, तो भयंकर मुसीबत होगी !

ड्राइवर ने कहा, 'चढ़ाई में लगातार दबाव पड़ रहा है, जीप पुरानी है, कहीं काउंटर पिनियन टूट न गया हो ! अगर कहीं सच ही पिनियन टूट गया हो, तो गीयर-बक्स खोलकर, मरम्मत करने में कम-से-कम डेढ़-दो दिन तो लग जाएंगे !'

गैरेज-मिस्त्री ने सूचना दी, जो डर था, वही हुआ ! अभी से अगर गाड़ी की मरम्मत शुरू की जाए तो शायद कल शाम तक ठीक हो जाए !

शर्मिला ने घड़ी पर निगाह डाली। दोपहर के बारह बज रहे थे। शर्मिला को सोच-विचार की भी फुर्सत नहीं थी। उस अजनबी मिस्त्री को गाड़ी थमाकर, वह अस्पताल पहुंची। वहां उसे एक वैन मिल गई। डेढ़ घंटे में उसे वापस कर देने का वायदा करके, वह चटपट वैन लेकर निकल पड़ी। आकाश की रंगत क्रमशः बदतर होती जा रही थी। उसने अस्पताल से दिरांग फोन करने की कोशिश की। पता चला, मौसम बेहद खराब होने की वजह से, सारी लाइनें बेकार हो गई हैं।

वह चेक लेकर रुपए निकालने के लिए सबसे पहले बैंक भागी। रुपए भरकर ले जाने के लिए वह अपना डाक्टरी-बैग खाली करके, साथ लाई थी।

डाक्टर भट्टाचार्य ने उसे आते-आते समझा दिया था, 'पंद्रह हजार के दस-दस के नोट लाना और बाकी पचास हजार के सौ-सौ के नोट ले लेना।' यानी दस-दस रुपए के पंद्रह बंडल और सौ-सौ के पांच बंडल।

सारे रुपए बैग में ठूंसकर, जैसे ही वह पीछे मुड़ी, उसकी निगाह एक अजनबी पर पड़ी, जो एकटक उसे ही घूरे जा रहा था। कुछ-कुछ लाल चेहरा। नाक के नीचे नन्हीं-सी ऊबड़-खाबड़ मूंछ। होंठों के बीच पतली-सी चुरुट। सिर पर रबड़ का टोप, बदन पर चमड़े का कोट। लंबे-से ओवरकोट में सिर से पांव तक ढंका हुआ। अजीब लंबा-ढेंग कद, लेकिन मजबूत, गठी हुई सेहत।

यूं उसकी तरफ गौर करने की कोई वजह नहीं थी, लेकिन फिर भी शर्मिला की निगाह बरबस ही उस पर जा पड़ी। वह आदमी कुल गज-भर के फासले पर खड़ा-खड़ा शर्मिला को ऐसे निर्लिप्त भाव से घूरे जा रहा था, मानो वह कोई तमाशा हो। गौहाटी के जमाने से ही उसे मर्दों की इस निगाह की आदत पड़ चुकी है। उसने बुरा-सा मुंह बनाया और बाहर निकलकर फौरन

गाड़ी में आ बैठी।

चलती हुई गाड़ी से, उसने एक बार सिर पीछे घुमाकर देखा। वह आदमी भी पलटकर सामने आ खड़ा हुआ था और अभी तक एकटक उसे ही घूरे जा रहा था। बाहर निकलते वक्त उसके चेहरे पर विरक्ति की रेखाएं कुछ ज्यादा गहरी हो आईं, शायद इसीलिए उसकी निगाह अभी तक उस पर गड़ी हुई थी।

उसे दवा भी मिल गई। दोपहर का खाना उसने अस्पताल के डाक्टरों के साथ खाया। उस वक्त दोपहर के दो बज रहे थे। अब उसे लौटने की जल्दी थी। बेटे की बीमारी का हवाला देते हुए, उसने वहां के बड़े-बड़े डाक्टरों से अनुरोध किया—चाहे जैसे भी हो, आज ही उसकी वापसी का इंतजाम कर दिया जाए।

शायद कोई मिलिटरी-ट्रक उधर जा रहा हो, बस उसी का एकमात्र आसरा-भरोसा है। बड़े डाक्टर ने खोज-खबर लेने के बाद सूचित किया, एक ट्रक उधर जानेवाला है, लेकिन खराब मौसम की वजह से उसका जाना भी अभी निश्चित नहीं। तूफानी हवाएं अगर यूं ही तेज-तेज बहती रहीं, तो शायद ट्रक निकलना भी संभव न हो। वह ट्रक जहां से रवाना होनेवाला है, वहां जाकर इंतजार करने और उसकी मर्जी पर निर्भर रहने के अलावा और कोई उपाय नहीं।

जिस गैरेज में शर्मिला की जीप मरम्मत हो रही थी, उसकी परली तरफ से तमाम गाड़ियां दिरांग की तरफ रवाना होने वाली थीं। मिलिटरी-ट्रक भी तैयार खड़ा था। कुछेक अफसर भी आस-पास घूम रहे थे। उनसे बातचीत करने पर पता चला, मौसम का राग-रंग देखकर वे लोग भी भारी दुविधा मे थे। फिलहाल जैसा मौसम है, अगर ऐसा भी बना रहा, तो निकल पड़ना आसान होगा, लेकिन अभी थोड़ी देर और रुककर मौसम का हाल-चाल देखे बिना, खतरा मोल लेना मुनासिब न होगा।

शर्मिला की जिंदगी मे ऐसी भयंकर मुसीबत मानो पहली बार आई हो! सुबह ही बाबुल का बुखार एक सौ तीन डिग्री से ऊपर था, इस वक्त पता नहीं कैसा होगा? उसे तो उम्मीद थी, बच्चे को आज ही दवा भी मिल जाएगी। लेकिन यहां जो हाल है, रात तक भी शायद ही उसे दवा दी जा सके!

वह रास्ता पार करके, गैरेज की तरफ आ रही थी कि अचानक ठिठक गई। वही बैंक वाला आदमी! वही सुबह वाली पोशाक! गैरेज से करीब दस गज के फासले पर, एक टिन के छाजन के नीचे खड़े-खड़े चुरुट के कश लगा रहा था। उसकी तरफ उसी तरह अजीब निगाहों से घूर रहा था।

शर्मिला गैरेज में ड्राइवर के पास आई। गाड़ी की मरम्मत मे हाथ तो

लगाया जा चुका था, लेकिन गीयर-वक्स खोलकर, अंदर की मशीन का जो हाल देखा तो लगा कि जीप कल तक भी, शायद ही ठीक हो पाए !

शर्मिला कभी आकाश देखती, कभी रास्ता पार करके, मिलिटरी-अफसरों से बात करने की कोशिश करती, उसके बाद फिर उल्टे पांव गैरेज तक वापस लौट आती। उसकी छटपटाहट किसी से छिपी नहीं थी। इसी बीच दूर खड़े, रबड़ का टोप और चमड़े की जैकेट में चुस्त-दुरुस्त उस लंबू अफसर से भी एकाध बार निगाहें टकरा गईं। उस आदमी की अपलक निगाहें उसी के चेहरे पर गड़ी थीं और वह चुरुट के कश लगाए जा रहा था। ना, इसके अलावा उसके चेहरे पर और कोई भाव नहीं था। उससे नजरें मिलते ही, शर्मिला की झुंझलाहट बढ़ गई। इस वक्त तो उसे हर बात पर झुंझलाहट हो रही थी।

लगभग घंटा-भर गुजर गया। आसमान की हालत वही पहले जैसी ! उसी तरह घटाटोप बारिश और सांय-सांय हहराती हुई तूफानी हवा ! शर्मिला को बस, गुस्सा आने लगा। अगर ये लोग जरा-सी हिम्मत करते और ट्रक लेकर रवाना हो जाते, तो अब तक दिरांग पहुंच भी गए होते !

शर्मिला एक बार फिर किसी अफसर से बातचीत करके, रास्ता पार कर ही रही थी कि अचानक उसकी निगाह दुबारा ठिठक गई। होंठों में चुरुट दबाए हुए, वह आदमी भी रास्ता पार करके, उसके पीछे-पीछे चला आ रहा था। इस बार शर्मिला ने मुंह फेर लिया और गैरेज के अंदर चली आई। उसे देखकर बूढ़ा ड्राइवर भी आगे बढ़ आया। उसने अपने-आप ही बताना शुरू किया—वह जो लंबा-सा अफसर है न, वह गैरेज में आकर पूरी खोज-खबर ले रहा था। किसकी जीप है ? जीप को क्या हुआ है ? मेमसाहब कहां जाएंगी ? यह करती क्या हैं ? बस, यही सब पूछता रहा। बूढ़े ड्राइवर ने भी छोटा-सा जवाब दे दिया—मेमसाहब दिरांग कैंप की बहुत बड़ी डाक्टर हैं, कुछ जरूरी दवाएं लेने आई हैं। चूंकि उनका बेटा बहुत बीमार है, इसीलिए इसी वक्त लौटने को छटपटा रही हैं। वैसे उस आदमी का, यूं गले पड़कर खोज-खबर लेना, उसे बिल्कुल अच्छा नहीं लगा। डाक्टर भट्टाचार्य ने आते वक्त ड्राइवर को भी सावधान रहने को कह दिया था। आते वक्त डाक्टर दीदी के साथ ढेर सारे रुपए भी होंगे ! गांव-कस्बे में ऐसा कोई डर नहीं होता, लेकिन शहर में जाने कितने तरह के लोग, कैसे-कैसे धंधों के चक्कर में घूमते रहते हैं।

शर्मिला ने गर्दन घुमाकर देखा, वह आदमी दूर उस टिन की छाजन की तरफ जा रहा था। उस तरफ दो-तीन ट्रक खड़े थे। शर्मिला की घबराहट की कोई वजह नहीं थी। ट्रक जब रवाना होगा, तो उसमें दो-तीन अन्य अफसर

भी तो होंगे ! वे लोग उसे कैंप तक पहुंचाकर ही अपने डेरे पर जाएंगे। ड्राइवर की बातों से शर्मिला को यही लगा—वह आदमी कोई जासूस-वासूस होगा। उसने सुन रखा था, अरुणाचल के तमाम बड़े-बड़े शहरों में जासूसों का जाल बिछा हुआ है ! इस सतर्कता की कई-कई वजहें भी थीं।

थोड़ी देर बाद ही, एक जूनियर अफसर ने दौड़कर शर्मिला को खबर दी, 'ट्रक बस छूटने ही वाला है, आप फौरन इस ट्रक में आ जाएं !' टिन के शेड में खड़े ट्रकों में से उसने एक खास ट्रक की तरफ इशारा किया।

हाथों में भारी-भरकम बैग सम्हाले, शर्मिला ने हड़बड़ाते हुए रास्ता पार किया और ट्रक के करीब पहुंच गई। ड्राइवर की बगल में आम तौर पर सबसे बड़ा अफसर बैठता था, लेकिन चूंकि वह महिला थी, अतः उसे किंचित सम्मान दिया गया। यूं भी दूसरों की मदद के बिना, किसी महिला का ट्रक में चढ़ना मुश्किल है। उस जूनियर अफसर ने उसे सामने की सीट पर ड्राइवर की बगल में बैठने को कहा।

शर्मिला ने गौर किया, होंठों में चुरुट दबाए, वह लंबू अफसर किसी से बातें कर रहा है। इस इलाके में किसी भी नागरिक को लिफ्ट देने का आम रिवाज है। शर्मिला ने अंदाजा लगाया, वह भी लिफ्ट मांग रहा होगा। खैर, उसके साथ सात-आठ वर्दीधारी अफसर भी ट्रक में सवार हैं, अतः डरने की कोई वजह नहीं ! वैसे उस आदमी को लिफ्ट न दी जाती, तो उसे खुशी होती। लेकिन उसने देखा, सबसे अंत में, वह लंबू भी उसी ट्रक में सवार हो गया।

ट्रक चल पड़ा। रास्ते की हालत बेहद खराब थी। कई जगह टूटे हुए पेड़ों की वजह से रास्ता बंद हो गया था। चट्टानों के बड़े-बड़े टुकड़े भी रोड़े बन गए थे। रास्ता साफ करके आगे बढ़ने का सरंजाम ट्रक में हमेशा ही मौजूद रहता है।

वैसे भी विघ्न-बाधा को पीछे धकेलकर, आगे बढ़ने में खास वक्त नहीं लगता। लेकिन जैसे-जैसे वे लोग आगे बढ़ रहे थे, शर्मिला महसूस कर रही थी, तूफानी हवाएं तेज होती जा रही हैं। बर्फीली हवाएं, गर्म कपड़ों को भेदकर, अंदर हड्डियों तक सुन्न किए दे रही थीं। वह सिर ढंकने के लिए गर्म शॉल भी साथ लाई थी। उसने शॉल निकाल ली और अपना चेहरा, कान-नाक अच्छी तरह ढंककर बैठ गई। लेकिन रह-रहकर बाहर से आती हुई बौछार के झपट्टे चेहरे पर मानो सुई की तरह चुभ रहे थे।

ऐसा भयंकर मौसम देखकर शर्मिला मन-ही-मन दहशत से भर गई। ये लोग ट्रक स्टार्ट करने के बारे में इतने दुविधाग्रस्त क्यों थे, अब वह बखूबी समझ गई। ड्राइवर की सारी इंद्रियां, सामने बिछी राह पर केंद्रित हो आई

थीं और वह पूरी तरह चौकन्ना होकर गाड़ी धीरे-धीरे आगे बढ़ाता जा रहा था। बरसात और उससे भी ज्यादा आंधी-तूफान के झकोरों की वजह से, रास्ता बिल्कुल नजर ही नहीं आ रहा था। पांच गज के पार सारा कुछ धुंध में डूबा हुआ। दिन-दोपहरी के वक्त हैडलाइट जलाए, ट्रक धीरे-धीरे पहाड़ से नीचे उतर रहा था। शर्मिला मन-ही-मन आगत आशंका से कांपती रही···। शायद ट्रक रुक जाए···शायद ड्राइवर ऐलान करे, ट्रक अब आगे नहीं जा सकता !

इसी घबराहट और दुविधा में वह तीन-चौथाई रास्ता तय कर आई। तूफानी हवाएं उसी तरह तेज-तेज हहराती रहीं। शर्मिला ने घड़ी पर निगाह डाली और एक बार ट्रक का स्पीड-मीटर देखा।

बस, पांच मील और !

···लेकिन अगले ही पल, उसके गले से एक तीखी चीख निकली।

ट्रक रुक गया था। सामने की राह की जगह गहरी खाई। ना, अब दो-तीन गज भी आगे बढ़ने का कोई उपाय नहीं।

उस वक्त शाम के पांच बज रहे थे।

आंधी-तूफान के बावजूद ट्रक से तमाम लोग नीचे उतर आए। शर्मिला को भी उतरना पड़ा। लोगों की बातचीत से यह अंदाजा तो लग गया कि करीब घंटे-भर पहले यहां की धरती ढहकर खड्ड बन गई होगी। उनके पहले अगर कोई ट्रक अटक गया होता; तो वायरलेस से उन्हें पहले ही खबर मिल जाती। वे लोग शायद इन नजारों के अभ्यस्त हो चुके थे।

उनमें से एक मिलिटरी-अफसर ने हंसते हुए उसे सुना ही दिया, 'उस वक्त आपके तकाजे पर अगर यह ट्रक रवाना हो गया होता, तो ये चट्टानें शायद हमारे ही ट्रक पर गिरी होतीं !'

काफी कोशिशों के बाद वायरलेस के जरिए बमडिला खबर भेजी गई। वहां से रेस्क्यू-कार यानी उनके उद्धार के लिए गाड़ी आने पर लौटने के बारे में सोच-विचार किया जाएगा, वरना इस ट्रक में ही रात गुजारने के अलावा और कोई उपाय नहीं ! ऐसे भयंकर मौसम में गाड़ी उन तक पहुंच पाएगी या नहीं, यह बताना भी मुश्किल था। इसके अलावा, जिस रास्ते से होकर वे आए हैं, वहां भी अब तक कहीं धरती ढहकर खाई बन चुकी है या नहीं, यह भी तो नहीं पता !

लेकिन अब शर्मिला क्या करे ? उसे बार-बार महसूस हो रहा था, जिंदगी और मौत में सिर्फ पांच मील का फासला है। चाहे जैसे भी हो,

ये पांच मील पार कर गए, तो जिंदगी, वरना मौत ! किसकी मौत ! उसकी या उसके बेटे की ! मुमकिन है दोनों ही न बच पाएं ! डाक्टर भट्टाचार्य ने भी आखिर क्या सोचकर ऐसी मुसीबत में, उसे दवा लाने बमडिला भेजा ? शायद इसलिए कि उन्हें एक दिन भी इंतजार करना, खतरे से खाली नहीं लगा । उन्हें यकीन था, दोपहर बारह-एक बजे तक बच्चे को दवा मिल जाएगी ! लेकिन सारा दिन गुजर गया, बच्चे को दवा नहीं मिली । घर पहुंच कर उसे जाने क्या देखना पड़े ! शर्मिला के हाथ-पैर अवश हो आए । वह इतनी असहाय हो आई कि उसे याद हो नहीं रहा कि वह भी एक तजुर्बेकार और सफल डाक्टर है ! उसकी आंखों के आगे अंधेरा छाने लगा ।

···इधर रेस्क्यू-कार नहीं भी आ सकती है । मान लो कि गाड़ी अगर आ भी पहुंची तो क्या बाबुल की जिंदगी तुच्छ करके, अपने प्राण बचाने के लिए बमडिला वापस लौट जाएगी ? ऐसे प्राण अगर चले भी गए तो क्या फर्क पड़ता है ? गाड़ी के बारे में, इन लोगों को कोई चिंता-फिक्र नहीं । वे लोग आपस में हंस-बोल रहे हैं, सीटी बजा रहे हैं । गप्प-सड़ाकों में मशगूल हैं । जाहिर है कि वे लोग ऐसी मुसीबतों के अभ्यस्त हैं । हो-हल्ला मचाते हुए, वे ट्रक में सारी रात गुजार देंगे । उसके बाद, मुमकिन है, वे दारू लेकर बैठ जाएं । वह जानती है, दारू हमेशा उनके साथ रहती है । इसी शराब का लोभ दिखाकर, ये लोग गांव की कितनी सारी जिंदगी में जहर घोल चुके हैं । शराब पीने के बाद, इन लोगों की मति-गति के बारे में भी, वह मन-ही-मन आतंकित हो उठी । शर्मिला अपने बारे में भी सोच-सोचकर मौत की दहशत से भर उठी ।

अचानक उसने अद्भुत साहस के साथ फैसला कर डाला । चाहे कितनी भी मुसीबत आए, पांच मील के फासले पर खड़ी जिंदगी तक वह पैदल चलकर जाएगी ! उतराई के रास्ते में पांच मील शायद कुछ भी नहीं । उसने गौर किया, टूटे-फूटे रास्ते के किनारे चलते हुए खाई पार कर लेना, खास मुश्किल भी नहीं था । ऊपरवाले को क्या अचानक उस पर रहम आ गया ? आंधी की रफ्तार भी धीमी पड़ गई थी । असल में इस तेज-तेज आंधी का ही खौफ था, वरना बारिश उतनी तेज नहीं थी ।

ट्रक से उतरते हुए उसने बरसाती पहन ली । भारी-भरकम बैग सम्हाले हुए, उसने एक अफसर को इशारे से बुलाकर कहा, 'मेरा बेटा सख्त बीमार है ! उसकी दवा मेरे पास है, अतः मुझे उसके पास जल्द-से-जल्द पहुंचना है ! ऐसे भी काफी देर हो चुकी है । मैं इस रास्ते से बखूबी परिचित हूं । पांच मील उतराई का रास्ता मैं खुद भी तय कर लूंगी, पैदल चली जाऊंगी !'

नौजवान अफसर ने सख्त एतराज करते हुए कहा, 'इसमें बहुत ज्यादा जोखिम है, मैडम ! आंधी अभी और तेज होने वाली है ! आप एक कदम भी आगे नहीं जा सकेंगी···। अगर कहीं कोई चट्टान या पेड़ की डाल धसक-कर आप पर आ गिरी तो आप छिटक कर कहां जा पहुंचेंगी, पता भी नहीं चलेगा !'

शर्मिला ने शांत भाव से जवाब दिया, 'अगर किस्मत खराब होगी, तो यह खडी बस भी लैंडस्लाइड के चपेट में आकर चकनाचूर हो सकती है। अतः मैंने तय कर लिया···मैं जाऊंगी ही !'

अफसर अजब दुविधा में फंस गया। शायद अपने साथियों से सलाह करने के लिए वह दूसरी तरफ चल पड़ा। शर्मिला ने भी वहां एक पल के लिए भी रुकना मुनासिब नहीं समझा। वह रास्ते के किनारे-किनारे, खाइयों से बचती हुई आगे बढ़ चली। उस वक्त वह बर्फीली हवाओं से लड़ती हुई, जबर्दस्ती आगे बढ़ने को मानो कमर कस चुकी थी। तीस-चालीस गज चले आने के बाद उसने पीछे मुड़कर देखा। शाम के अभी सिर्फ सवा पांच ही बजे थे, लेकिन इतना अंधेरा छा चुका था कि पंद्रह गज के पार भी कुछ नजर नहीं आ रहा था। उसे कहीं कोई आदमी नजर नहीं आया। इस वक्त कोई अपनी जान जोखिम में डालकर उसके पीछे-पीछे आएगा, यह असंभव था। चलो, शुक्र है, कोई नहीं आया। वह भरपूर ताकत से आगे बढ़ चली। अभी भी हवा की रफ्तार इतनी भयंकर तो नहीं थी, लेकिन हर कदम पर जबर्दस्त झटका लग रहा था। कभी-कभी तो ऐसा लग रहा था, मानो यह हवा उसे उड़ा ले जाएगी। लेकिन वह पहाड़ के सहारे-सहारे आगे बढ़ती रही, कभी कोई चट्टान पकड़कर खड़ी हो जाती। उसका सिर्फ एक ही हाथ खाली था, दूसरे हाथ में चमड़े का भारी-भरकम बैग। अगर उसका दूसरा हाथ भी खाली होता, तो बेहतर होता ! अपना तन-प्राण वह एक ही हथेली पर रख-कर, किसी तरह रास्ता तय कर रही थी। तेज-तेज हवा के साथ बारिश के झपट्टे, उसके चेहरे पर सुइयों की तरह चुभ रहे थे। उसके दांत भी किटकिटा रहे थे।

डेढ़ घंटे की जी-तोड़ कोशिशों के बाद, वह कुल दो मील का रास्ता तय कर पाई। अभी तीन मील और पार करना था, लेकिन ये तीन मील क्या इस जिंदगी में कभी खत्म होंगे ? उसे कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था ! उसके पास एक टॉर्च भी था। एक ही हाथ में बैग और जलती हुई टॉर्च उठाए, वह किसी तरह आगे बढ़ती रही।

लेकिन अब वह निरुपाय हो आई, उसे रुकना ही पड़ा। आंधी एकाएक फिर तेज हो उठी। शर्मिला अब सीधी तरह खड़ी भी नहीं हो पा रही थी।

किसी पल, कोई चट्टान का टुकड़ा या पेड़ की डाल उसके सिर पर टूटकर, उसका भुर्ता बना सकती थी। फिर भी वह एक-एक चट्टान पकड़कर, प्राणपण से आगे बढ़ती रही। कभी-कभी दम लेने को किसी चट्टान पर घुप्प से बैठ जाती। हवा के तेज-तेज झपाटों से जूझती हुई किसी तरह घिसट-घिसटकर वह आगे बढ़ती गई।

थोड़ी ही देर में मौसम ऐसा खौफनाक हो आया कि किसी चट्टान की आड़ में बैठे रहने के अलावा और कोई चारा नहीं रहा। हवा का वेग इतना प्रचंड था कि हाथ में जलती हुई टॉर्च और बैग पकड़े-पकड़े ही, वह जाने कहां-की-कहां उड़ जाती।

वह चुपचाप बैठी-बैठी वक्त की आहट सुनती रही। अच्छा, उम्मीद के आखिरी पल ही क्या जिंदगी के भी आखिरी पल होते हैं!

अचानक वह बेतरह चौंक उठी। अंधड़ और बारिश को चीरती हुई टॉर्च की एक लहर रोशनी! उसके बिल्कुल करीब दस गज के फासले पर! अगले ही पल शर्मिला की निगाहें अचरज से फटी रह गईं! छाती पर जैसे किसी ने हथौड़े जड़ दिए हों!

इस वक्त भी उसके होंठों के बीच दबा हुआ पतला-सा चुरुट—भुक्-भुक् जलता हुआ! सिर पर रबड़ का टोप, बदन पर चमड़े की जर्सी और ओवर-कोट पहने वही लब-ढंग आदमी...

शर्मिला जिस चट्टान के सहारे बैठी हुई थी, वह आदमी एक-एक कदम नापता हुआ आगे बढ़ा और उसी चट्टान से पीठ टिकाकर खड़ा हो गया। टॉर्च की एक लहर रोशनी शर्मिला के चेहरे पर आ पड़ी। शायद वह स्थिति को तौल रहा था। शर्मिला को अपनी छुटकी-सी टॉर्च जलाते देखकर, उसने अपनी भारी-भरकम टॉर्च बुझा दी।

उसने भारी आवाज में बेहद स्पष्ट जुबान में कहा, 'यू आर ए ब्रेव लेडी—सचमुच, आप बेहद बहादुर महिला हैं!'

उस आदमी के होंठों पर तिरछी-सी मुस्कान खेल गई। उसकी निगाहें एकटक शर्मिला के चेहरे पर गड़ी थीं। उसके दुस्साहस पर, कहीं वह व्यंग्य तो नहीं कस रहा? या ऐसा सुनहरा मौका हाथ लगने पर वह मन-ही-मन खुश हो रहा है? उससे पहले जो मौका नहीं मिला, इस वक्त अनायास ही मिल गया। शर्मिला का खून बिल्कुल सर्द हो आया! अगर यह आदमी उसे पहाड़ से नीचे धकेल दे, और रुपयों का बैग उठाकर रफूचक्कर हो जाए, तो दुनिया में किसी को, किसी दिन, कोई खबर नहीं होगी। सभी यही समझेंगे, प्रकृति ने खुद ही, उसे दुस्साहस की उचित सजा दे डाली। वह जैसी बेशर्मी से उसे एकटक घूर-घूरकर देख रहा है, कोई अचरज नहीं, अगर

उसे किसी और नरक की तरफ घसीट ले जाए और अपनी हवस का शिकार बना ले !

'सुना, आपका बेटा सख्त बीमार है ! आप उसके लिए यूं जान देने पर भी आमादा हैं ! क्या हुआ है उसे ?'

उस आदमी की बातचीत से काफी शराफत टपक रही थी, शर्मिला की जान-में-जान आई ।

उसने जवाब दिया, 'हां, वह सख्त बीमार है ! वैसे मैं खुद भी डाक्टर हूं, लेकिन मेरे बेटे का इलाज डाक्टर भट्टाचार्य कर रहे हैं ।'

शर्मिला ने मौका पाकर, मानो यह भी जता दिया कि वह डाक्टर भी है ! अगले ही पल उसे याद आ गया, उसके बारे में सारी जानकारी बहुत पहले ही वह जीप के बूढ़े ड्राइवर से पता कर चुका है ।

आंधी से बचने के लिए, शर्मिला जिस चट्टान की आड़ में बैठी थी, वह आदमी भी उसी चट्टान से पीठ टिकाए, उससे लगभग सटकर बैठ गया और अपने दोनों पैर सामने की तरफ फैला दिए । वैसे और किसी मुद्रा में बैठना संभव भी नहीं था । शर्मिला फिर कुछ पलों के लिए काठ हो आई । उस आदमी के इरादे नेक नहीं हैं, इस बारे में उसे कोई दुविधा नहीं रही । अब उसे अदम्य साहस से काम लेना चाहिए ! वह मन-ही-मन साहस बटोरने में जुट गई ।

'···लेकिन जाएंगी कैसे ? आप तो बिल्कुल अधमरी हो गई हैं !'

शर्मिला ने सर्द लहजे में जवाब दिया, 'आप परेशान मत होइए, मैं ठीक पहुंच जाऊंगी ! आप भी जब ऐसे भयंकर मौसम में निकल पड़े हैं, तो यकीनन आप भी जल्दी में हैं ! आप अपनी राह जाइए, मैं चली जाऊंगी !'

उस आदमी के चेहरे पर कौतुक की छाया उभर आई, 'कहीं आपको मुझसे तो डर नहीं लग रहा ?'

शर्मिला ने झल्लाकर जवाब दिया, 'अगर मैं ऐसी ही डरपोक होती, तो सेवा-कार्य के लिए यहां नहीं आती, न ऐसे भयंकर मौसम में बाहर निकलती ! आपके यूं बैठे रहने से मुझे परेशानी हो रही है ! आप अपना काम देखिए !'

उसके धीर-गंभीर चेहरे पर हल्की-सी हंसी झलक आई । उसकी चुरुट बुझ चुकी थी । उसने बुझी हुई चुरुट को आहिस्ते-आहिस्ते चबाते हुए कहा, 'मेरा अपना कोई काम नहीं है ! आपको यूं बाहर निकलते देखकर, मैं भी आपके पीछे-पीछे हो लिया । लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि आपने भयंकर जोखिम मोल ली है !'

शर्मिला ने अपने को एक झटका दिया और हाथ में बैग सम्हाले उठ खड़ी

हुई और एक-एक चट्टान टटोलती हुई आगे बढ़ने लगी। उसी तरह बर्फीली हवाएं, सुई की नोंक की तरह चुभती हुई बारिश !

वह आदमी भी साथ हो लिया और शर्मिला की तरफ हाथ बढ़ाते हुए कहा, 'लाइए, यह बैग मुझे दे दीजिए, वरना आपके लिए चलना मुश्किल होगा।'

शर्मिला सहम गई। उसने तमककर कहा, 'प्लीज, डोंट डिस्टर्ब मी ! मुझे आपकी मदद नहीं चाहिए, आप अपनी राह जाइए !'

बारिश में भीगता हुआ उस आदमी का चेहरा हौले-हौले मुस्कराने लगा। उसने उसकी आंखों में आंखें डालकर हल्का-सा जवाब दिया, 'गोइंग माइ वे, मैडम, मैं तो अपनी राह ही जा रहा हूं। ठीक है…चलिए।'

वह उससे लगभग सट-सटकर चलने लगा। हालांकि ऐसी भयावह स्थिति से बचने के लिए शर्मिला कई-कई बार चट्टानों से लगभग चिपक-सी गई। अगर वह जरा आगे-आगे या पीछे-पीछे चलता, तो यूं चिपकने की स्थिति नहीं आती।

शर्मिला दो-चार कदम आगे बढ़ने के बाद, दुबारा रुक गई, 'देखिए, मुझे दिक्कत हो रही है। आप टॉर्च जलाकर, आगे चलिए…'

वह काफी क्रुद्ध लहजे में बात कर रही थी। अगर वह उसे अपने पीछे-पीछे आने को कहती तो वह पीछे से कभी भी आकस्मिक हमला कर सकता था, अतः उसे अपने आगे-आगे चलने को कहा।

लेकिन अचानक उस आदमी का चेहरा भी तन गया। उसने डपटते हुए कहा, 'डोंट बी सिली, मैडम ! मेरी तरफ ध्यान देने के बजाय, आप जरा रास्ते की तरफ ध्यान दीजिए और आहिस्ते-आहिस्ते आगे बढ़िए !'

अच्छा, शर्मिला अब क्या करे ? वह क्या करे ? वह क्या खुद ही उसे धकेलकर गिरा दे ? लेकिन वे दोनों ही तो पहाड़ से सट-सटकर चल रहे हैं ! आखिर उसे किधर धकेले ? कितनी दूर धकेले ? उसके बाद क्या होगा ? इस आदमी के गंदे इरादे तो और स्पष्ट होते जा रहे हैं !

वह आगे बढ़ती रही। लेकिन अगले ही पल, आंधी के तेज झोंके में वह बेतरह लड़खड़ा गई और एक चट्टान से जा टकराई। वह मुंह के बल गिरने ही वाली थी कि एक जोड़ी बांहों ने उसे सम्हाल लिया। शर्मिला का बैग और टॉर्च छिटककर दूर जा पड़ा। हालांकि उस आदमी ने उसे अपनी बांहों में सम्हाल लिया था, लेकिन फिर भी वह पानवाले चट्टान से जा टकराई और काफी चोट भी खा गई। उस आदमी ने उसे पकड़कर वहीं बिठा दिया। उसका बैग भी अचानक खुल गया और रुपए की तीन-चार गड्डियां छिटककर पथरीले रास्ते पर जा गिरीं। उस आदमी ने एक बार बैग की तरफ देखा,

अगले ही पल उसकी निगाहें रुपए की गड्डियों पर गड़ गईं। उसने भीगी हुई गड्डियां समेटकर बैग में डाल दीं और बैग बंद कर दिया। बैग बंद करते हुए, रुपयों की वाकी गड्डियों पर भी नजर पड़ी होगी। वैसे शर्मिला को मालूम है, वह उसे बैंक में ही बैग में रुपए भरते हुए देख चुका था। लेकिन जाने क्यों उसे लग रहा था, अब उसकी तकदीर, बहुत-कुछ इसी अनजान-अपरिचित इंसान की मुट्ठी में है। भयंकर सर्दी और टिपिर-टिपिर बरसात में उसका अंग-अंग थर-थर कांप रहा था। दांत किटकिटा रहे थे। शायद अब वह होश भी खोती जा रही थी।

वह आदमी दुबारा उससे सटकर बैठ गया। शर्मिला की सूरत देखकर, वह उसकी हालत समझ गया। अपने ओवरकोट में हाथ डालकर, उसने एक छोटी-सी बोतल निकाली। शर्मिला की आंखें फटी-की-फटी रह गईं। वह ब्रांडी की बोतल थी।

बोतल का ढक्कन खोलकर उसने शर्मिला के होंठों से लगाते हुए कहा, 'मुंह खोलिए!'

'नहीं! नहीं!' शर्मिला के गले से एक आर्त चीख निकली।

उसकी बात काटते हुए, वह बेतहाशा हुंकार उठा, 'माना कि आप बहुत बहादुर हैं, लेकिन डोंट वी एब्सर्ड, मिसेज हजारिका।' अपनी बात पूरी करते हुए उसने दूसरे हाथ से उसका कंधा पकड़कर दो-तीन झटके दिए, 'हौसला रखिए! जब इतनी दूर निकल आईं, तब बाकी रास्ता भी तय कर लेंगी! चलिए, मुंह खोलिए! यू विल फील बेटर!'

उसने कंधे पर से हाथ हटा लिया और अपनी दोनों हथेलियों में उसका चेहरा लेकर, उसका सिर पीछे चट्टान से टिका दिया। अपनी बोतल जबरन उसके होंठों से लगा दी। उसकी हथेलियों का दबाव इतना सख्त था कि शर्मिला का मुंह अपने आप ही खुल गया। उस आदमी ने बोतल का तरल पेय उसके गले में उड़ेल दिया। शर्मिला के गले से लेकर छाती तक मानो कोई आग की तेज धार उतर गई और उसके पेट में खलबली मचाने लगी। उसका सिर घूमने लगा। कुछेक पल को आंखों के सामने अंधेरा छा गया।

अब उसने बोतल का बचा-खुचा माल अपने गले में उड़ेल लिया। पता नहीं, शर्मिला को ठीक-ठीक दिखाई भी दे रहा था या नहीं, लेकिन उसे लगा तीन-चौथाई बोतल खाली हो चुकी है। उस आदमी ने गला तर करने के बाद अपने समूचे बदन को एक जोर का झटका दिया, उसके बाद ढक्कन बंद करके बोतल को दुबारा अपनी जेब के हवाले किया।

पांच-सात मिनट गुजर गए। बारिश और तेज हो उठी। आंधी की रफ्तार भी बढ़ गई। वह शर्मिला के और करीब झुक आया। उसकी ओर

देखते हुए उसने सवाल किया, 'क्यों, अब तबीयत बेहतर लग रही है न ?'

बाहर इतनी सर्दी थी और वह पानी में बुरी तरह भीग भी चुकी थी, लेकिन बावजूद इसके, अंदर थोड़ी तपिश महसूस हो रही थी। बारिश के हमले इतने जबर्दस्त थे कि झीनी बरसाती के अंदर उसका अंग-अंग बुरी तरह भीग गया था। लेकिन अब सच ही, वह कुछ बेहतर महसूस कर रही थी। ऐसी हालत में ब्रांडी वाकई काफी असर करती है। लेकिन उसके एतराज के बावजूद जैसे उसे जोर जबर्दस्ती दारू पिलाई गई थी, यह उसकी बर्दाश्त से बाहर था। वैसे ऐसी घोर मुसीबत में सबसे पहले दिमाग ठंडा रखना बेहद जरूरी था।

उसने सिर हिलाकर जताया—अब वह पहले से बेहतर है।

'दैट्स फाइन ! यू आर रियली ब्रेव ! अब सिर्फ ढाई मील और है। मैं आपके साथ हूं, आप बिल्कुल मत घबराइए ! इस वक्त आप, बस, यह याद रखिए कि आपका बच्चा बीमार है'''उसे दवा पहुंचानी है !'

हां, उसे सचमुच अच्छा लग रहा था। पहली बार उस आदमी की बातचीत उसे भली लगी। हां, उस पर सहज विश्वास करने का मन हो आया। उसे वह निर्भर-योग्य इंसान लगा। हे प्रभु ! उसकी सारी आशंका गलत हो ! इस आदमी के बारे में वह जो सोच बैठी है, वह उसकी गलतफहमी साबित हो ! उसकी शराफत की आड़ में कोई दरिंदा न छिपा बैठा हो !

शर्मिला दुबारा उठ खड़ी हुई ! वह आदमी भी उठा और उसने अपना ओवरकोट उतार डाला। सर्दी में शर्मिला के होंठ बेतरह कांप रहे थे। उस आदमी ने उससे अनुमति लिए बिना ही, अपने ओवरकोट से उसके कंधे ढंक दिए। वैसे वह चमड़े की जर्सी भी पहने हुए था। कमर में बेल्ट। बेल्ट में रिवाल्वर। रिवाल्वर पर नजर पड़ते ही शर्मिला का खून दुबारा बर्फ हो आया। शर्मिला ने बैग उठाने के लिए हाथ बढ़ाया ही था कि उस आदमी ने लपककर बैग उठा लिया और उसे खोलकर शर्मिला की छोटी टॉर्च अंदर डाल दी और फिर अपनी बड़ी टॉर्च उसके हाथ में थमाते हुए कहा, 'आप रास्ता देख-देखकर, सावधानी से एक-एक कदम उठाइए, डरने की कोई बात नहीं !'

यहां खड़े होकर, रुपयों के लिए, डांटने-धमकाने से कोई फायदा नहीं होगा। अब तकदीर में जो होगा, देखा जाएगा ! वह आदमी अपने दाहिने हाथ में बैग सम्हाले, बाएं हाथ से उसका कंधा घेरे, आगे बढ़ने लगा। शर्मिला भी एक हाथ में टॉर्च और दूसरे हाथ से करीब की पथरीली दीवार थामे-थामे आगे बढ़ी। बावजूद इसके वह रह-रहकर लड़खड़ा जाती, गिरने लगती, लेकिन उस आदमी की बांह उसे सम्हाल लेती। उसके हाथ पीठ पर से होते हुए, उसे कंधे से घेरे हुए थे ! यूं परस्पर लिपटे-लिपटे ही कदम बढ़ाने के

अगले ही पल उसकी निगाहें रुपए की गड्डियों पर गड़ गईं। उसने भीगी हुई गड्डियां समेटकर बैग में डाल दीं और बैग बंद कर दिया। बैग बंद करते हुए, रुपयों की वाकी गड्डियों पर भी नजर पड़ी होगी। वैसे शर्मिला को मालूम है, वह उसे बैंक में ही बैग में रुपए भरते हुए देख चुका था। लेकिन जाने क्यों उसे लग रहा था, अब उसकी तक़दीर, बहुत-कुछ इसी अनजान-अपरिचित इंसान की मुट्ठी में है। भयंकर सर्दी और टिपिर-टिपिर बरसात में उसका अंग-अंग थर-थर कांप रहा था। दांत किटकिटा रहे थे। शायद अब वह होश भी खोती जा रही थी।

वह आदमी दुबारा उससे सटकर बैठ गया। शर्मिला की सूरत देखकर, वह उसकी हालत समझ गया। अपने ओवरकोट में हाथ डालकर, उसने एक छोटी-सी बोतल निकाली। शर्मिला की आंखें फटी-की-फटी रह गईं। वह ब्रांडी की बोतल थी।

बोतल का ढक्कन खोलकर उसने शर्मिला के होंठों से लगाते हुए कहा, 'मुंह खोलिए!'

'नहीं! नहीं!' शर्मिला के गले से एक आर्त चीख निकली।

उसकी बात काटते हुए, वह बेतहाशा हुंकार उठा, 'माना कि आप बहुत बहादुर हैं, लेकिन डोंट बी एब्सर्ड, मिसेज हजारिका।' अपनी बात पूरी करते हुए उसने दूसरे हाथ से उसका कंधा पकड़कर दो-तीन झटके दिए, 'हौसला रखिए! जब इतनी दूर निकल आईं, तब बाकी रास्ता भी तय कर लेंगी! चलिए, मुंह खोलिए! यू विल फील बेटर!'

उसने कंधे पर से हाथ हटा लिया और अपनी दोनों हथेलियों में उसका चेहरा लेकर, उसका सिर पीछे चट्टान से टिका दिया। अपनी बोतल जबरन उसके होंठों से लगा दी। उसकी हथेलियों का दबाव इतना सख्त था कि शर्मिला का मुंह अपने आप ही खुल गया। उस आदमी ने बोतल का तरल पेय उसके गले में उड़ेल दिया। शर्मिला के गले से लेकर छाती तक मानो कोई आग की तेज धार उतर गई और उसके पेट में खलबली मचाने लगी। उसका सिर घूमने लगा। कुछेक पल को आंखों के सामने अंधेरा छा गया।

अब उसने बोतल का बचा-खुचा माल अपने गले में उड़ेल लिया। पता नहीं, शर्मिला को ठीक-ठीक दिखाई भी दे रहा था या नहीं, लेकिन उसे लगा तीन-चौथाई बोतल खाली हो चुकी है। उस आदमी ने गला तर करने के बाद अपने समूचे बदन को एक जोर का झटका दिया, उसके बाद ढक्कन बंद करके बोतल को दुबारा अपनी जेब के हवाले किया।

पांच-सात मिनट गुजर गए। बारिश और तेज हो उठी। आंधी की रफ्तार भी बढ़ गई। वह शर्मिला के और करीब झुक आया। उसकी ओर

देखते हुए उसने सवाल किया, 'क्यों, अब तबीयत बेहतर लग रही है न ?'

बाहर इतनी सर्दी थी और वह पानी में बुरी तरह भीग भी चुकी थी, लेकिन बावजूद इसके, अंदर थोड़ी तपिश महसूस हो रही थी। बारिश के हमले इतने जबर्दस्त थे कि झीनी बरसाती के अंदर उसका अंग-अंग बुरी तरह भीग गया था। लेकिन अब सच ही, वह कुछ बेहतर महसूस कर रही थी। ऐसी हालत में ब्रांडी वाक़ई काफी असर करती है। लेकिन उसके एतराज के बावजूद जैसे उसे जोर जबर्दस्ती दारू पिलाई गई थी, यह उसकी बर्दाश्त से बाहर था। वैसे ऐसी घोर मुसीबत में सबसे पहले दिमाग ठंडा रखना बेहद जरूरी था।

उसने सिर हिलाकर जताया—अब वह पहले से बेहतर है।

'दैट्स फाइन ! यू आर रियली ब्रेव ! अब सिर्फ ढाई मील और है। मैं आपके साथ हूं, आप बिलकुल मत घबराइए ! इस वक्त आप, बस, यह याद रखिए कि आपका बच्चा बीमार है'''उसे दवा पहुंचानी है !'

हां, उसे सचमुच अच्छा लग रहा था। पहली बार उस आदमी की बातचीत उसे भली लगी। हां, उस पर सहज विश्वास करने का मन हो आया। उसे वह निर्भर-योग्य इंसान लगा। हे प्रभु ! उसकी सारी आशंका गलत हो ! इस आदमी के बारे में वह जो सोच बैठी है, वह उसकी गलतफहमी साबित हो ! उसकी शराफत की आड़ में कोई दरिंदा न छिपा बैठा हो !

शर्मिला दुबारा उठ खड़ी हुई ! वह आदमी भी उठा और उसने अपना ओवरकोट उतार डाला। सर्दी में शर्मिला के होंठ बेतरह कांप रहे थे। उस आदमी ने उससे अनुमति लिए बिना ही, अपने ओवरकोट से उसके कंधे ढंक दिए। वैसे वह चमड़े की जर्सी भी पहने हुए था। कमर में बेल्ट। बेल्ट में रिवाल्वर। रिवाल्वर पर नजर पड़ते ही शर्मिला का खून दुबारा बर्फ हो आया। शर्मिला ने बैग उठाने के लिए हाथ बढ़ाया ही था कि उस आदमी ने लपककर बैग उठा लिया और उसे खोलकर शर्मिला की छोटी टॉर्च अंदर डाल दी और फिर अपनी बड़ी टॉर्च उसके हाथ में थमाते हुए कहा, 'आप रास्ता देख-देखकर, सावधानी से एक-एक कदम उठाइए, डरने की कोई बात नहीं !'

यहां खड़े होकर, रुपयों के लिए, डांटने-धमकाने से कोई फायदा नहीं होगा। अब तकदीर में जो होगा, देखा जाएगा ! वह आदमी अपने दाहिने हाथ में बैग सम्हाले, बाएं हाथ से उसका कंधा घेरे, आगे बढ़ने लगा। शर्मिला भी एक हाथ में टॉर्च और दूसरे हाथ से करीब की पथरीली दीवार थामे-थामे आगे बढ़ी। बावजूद इसके वह रह-रहकर लड़खड़ा जाती, गिरने लगती, लेकिन उस आदमी की बांह उसे सम्हाल लेती। उसके हाथ पीठ पर से होते हुए, उसे कंधे से घेरे हुए थे ! यूं परस्पर लिपटे-लिपटे ही कदम बढ़ाने के

अलावा और कोई उपाय नहीं था ।

अचानक कोई हादसा हुआ था; शर्मिला को अब कुछ भी याद नहीं ! उसके घुटनों पर जाने क्या चीज गिरी, वह मुंह के बल लोट गई ! उसके बाद भयंकर आंधी के थपेड़ों में वह चट्टानों से टकराती हुई जाने किधर को लुढ़क गई । उसके हाथ की टॉर्च बहुत पहले ही छिटककर दूर जा पड़ी थी । मानो बर्फीली मौत उसे निगलने को आगे बढ़ आई थी ।

शर्मिला ने मारे दहशत के, आंखें बंद कर लीं । जाने कितनी देर बाद उसने आंखें खोलीं । अंधेरा इतना घना हो आया था कि डेढ़ गज फासले की चीजें भी नजर नहीं आ रही थीं । उसने किसी पेड़ की मोटी-सी डाल कसकर पकड़ ली और उसी तरह पड़ी रही ।

समूची देह में असहनीय दर्द ! प्रलयंकरी हवाएं !

आगे या पीछे···दूर-दूर तक···कहीं उस आदमी का अता-पता नहीं ।

शर्मिला को एकदम से लगा, सारा कुछ खत्म हो गया ! अब जिंदगी भी, बस, रुख्सत होने वाली है ।

वह भरपूर ताकत से चीख उठी, 'व्हेयर आर यू ? कहां हो तुम ?'

तेज अंधड़ में उसे अपनी ही आवाज सुनाई नहीं दी । शर्मिला अपनी भरपूर ताकत लगाकर किसी तरह उठ खड़ी हुई । लेकिन अगले ही पल तेज अंधड़ के थपेड़ों ने उसे जोर का धक्का दिया । उसके पैर उखड़ गए और वह उसी डाल पर जा गिरी । उसकी छाती और माथे पर जबर्दस्त चोट आई, सिर्फ इतना भर याद है···

···उसके बाद कुछ याद नहीं ! वह किसी भयावह अंधेरे की अतल गहराइयों में गुम हो गई ।

जब शर्मिला की आंखें खुलीं और उसने इधर-उधर निगाहें दौड़ाकर माहौल को पहचानने की कोशिश की, तब हठात् दिशाहारा हो उठी । यह क्या चक्कर है ? वह क्या कोई खौफनाक सपना देख रही थी ? सारा कुछ महज दुःस्वप्न था ? वह अपने कमरे में, अपने बिस्तर पर लेटी हुई थी । सिर से पांव तक दो-दो कम्बलों में ढंकी हुई । बिस्तर के दोनों किनारों से उस पर झुके हुए डाक्टर भट्टाचार्य और पार्वती । बगलवाली कॉट पर उसका बेटा सोया हुआ था ।

शर्मिला फटी-फटी आंखों से देखती रही ! सिर में भीषण दर्द । बाहर तेज-तेज आंधी का शोर, उसे स्पष्ट सुनाई दे रहा था ।

डाक्टर भट्टाचार्य हड़बड़ाते हुए से उसके और करीब झुक आए । उन्होंने

पूछा, 'अब कैसी तबीयत है ?'

शर्मिला को पलक झपकते ही सारा कुछ याद आ गया। आंधी-बरसात-विभीषिका-बेहोशी ! ना, कुछ भी सपना नहीं था ! लेकिन वह यहां कैसे आ गई ? उसे अपने बिस्तर पर पनाह कैसे मिली ? वह यहां तक कैसे पहुंच गई ? वह आदमी कहां चला गया ? रुपए का बैग कहां है ?

उसने हड़बड़ाकर उठने की कोशिश की। डाक्टर भट्टाचार्य और पार्वती दोनों ने ही उसे रोक दिया। पार्वती ने उसे जबर्दस्ती लिटा दिया। उसके बाद डाक्टर भट्टाचार्य के आदेश पर उसे गरम दूध में ब्रांडी मिलाकर पिलाया गया।

डाक्टर भट्टाचार्य ने कहा, 'आज कोई बातचीत नहीं। दर्द की दवा तो पहले ही घोलकर पिला दी गई है। अब मैं नींद की दवा भी दे रहा हूं। तुम दवा लेकर सो जाओ !'

लेकिन शर्मिला के मन में अजब हलचल मची हुई थी। उसने पूछा, 'कितने बजे हैं ?'

डाक्टर भट्टाचार्य ने घड़ी पर निगाह डालते हुए जवाब दिया, 'रात के डेढ़ बजे हैं। सब ठीक-ठाक है। तुम बिलकुल फिक्र न करो !'

'रुपयों का बैग ?'

डाक्टर ने बगलवाली मेज पर पड़े बैग की तरफ इशारा करके कहा, 'वो रहा ! रुपए भी सब ठीक-ठाक हैं। हम सब यहीं है। इतनी रात में क्या होना है ? वहीं पड़ा रहने दो। दो घंटे पहले, तुम्हारे बेटे को भी दवा दे दी गई है। वह भी अब बिलकुल ठीक है। चिंता की कोई बात नहीं !'

अभी भी शर्मिला को सारी बातें पहेली-सी जान पड़ीं। सिर बेहद भारी लग रहा है। भीषण दर्द भी है। देह के अंग-अंग मानो अपने काबू में न हों ! उसने डाक्टर भट्टाचार्य के हाथ से नींद की गोलियां ले लीं, लेकिन खाई नहीं। जिंदगी में ऐसी अजीब घटना मानो पहले कभी नहीं घटी।

उसने पार्वती से कहा, 'मुझे कुछ खाने को दो, बेहद भूख लगी है।'

डाक्टर भट्टाचार्य की सहमति पाकर, पार्वती खाना लाने दौड़ी। वह सब्जी, भुने हुए टोस्ट और एक कप दूध ले आई। शर्मिला धीरे-धीरे उठकर बैठ गई। उसने थोड़ा-सा ही खाया। अब उसे पिछले पलों की सारी बातें याद आ गईं। वह अंतिम बार जो गिरी, उसके बाद की कोई बात उसे याद नहीं।

उसने दूध की प्याली खाली करके, डाक्टर भट्टाचार्य से कहा, 'अब काफी ठीक लग रहा है। नींद की दवा थोड़ी देर बाद लूंगी। पहले आप मुझे सारी बातें बताइए। मैं बेहोश होकर गिर पड़ी थी, उसके बाद दो मील का सफर

तय करके मैं यहां तक कैसे पहुंची ?'

डाक्टर भट्टाचार्य ने बताया, 'तुम्हारी किस्मत तेज थी, जो ऐसे आदमी के साथ थीं ! वही तुम्हें तुम्हारे घर तक इस कमरे में पहुंचा गया। मेजर डेका की तरह दुर्द्धर्ष साहसी मर्द साथ न होता, तो तुम्हारा बचना मुश्किल था !'

शर्मिला की छाती एकबारगी धड़क उठी। उसके मुंह से एक अस्फुट-सी आवाज निकली, 'मेजर डेका…!'

डाक्टर भट्टाचार्य हंस पड़े। उन्होंने सिर हिलाते हुए कहा, 'हां, इंजीनियर मेजर दिलीप डेका ! मैंने सुना, तुमने उसे डाकू-वाकू समझ लिया था ?'

पार्वती एकबारगी गंभीर हो आई। शर्मिला भी निर्वाक् ! विमूढ़ ! ऐसे प्राणांतक मौसम में ऐसे अजीब संयोग की साजिश में जरूर उस ऊपरवाले का हाथ है। अच्छा, शर्मिला अपनी इस नई जिंदगी के लिए किसे धन्यवाद दे ?

उसने धीमी आवाज में पूछा, 'आप क्या उसे पहचानते हैं ?'

'पहचानूंगा क्यों नहीं ? पिछले साल यहां के तमाम निर्माण का भार लेकर वह यहीं इस कामेंग कैंप में ही तो था ! तीन महीने पहले अपनी मर्जी से पासीघाट जा बसा। पांच-छह दिन पहले बमडिला आया हुआ था। आज दिरांग आते हुए कैसा अजब संयोग हो गया।…वेरी वेरी मूडी मैन ! बेहद तपाकी इंसान ! लेकिन जैसा बुद्धिमान, वैसा ही दुस्साहसी ! देखो न, बमडिला से ट्रक रवाना ही नहीं हो रहा था। तुम अपने बीमार बेटे के लिए दवा लेने आई हो और अब पहुंचने के लिए छटपटा रही हो—यह देखकर उसीने ट्रक रवाना करने का हुक्म दे डाला। खैर, उसके बारे में तुमसे बाद में बात करूंगा, आज वह जैसी हालत में तुम्हें ले आया, तुम कल्पना भी नहीं कर सकतीं। यह सिर्फ उसीके बूते की बात थी !'

उन्होंने उस हालत का भी थोड़ा-बहुत बयान किया। रात ग्यारह बजे के करीब मेजर डेका, शर्मिला को गोद में उठाए, कैंप का दरवाजा खोलकर, अंदर दाखिल हुआ। अजब बौखलाई हुई सूरत। खून में नहाया हुआ। माथे पर कई जगह चोट के निशान। रास्ते में कई बार गिरा भी था, अतः पांव में बुरी तरह चोट आई थी। बेल्ट के साथ रुपयों का बैग बंधा हुआ। वह पागलों की तरह लड़खड़ाता हुआ अंदर आया और बेहोश शर्मिला को बिस्तर पर उछालकर—जमीन पर ही चित लेट गया। रुपयों का बैग उसी तरह बेल्ट से बंधा हुआ ! डॉक्टर भट्टाचार्य को एकसाथ दो-दो जनों की देखभाल करनी पड़ी। वह आदमी इतना ज्यादा जख्मी हो गया था कि उसे ही इलाज की ज्यादा जरूरत थी, क्योंकि हाथ-पांव, अंग-अंग बेतरह लहूलुहान थे।

इसी बीच उसने आधी बोतल ब्रांडी गले में उड़ेली। उसके बाद घंटे-भर तक लेटा रहा और हादसा कहां और कैसे हुआ, आखिरकार यहां तक कैसे पहुंचा,

शुरू से लेकर अंत तक सारी कहानी सुना गया। लेकिन वह ऐसा बीहड़ इंसान है कि उसे रात-भर के लिए रोक पाना नामुमकिन हो आया। वह अपने को झटककर उठ बैठा।

बहुत रोकथाम के बावजूद, उसने कहा, 'ना, अब अपने कैंप में जाकर ही आराम करूंगा! यहां लेटा रहा, तो जाने कितने दिन उठ नहीं पाऊंगा!'

यानी उसे कोई रोक नहीं पाया। वह चला गया। उस वक्त भी मूसलधार बारिश हो रही थी। जाते-जाते कह गया है, अगर वह ठीक रहा तो कल-परसों तक शर्मिला का कुशल-समाचार लेने जरूर आएगा। कह रहा था, ट्रक अटक जाने पर जैसे तुम उतने सारे रुपयों के साथ, अकेली ही चल पड़ी, इस बहादुरी पर, उसने मन-ही-मन तुम्हें सलाम किया है। उसका कहना है, ऐसी बहादुर औरत उसने पहले कभी नहीं देखी।

शर्मिला को नींद की दवा लेने को आगाह करके, डॉक्टर भट्टाचार्य उठ खड़े हुए और आंगन की परली तरफ रोगी देखनेवाले कमरे में आराम से लेट गए। आज उन पर काफी दबाव पड़ा था।

बेटा गहरी नींद सोया हुआ था। पार्वती सामनेवाली कुर्सी पर बैठी हुई थी और उसकी निगाहें एकटक दीदीजी की तरफ लगी हुई थीं, शर्मिला भी उसे टटोल रही थी।

लेकिन आज रात वह ज्यादा कुछ सोच नहीं पाई। खैर, सोचने को अभी काफी वक्त पड़ा है! उसने साइड-टेबल से पानी का गिलास उठाकर नींद की दवा ली और पार्वती से कहा, 'जरा रोशनी बुझा दो···'

अगले दिन भी आकाश के तेवर में कोई फर्क नहीं आया। लगातार आठ-दस दिनों तक मूसलाधार बारिश, यहां के लिए कोई नई बात नहीं थी। इन दिनों मरीजों का आना लगभग बंद रहता है। लेकिन शर्मिला अपने लिए फुर्सत नहीं चाहती। वह कुछ भी सोचना-समझना नहीं चाहती। लेकिन जब हाथ में कोई काम न हो और वह चाहे या न चाहे, चिंता-फिक्र उसे भला कब छोड़नेवाली थी! हालांकि कोई मरीज आ भी जाए, तो उसे देखने का सवाल ही नहीं उठता। डॉक्टर भट्टाचार्य का सख्त आदेश था, तीन दिन सिर्फ आराम। वह पार्वती और कंपाउंडर हैंडिक को भी यही आदेश दे गए थे।

आज भी उसकी नस-नस टूट रही थी। लेकिन वह अपनी तबीयत को लेकर जरा भी परेशान नहीं थी। पिछले समूचे दिन और रात उसे बेतरह जूझना पड़ा था। आज उसके मन में कुछ और ही तरह की कशमकश जाग उठी। सुबह से लेकर शाम तक—हर पल, वह शख्स उसके सिर पर भूत बन-

कर सवार रहा—मेजर दिलीप डेका। कई बार वह बाबुल की कॉट के पास आकर खड़ी हो गई। आज उसकी तबीयत भी बेहतर है। अब तो बिस्तर से उतरने की जिद मचाए हुए है। आंटी और मां, दोनों की नजरें बचाकर उतरना संभव नहीं हो पा रहा। लेकिन मां को बार-बार अपने बिस्तर के पास खड़े और यूं निहारते देखकर शायद उसे भी अचरज हो रहा था। उसे अपनी मां शायद नॉर्मल मूड में नहीं लग रही थी।

शर्मिला मन-ही-मन मेजर डेका और बाबुल का मासूम चेहरा मिलाने की कोशिश में लगी हुई थी। लेकिन उस आदमी का अधिकांश चेहरा तो रबड़ के टोप में ढंका हुआ था। उसे उसका चेहरा कितना-सा याद है! कुल मिला-कर बाबुल का चेहरा कहीं से भी मेल नहीं खाता। कुल मिलाकर वह आदमी उसे दुर्धर्ष और खासा जबर्दस्त पुरुष लगा था। हां, और कोई न सही, कम-से-कम शर्मिला यह स्वीकार करने को विवश है कि जिंदगी में पहली बार ऐसे इंसान से मुलाकात हुई थी, जो सच्चे अर्थों में मर्द था! सचमुच वह ताकतवर मर्द था। शर्मिला को ऐसा क्यूं लग रहा है, उसे नहीं मालूम। लेकिन अगर वह नहीं होता, तो कल या दो-चार दिनों बाद उसकी बेजान लाश ही यहां तक पहुंचती। वह हवा-धूप-पानी या बेटे का मुंह तक नहीं देख पाती। उसी को बचाने की कोशिश में, कई बार उसे डांटा-डपटा, हथेलियों से उसका गाल दबाकर, उसे ब्रांडी पिलाई। बिना किसी दुविधा या अनुमति के उसे अपने बदन से सटाए हुए, ऐसे प्रलयंकर मौसम में भी कदम-दर-कदम, आगे बढ़ता गया। भयंकर खतरे के पलों में, अपनी जान का मोह छोड़कर, जो दूसरों की रक्षा के लिए, यूं आगे बढ़ सकता है, वह यकीनन किसी और ही धातु का इंसान है!

···हालांकि उसे पता है, इसी आदमी का एक कोमल पक्ष भी है! मौसम की खराबी की वजह से, बमडिला से ट्रक रवाना ही नहीं हो रहा था। बूढ़े ड्राइवर की जुबानी उसके बेटे की सख्त बीमारी की खबर सुनकर, उसके लिए दवा लेकर जल्द-से-जल्द पहुंचने की छटपटाहट देखकर, उसी ने ट्रक छोड़ने का हुक्म दिया। लैंड-स्लाइड की वजह से जब ट्रक अटक गया और शर्मिला बेखौफ पैदल ही चल पड़ी, वह चुपचाप उसके पीछे-पीछे चला आया। उस कठिन मुसीबत के पलों में उसे हिम्मत छोड़ते देखकर, उसे हौसला देता रहा, 'आप सिर्फ यह सोचिए कि आपका बेटा बीमार है, आपको उसकी दवा लेकर पहुंचना ही होगा!'

हां, ऐसा पुरुष अपनी जिंदगी में उसने पहले कभी नहीं देखा! लेकिन क्या वह सच ही ऐसा पुरुष देखने को बेचैन थी? इस शख्स का नाम अगर मेजर दिलीप डेका न होता तो उसकी कृतज्ञता की सीमा न होती। लेकिन

अब ? रह-रहकर, नस-नस तोड़ देनेवाली यंत्रणा ! मानो वह दारुण बाबुल को उससे छीन ले जाने को आगे बढ़ता आ रहा है !

…लेकिन शर्मिला ही भला इतनी परेशान और बेचैन क्यों है ? अगर वह न चाहे, तो बाबुल को भला कोई छीन सकता है ? दुनिया-जमाने को मालूम है कि बाबुल उसका सगा बेटा है। उस आदमी या किसी को भी, कुछ और पता लगने की कोई वजह नहीं। एकमात्र पार्वती ही उसका पर्दाफाश कर सकती है। लेकिन वह कभी ऐसा नहीं करेगी !

आज ही वह कई बार बोल चुकी है, 'दीदीजी, कॉन्ट्रैक्ट रद्द कर दीजिए। चलिए, हम लोग यहां से दूर चले जाएं !'

…'तब ?

इसी 'तब' को लेकर ही तो उसकी इतनी मुसीबत और समस्या है ! बाबुल उस दिलीप ढेका का ही बेटा है, अभी तो यह भी निःसंशय प्रमाणित नहीं हो सका है। लेकिन फर्ज करो, यह सच भी हो और शर्मिला भी पक्के तौर पर समझ ले कि बाबुल उसी आदमी का बेटा है, तो क्या वह उस पिता को बिना कुछ बताए-समझाए, हमेशा के लिए उसे बेटे के सुख से वंचित करके भाग सकेगी ? और अगर वह न भी भागे तो भी क्या वह सच पर हमेशा-हमेशा के लिए पर्दा डाल सकेगी ?

नहीं, चाहे जितनी भी पीड़ा हो, यहीं उसका मन अपने खिलाफ हो जाता है ! वह अंदर-ही-अंदर अपने से जूझती रही।

शाम तक भी जब डॉक्टर भट्टाचार्य का अता-पता नहीं मिला, तब उसे परेशानी होने लगी। शाम करीब पांच बजे बूढ़ा ड्राइवर भी गाड़ी समेत बमडिला से लौट आया। कल का सारा दिन और आज का दिन—वह पीछे लगा रहा और तीन बजे तक गाड़ी मरम्मत कराता रहा। शर्मिला के कैंप के सामने गाड़ी रोककर, उसने डॉक्टर दीदी का कुशल समाचार पूछा, उसके बाद अस्पताल चला गया। शर्मिला तभी से राह देख रही है। मुमकिन है बारिश के कारण डॉक्टर भट्टाचार्य न आ पाए हों, अब जीप लेकर आते ही होंगे !

वैसे जीप पर नजर पड़ते ही, शर्मिला को दुबारा यह ख्याल आया, ऊपर-वाले की खास साजिश के बिना ऐसी परिस्थिति नामुमकिन है। जीप अगर जाने के वक्त ही, रास्ते में बिगड़ गई होती या वह आदमी अगर कुछ दिनों पहले पासीघाट से बमडिला आता, तो मुलाकात का सवाल ही नहीं उठता ! अगर वापसी में भी जीप बिगड़ जाती, तो भी उनका मिलना नहीं हो पाता। शर्मिला दवा लेने के लिए अगर एक दिन आगे-पीछे बमडिला गई होती, तो भी शायद यह टक्कर न होती ! कहीं अलक्ष्य से किसी ने योजनाबद्ध तरीके से साजिश की है, तभी ऐसा दुर्योग हुआ ! अतः अब सारा किस्सा यहीं खत्म

जाएगा, भला इसकी वह कैसे उम्मीद करे ?

डॉक्टर भट्टाचार्य की जीप जव उसके दरवाजे पर आकर खड़ी हुई, तव रात के आठ वज चुके थे।

उन्होंने कमरे में दाखिल होकर दरियाफ्त किया, 'कैसी हो अव ?'

शर्मिला ने जवाव दिया, 'अच्छी हूं !'

'उंहुं ! अच्छी दिखाई तो नहीं दे रहीं ! चेहरा वेहद सूखा, कहीं बुखार-बुखार तो नहीं आ गया ?'

वावुल अपने विस्तर पर वैठा हुआ था। उसने छूटते ही कहा, 'मां न''' मेरे लिए वहुत फिक्र कर रही हैं, काकू ! तव से वार-वार सिर्फ मुझे ही देखे जा रही है। और कभी-कभी मेरे वदन पर हाथ फेरती है। लेकिन मैं तो अव अच्छा हो गया हूं। है न, काकू ?'

डॉक्टर भट्टाचार्य ने मुस्कराकर सिर हिलाया, 'हां रे, तू विल्कुल अच्छा हो गया है !' उन्होंने पार्वती से पूछा, 'क्यों, दवाएं ठीक वक्त पर दी जा रही हैं न ?'

पार्वती ने सिर हिलाकर सहमति जताई।

इसके वाद डॉक्टर भट्टाचार्य ने जो समाचार दिया, उसे सुनकर शर्मिला के दिल में वेतरह हलचल मच गई। जीप लेकर, वह मेजर डेका को देखने के लिए कैमेंग-कैंप गए थे। इससे पहले फोन करने पर खवर मिली थी कि उसे तेज बुखार है और पोर-पोर में भयंकर दर्द है। जव वह उसे देखने पहुंचे, तव उसका बुखार एक सौ चार डिग्री था। वदन के वहुत-से हिस्सों का एक्स-रे लिया जा चुका था। किसी जगह की हड्डी तो नहीं टूटी, लेकिन गहरी चोट जरूर आई है।

उसीने डॉक्टर को वताया—मिसेज हजारिका को सहारा देकर, जव वह पहाड़ी रास्ते से नीचे उतर रहा था, तव उन दोनों पर किसी पेड़ की डाल टूटकर गिरी और दोनों ही छिटककर अलग जा पड़े। उस वक्त डेका का सिर बुरी तरह जख्मी हो गया। उसके वाद वेहोश शर्मिला को कंधे पर लादे-लादे जव वह वाकी रास्ता तय कर रहा था, उसके पांव कई वार फिसले थे। शर्मिला को वचाने की कोशिश में, ज्यादा चोट उसी को आई।

यह सव वताते हुए डॉक्टर भट्टाचार्य की आंखों में उसके लिए स्नेह उमड़ आया।

उन्होंने कहा, 'खुद इतने बुखार में तप रहा था, अंग-अंग दर्द से फटा जा रहा था, लेकिन उसे रत्ती-भर भी अपना ख्याल नहीं था। वह वार-वार तुम्हारी तवीयत के वारे में पूछता रहा। कह रहा था, अपनी तरफ से वह तुम्हें इतना वचा-वचाकर लाया, लेकिन फिर भी वह कहीं-कहीं चोट खा गई

है। अब वह कैसी है ? अगर एक्स-रे वगैरह की जरूरत हो, तो हमारे यहाँ इंतजाम किया जा सकता है। बदन में कहीं जरा-सा भी दर्द हो, तो ऐक्स-रे फौरन करा लेना चाहिए !'

शर्मिला ने बुदबुदाकर कहा, 'ना, मुझे कहीं कोई तकलीफ नहीं ! हाथ-पैर और देह में हल्का-सा दर्द है, बस !'

इसके बाद जो प्रसंग छिड़ गया, वह नितांत स्वाभाविक था, फिर भी, शर्मिला मन-ही-मन अजीब परेशानी और हताशा से भर उठी।

हालांकि डॉक्टर भट्टाचार्य ने तारीफ के लहजे में ही कहना शुरू किया, '''फौज में इस आदमी का काफी सुनाम है। जल्दी ही उसकी तरक्की भी होनेवाली है। यह जितना साहसी है, उतना ही दृढ़-चरित्र भी। डेढ़ साल तक युद्ध-बंदी के रूप में दुश्मन के कैंप में भी रहा। उस वक्त दुश्मन की एक गोली, उसका काम तमाम कर सकती थी। यूं उस बिचारे की जिंदगी बेहद दुखी है। कभी उसकी बीवी थी, आठ महीने का हंसता-खेलता प्यारा-सा बच्चा था। मेघालय में उस बच्चे का धूमधाम से उसने अन्नप्राशन भी किया। लेकिन उसके बाद ही, जिंदगी के तमाम साध-आह्लाद पर मानो वज्रपात हो गया। इमरजेंसी के जमाने में बीवी-बच्चे को अपनी बूढ़ी मां के पास छोड़कर, देश के दूसरे छोर पर लड़ने गया था'''वहीं अटक गया। इधर उसकी बीवी-बच्चा जिस ट्रेन से गौहाटी आ रहे थे, उसका एक्सिडेंट हो गया'''बिचारे खत्म ! लेकिन इस बदनसीब मेजर को ये तमाम खबरें दो साल बाद मिलीं। इस बीच उसकी बूढ़ी मां भी भगवान को प्यारी हो गई। दुनिया में अपना कहने को कोई न रहा। उसी ट्रेन-दुर्घटना में शर्मिला अपने पति मोहन हजारिका को खो बैठी थी, यह सुनकर इतने तेज बुखार और दर्द के बावजूद, वह एकदम से चिहुंककर उठ बैठा। उसके बाद एकदम से गुमसुम हो रहा।'

शर्मिला सुनी-सुनाई बातें ही दुबारा सुन रही थी, लेकिन उसका मन कह रहा था, यह सब किसी आसन्न संकट की सूचना है ! कोई उसे जैसे किसी भयंकर संकट की तरफ खींचे लिए जा रहा हो !

डॉक्टर भट्टाचार्य के जाते ही, वह खा-पीकर लेट गई। लेकिन, आज उस-की आंखों में नींद नहीं। घूम-फिरकर पिछले दिनों की दहशत-भरी तस्वीरें, उसकी आंखों के आगे उभरती रहीं। अच्छा, उसे बेहोशी की हालत में अपने कंधे पर लादे-लादे, उस आदमी ने पूरे दो मील का रास्ता कैसे पार किया होगा ? चाहे जितनी आसुरी ताकत या साहस उसमें हो, लेकिन ऐसी भयंकर हालत में यह क्योंकर संभव हुआ ? यह सब सोचते हुए रात के अंधेरे में ही

उसका चेहरा शर्म से लाल हो उठा ! उसे अपने पर ही झुंझलाहट होने लगी। हुंह, उसे 'वहादुर औरत' कहकर मानो वह बार-बार उस पर व्यंग्य कर रहा था। अच्छा, उसकी अपनी अक्ल कहां गुम हो गई थी ? वह इस तरह सुध-बुध क्यों गंवा बैठी ? कैंप तक पहुंचने में रात के ग्यारह बज गए थे, यानी उसे गोद में उठाए हुए, दस-बीस कदम चलने के बाद, हर बार वह सुस्ताने के लिए रुका होगा ! शर्मिला की लंबाई पूरे पांच फुट, पांच इंच है, गदराया हुआ शरीर ! आखिरी बार जब उसने वजन लिया था, वह पूरे साठ किलो से भी ज्यादा थी ! ऐसे भयंकर आंधी-तूफान में, ऐसी भारी-भरकम देह को लादकर, वह लाया कैसे होगा ? रास्ते में कई बार लड़खड़ाया होगा, जख्मी हुआ होगा, जरूर उसे लिए-दिए गिरा भी होगा ! लेकिन उसे चोट न आए, इस कोशिश में वह इतनी देर तक कैसे सम्हाले रहा ? उसे सचमुच खास चोट नहीं आई ! सम्हालने-सहेजने की संभावित मुद्राओं की कल्पनामात्र से वह आरक्त हो उठी ! उफ ! होश गंवाने के बजाय, बेहतर था, वह प्राण ही गंवा देती !

अगले दिन भी लगभग शाम को डॉक्टर भट्टाचार्य ने आकर बताया, 'मेजर डेका का बुखार अभी तक कम नहीं हुआ, देह का दर्द भी वैसा ही है। लेकिन मेरे पहुंचते ही, सबसे पहले उसने बाबुल और तुम्हारी खोज-खबर ली…'

सारा हाल सुनाकर उन्होंने पूछा, 'अब तुम बताओ, तुम कैसी हो ? आज तो तबीयत बेहतर लग रही है न ?'

'हां,' शर्मिला ने कुछ सोचते हुए, शांत लहजे में पूछा, 'आप कल भी तो उन्हें देखने जाएंगे न ?'

'उसका इलाज मिलिटरी डाक्टर ही कर रहे हैं। लेकिन जब तक वह बिल्कुल ठीक नहीं हो जाता, उसे रोज देख आना चाहिए ! क्यों ?'

'कल जीप पहले यहां भेज दीजिएगा, मुझे भी ले लें, मैं भी चलूंगी आपके साथ !'

डॉक्टर भट्टाचार्य ने सहर्ष सहमति जताते हुए कहा, 'मैं भी सोच रहा था, आज तुमसे कहूंगा, एक दिन तुम भी देख आओ !'

शर्मिला अब सारा कुछ उस ऊपर वाले की मर्जी पर छोड़ देना चाहती है। जो होना है, होने दो ! जो घटना है, घटने दो ! अब वह अपने से और नहीं जूझ सकती ! इतने दिनों वह अपना फर्ज निभाती रही, फर्ज के तक़ाजे पर ही सारा काम-काज चलाती रही !

'...मेजर डेका एक छोटी-सी केबिन में लेटा हुआ था। डॉक्टर भट्टाचार्य के साथ शर्मिला को आते देखकर, वह हंसते हुए उठ बैठा। सिर पर पट्टियां, बदन से कंबल सरकते ही, उसने गौर किया—पूरी छाती पर पट्टियां, पैरों में भी जगह-जगह पट्टियां। शर्मिला को अपनी ओर देखते देखकर उसने हड़बड़ाकर कंबल खींच लिया।

वैसे उसने हंसते हुए, उसका स्वागत किया और कुर्सी की तरफ इशारा करते हुए कहा, 'बैठिए, बैठिए! जाने क्यों, मेरा मन कह रहा था, आज आप जरूर आएंगी!'

शर्मिला भी सायास हंस पड़ी। वह जी-जान से सहज होने की कोशिश कर रही थी। अभी भविष्य में जाने कितना कुछ सहन करना होगा, अभी से अपने पर नियंत्रण न रख पाई, तो उसकी खैर नहीं!

वह कुर्सी पर बैठ गई। डॉक्टर भट्टाचार्य भी एक कुर्सी पर जम गए।

'हां तो, बताओ, अब कैसे हो, बरखुरदार?'

'बहुत बेहतर। बुखार भी अब एक सौ दो से कम है।'

'दर्द?'

इस सवाल पर वह खिलखिलाकर हंस पड़ा, 'दर्द, अभी तक तो था, लेकिन मैडम को देखकर एकदम से कम हो गया!'

डाक्टर भट्टाचार्य ने जोर का ठहाका लगाया। शर्मिला ने भी हंसने की कोशिश की। शायद और ज्यादा सहज दिखने के लिए ही, वह उठी और बेड के किनारे टंगे हुए चार्ट पर एक निगाह डाली। उसमें रोगी का सारा हाल दर्ज था।

दिलीप डेका ने उसकी तरफ देखते हुए कमेंट किया, 'ये लोग ही मेरी नाक में दम किए हुए हैं, मैडम! अब आप भी कोई सुझाव देकर, इन्हें उकसा मत दीजिएगा!'

शर्मिला हंसते हुए दुबारा कुर्सी पर आ बैठी। उसने भी मजाकिया अंदाज में पूछा, 'यानी ऐसा भी कोई है, जो आपकी भी नाक में दम कर सकता है?'

कमरे में किसी सबल मर्द का ठहाका गूंज उठा।

उसने डॉक्टर भट्टाचार्य की ओर मुखातिब होकर कहा, 'कुछ समझे, भाई जान? इनका ख्याल था, मैं किसी भयंकर डाकू के हाथ पड़ गई और मैं मन-ही-मन मजा ले रहा था कि भगवान ने जिंदगी में मुझे सिर्फ यही एक शुभ और सुन्दर दिन अता किया है।'

शर्मिला अंदर-ही-अंदर सकपका गई। इस बात के बहुत सारे अर्थ हो सकते हैं!

दिलीप डेका ने सीधे-सीधे उसकी आंखों में आंखें डालकर सवाल किया, 'अच्छा, आप सच-सच बताइए, आपने मुझे खूंखार डाकू समझा था या नहीं ?'

शर्मिला ने भी हंसते हुए पलटकर सवाल किया, 'यह समझते हुए भी, आपने अपना परिचय क्यों नहीं दिया ?'

'क्योंकि, आप मुझे बहुत बहादुर महिला लगीं। आपका साहस देखकर मुझे अच्छा लग रहा था। उस पर से शुरू से ही आप जैसी शक्की निगाहों से देख रही थीं, मुझे बहुत मजा आ रहा था।···उसके बाद तो ऐसी मुसीबत में फंसे कि और कुछ सोचने या कहने का मौका कहां था ? आप हंस रही हैं ? यहां से रवाना होने के पहले ही भाईजान से सुना था—कोई स्मार्ट, यंग लेडी मेडिकल ऑफिसर हमारे यहां आ रही हैं !—तभी से आपको देखने की तमन्ना थी, लेकिन ऊपर वाले ने ऐसी मुठभेड़ कराई कि—बाप रे बाप !'

उसकी आवाज भारी जरूर थी, लेकिन बेहद साफ और स्पष्ट। वह शर्मिला की ओर कुछेक पल को देखता रहा। थोड़ा ठहरकर उसने पूछा, 'कॉफी पीजिएगा, मंगाऊं ?'

उसने जिस अंदाज में पूछा था, शर्मिला से एतराज नहीं करते बना। दिलीप ने नर्स को बुलाकर कॉफी लाने को कहा। उसके बाद डॉक्टर भट्टाचार्य की उपस्थिति भूलकर जिस तरह वह एकटक उसका चेहरा निहारने लगा, शर्मिला जाने क्यों बुरी तरह झेंप गई।

उसने सहज होने की गरज से, अपनी ओर से ही बातों की पहल की, 'आपकी बदौलत ही जान बच गई, लेकिन कैसे कहूं कि मैं कृतज्ञ हूं !'

नहीं, इस बार वह हंसा भी नहीं। डॉक्टर भट्टाचार्य ने सच ही कहा था, बेहद मूडी इंसान है ! उसकी आंखें उसी तरह उसके चेहरे पर टिकी हुई थीं, लेकिन असल में वह किन्हीं और ख्यालों में गुम हो गया था।

डॉक्टर भट्टाचार्य ही किंचित हैरत में पड़ गए। उन्होंने ही उसका ध्यान खींचने की कोशिश की, 'शर्मिला कुछ कह रही है, भाई, तुमने सुना नहीं ?'

वह एकबारगी सकपका गया, 'नहीं ! असल में मैं कहीं और खो गया था। तीन साल पहले की कोई घटना याद आते ही, मैं गुम होने लगा था ! खैर···आप कुछ कह रही थीं ?'

उसे देखकर, यूं अन्यमनस्क होने की क्या वजह आ पड़ी, शर्मिला समझ नहीं पाई।

उसकी तरफ से डॉक्टर भट्टाचार्य ने ही जवाब दे डाला, 'तुमने उसकी जान बचाई, लेकिन वह किन शब्दों में कृतज्ञता जाहिर करे—यही कह रही थी।'

दिलीप डेका ने बेहद गंभीर मुद्रा में सिर हिलाकर कहा, 'नहीं, कुछ कहने

की जरूरत नहीं। ये बातें मुझे अच्छी नहीं लगतीं। मैं बेहद रफ यानी खुर-दुरा और सख्त किस्म का इंसान हूं, रूखे-सख्त काम पसंद करता हूं। मैंने जो किया, कोई भी ताक्तवर मर्द वही करता।'

अचानक उसने दरवाजे की तरफ देखते हुए जोर की हांक लगाई, 'व्हेयर इज कॉफी ?'

दरवाजे पर तैनात लड़का दरवाजे से ही उल्टे पांव भागा और मिनट-भर में कॉफी समेत हाजिर हुआ।

शर्मिला ने तीन प्यालियों में कॉफी उड़ेली और डॉक्टर भट्टाचार्य और मेजर डेका की तरफ बढ़ा दी। गर्म चुरुट और धुएं की वजह से उस आदमी की तीन-तीन अंगुलियां तांबे की तरह बिल्कुल लाल हो उठी थीं।

'थैंक्यू ! अरे, हां, आपका बेटा कैसा है ?'

'अब ठीक है ! उस दवा से काफी फायदा हुआ है।'

कॉफी पीते-पीते वह दुबारा फिर किन्हीं ख्यालों में गुम हो गया। हालांकि कॉफी पीते हुए भी, उसकी निगाहें एकटक शर्मिला के चेहरे पर ही गड़ी थीं ! अचानक वह हंस पड़ा, 'उस दिन, उस भयंकर मुसीबत के वक्त मुझे यह नहीं मालूम था कि आपकी और मेरी तकदीर का इतना गहरा संयोग है। भाईजान ने मुझे पहले नहीं बताया था। उसी ट्रेन-एक्सिडेंट में मेरी भी पत्नी और आठ महीने का बच्चा चल बसा ! आपने शायद सुना ही होगा ?'

शर्मिला ने अस्फुट लहजे में जवाब दिया, 'हां, डॉक्टर भट्टाचार्य बता रहे थे...'

डेका ने उसी तरह उसे घूरते हुए कहा, 'लगता है, यह प्रसंग आपको भला नहीं लग रहा, आइ एम सॉरी !' वह हल्के से हंस दिया, 'असल में, मैं ही किन्हीं अर्थों में शैतान बन गया हूं...अब जिंदगी में कितना भी बड़ा हादसा हो जाए, बर्दाश्त कर सकता हूं....'

शर्मिला कुछेक मिनट बाद ही, काम का बहाना बनाते हुए उठ खड़ी हुई। बेटे के प्रसंग के अलावा भी कहीं कोई परेशानी थी। उसके बिल्कुल आमने-सामने बैठने पर लगता है, उस आदमी में पौरुष-भाव बेहद प्रबल है। उस कालआंधी में, उसके बेहोश तन को जाने कितनी बार, कितनी मुद्राओं में, इस आदमी ने अपने अंतरंग अधिकार में लिया होगा—इसके ख्याल-मात्र से वह अंदर तक सिहर उठी।

कई दिनों की लगातार बारिश के बाद आकाश अब जरा साफ हो आया, रोगियों की कतार लग गई। खैर, शर्मिला यही तो चाहती है। वह काम में

बिल्कुल डूब जाना चाहती है। आजकल तो वह बाबुल से भी ज्यादा बात-चीत नहीं करती। अंदर-ही-अंदर किसी हादसे के इंतजार में वह बिल्कुल जड़ हो आई है। कोई हादसा होनेवाला है—कब, कैसे और कहां, उसे बस इसी का इंतजार है।

मरीज बेहद खुश···! वे लोग अपनी मेम डॉक्टर को मानो बिल्कुल नए रूप में पा गए हों। उस भयंकर मुसीबत और उससे बचकर लौट आने की कहानी वे भी सुन चुके थे। जब वह बेहोश हो गई थी, तब खुद अपनी जान खतरे में डालकर कौन उसे घर तक पहुंचा गया, उसे भी वे पहचान गए थे। सबके सब मेजर की प्रशंसा में पंचमुख हो उठे। यह अफसर यहां कुल साल-भर ही रहा था, लेकिन उनके गांव के लिए काफी कुछ कर गया। वह जितना कड़ियल इंसान है, उतना ही क्रोधी भी। लेकिन उसके सीने में भी दिल है। उसके दुबारा लौटने की खबर सुनकर वे लोग खुशी से भर उठे।

इन लोगों को इतनी खबर कहां से ज्ञात हो गई, इस बारे में वह अंदाजा लगा सकती है। उस आंधी-पानी की भयंकर रात को···पार्वती और डॉक्टर भट्टाचार्य के अलावा कंपाउंडर हॉनड्रिक भी कैंप में उसके लिए परेशान रहा, उसकी वापसी की राह देखता रहा। रात के ग्यारह बजे, उस बुरी हालत में, शर्मिला को बांहों में उठाए, मेजर को कैंप में दाखिल होते हुए देख चुका था। उनके लौटने के बाद भी, वह करीब घंटे-भर वहीं रहा। मेजर जब अपने कैंप वापस जा रहा था, वह काफी दूर तक उसके साथ-साथ गया था। उसके बाद अपने घर लौटा था। अतः ऐसी वीरता की कहानी, सिर्फ उसीके गांव में ही नहीं, शायद कई-कई गांवों तक फैल चुकी है।

···शाम को वह पासवाले गांव में कोई मरीज देखने पैदल ही निकल पड़ी। वहां भी लोगों की जुबान पर उस ऊपरवाले की मेहरबानी के चर्चे और मेजर की तारीफें! उस वक्त तो हद ही हो गई, जब वह एक मरीजा को देखने पहुंची। कई दिनों से उस औरत को तेज बुखार था और वह बिल्कुल बिस्तर से लग गई थी। उसकी बीमारी का हाल पूछने के पहले, उस औरत ने ही उसकी तबीयत के बारे में खोज-खबर लेनी शुरू कर दी। वह बेहद ममता से शर्मिला की पीठ और अंग-अंग पर हाथ फेरती रही। उसके बाद एकसाथ ही उस ऊपरवाले और मेजर की नेकनामी का स्तुति-पाठ करती रही। उसने सुन रखा था, बाकी फौजी अफसरों के मुकाबले यह अफसर कहीं ज्यादा दारू पीता है, लेकिन दूसरे अफसरों की तरह पीकर बहकता नहीं! उसी औरत ने ही उसके कानों में फुसफुसाकर बताया—दारू के लोभ में मिलिट्री बाबुओं की अय्याशी के लिए छोकरी जुटाना—काफी हद तक उसी अफसर की डांट-फटकार की वजह से कम हो गया है। अगर वह किसीको रंगे हाथों पकड़ लेता

है, तो उसी वक्त उसे सख्त सजा भी दे डालता है।

उस शाम कैंप लौटते हुए अनजाने-में-ही शर्मिला का मन उचाट हो आया। उस आदमी की इतनी तारीफें सुनकर, वह इतना कमजोर क्यों पड़ने लगी है? वह अफसर, अन्य साधारण अफसरों से कहीं ज्यादा दारू पीता है, यह सुनकर उसे किंचित खुशी हुई थी। किसी का भी शराब पीना, वह बिल्कुल बर्दाश्त नहीं कर पाती। उतनी-उतनी शराब पीकर, अपने होश ठिकाने रखना भी, उसकी निगाहों में कोई बड़ी बात नहीं थी। बीवी-बच्चे खो गए, दुश्मनों की बंदूक की नली का खौफ झेलते हुए, डेढ़ साल युद्धबंदी की हालत में गुजारे; नसें फौलाद क्यों नहीं हो जाएंगी? उसकी फौलादी ताकत का जोर, उससे ज्यादा और किसने महसूस किया होगा? उसका मुंह दबाकर, उसे शराब तक पिला दी। बोतल पर सिर्फ उसके होठों का ही नहीं, उसकी जीभ तक का स्पर्श था! वही बोतल उसने अपने गले में भी उड़ेल ली।

भयंकर गुस्से के पलों में उस आदमी की यह हरकत उसकी धृष्टता लगी थी, लेकिन वह खुद भी जानती है, यह कहीं से भी धृष्टता नहीं थी। सच बात तो यह थी कि उस आदमी के सामने आते ही या उसकी चर्चा सुनते ही, वह अपने पोर-पोर में एक अनजाना स्पर्श महसूस करती है। इसी स्पर्श के अहसास को वह अपने दिमाग से खारिज कर देना चाहती है।

कैंप के दरवाजे तक आते ही, अचानक वह ठिठक गई। कमरे के अंदर धींगा-मुश्ती हो रही थी'''। अजब हंगामा मचा हुआ था। शर्मिला दबे पांव कमरे के सामने आ खड़ी हुई। दिलीप डेका बाबुल को खिलौने की तरह सिर पर बिठाता, इस हाथ से उस हाथ तक गोल-गोल घुमाता'''फिर झटके से पीठ पर उतार लेता। उसके नन्हे-मुन्हे शरीर को मनमाने ढंग से उलट-पलट रहा था! बाबुल को भी खासा मजा आ रहा था। वह खुशी के मारे चीख रहा था और जोर-जोर से खिलखिला रहा था।

पीछे मुड़कर देखते ही, निगाहें टकरा गईं! उसी तरह हंसते हुए, दिलीप डेका ने बाबुल को पीठ पर से उतार दिया और रूमाल से पसीना पोंछते हुए बोला, 'आपका यह बेटा, मेरे बदन की ताकत देखे बिना छोड़ ही नहीं रहा था! आपके कंपाउंडर ने उसे बताया है कि मेरे बदन में ऐसी जब्बर ताकत है कि उस भयंकर आंधी-तूफान में, पूरे दो मील तक मैं बेहोशी की हालत में, फूल की तरह आपको उठाकर ले आया। सो, मुझे इसे जोर दिखाना ही पड़ा!'

कंपाउंडर से वाबुल की गहरी दोस्ती है। लेकिन आज पहली बार शर्मिला कंपाउंडर पर बमक पड़ी। वैसे गुस्सा आने के बावजूद, उसे जाहिर न करने की क्षमता उसमें है। लेकिन जाने क्या हुआ, इस वक्त वह क्षमता-बोध खो बैठी।

उसने बेहद गंभीर, लेकिन शांत लहजे में कहा, 'अपनी ताकत दिखाकर आपने तारीफ का काम नहीं किया, वह अभी भी काफी कमजोर है!'

दिलीप डेका एकदम से सकपका गया, 'आइ एम सो सॉरी! मुझसे भयंकर गलती हो गई! सच, मुझे ख्याल ही नहीं रहा!'

लेकिन बाबुल बीच में ही टपक पड़ा और उसने सारा मामला गड़बड़ कर दिया। उसने छूटते ही कहा, 'क्यों मां? मैं तो अब अच्छा हो गया हूं! तुम्हीं ने तो कहा, कल से स्कूल भी जाना पड़ेगा!'

शर्मिला ने उसकी तरफ आंखें तरेरकर देखा, 'तू बहुत पाजी हो गया है! जा, आंटी के पास जा!'

बेटा भी खासा मिजाज रखता है! मां ने खामखाह ही उसे डांट दिया, यह जाहिर करने के लिए वह पैर पटकते हुए दूसरे कमरे में चला गया।

दिलीप डेका किंचित अवाक् निगाहों से शर्मिला को घूरता रहा। इस तरह की अभ्यर्थना नितांत अप्रत्याशित थी।

शर्मिला भी अंदर-ही-अंदर संकोच से गड़ गई। उसने स्थिति को सम्हालने की कोशिश की, 'इसमें भला आपका क्या कसूर? यह लड़का ही ऐसा बंदर-पना करने लगता है कि···! आप बैठिए तो!'

यूं बाहरी लोगों के लिए बैठने का इंतजाम बाहर वाले बरामदे में है। लेकिन यह खुराफात तो 'बेडरूम' में चल रहा था। लेकिन अब अपनी रुखाई पर पर्दा डालने के लिए, उसने उसे बाहर के बजाय कमरे में ही बैठने को कहा।

दिलीप डेका बेंत की कुर्सी खींचकर बैठ गया। शर्मिला अपने बिस्तर पर बैठ गई।

उसने सायास सहज होते हुए सवाल किया, 'यानी अब आपकी तबीयत बिल्कुल ठीक है?'

'हां, कमोबेश, ठीक ही हूं! बाकी रहा रीढ़ की हड्डी का दर्द, वह आसानी से जानेवाला नहीं!'

शर्मिला ने कहा, 'तब तो आपके लिए भी यूं भाग-दौड़ करना उचित नहीं।'

वह उसके चेहरे की तरफ देखता हुआ मंद-मंद मुस्कराने लगा। अचानक

उसने सवाल किया, 'अच्छा मैडम, एक बात पूछूं? यूं बेवजह गुस्सा करना आपका स्वभाव नहीं लगता, लेकिन आज अनायास ही कर बैठीं! है न?'

शर्मिला अंदर-ही-अंदर नर्वस हो आई।

'दरवाजे पर आपको देखते ही मुझे जाने क्यों लगा, कि मेरे आने से, वह आंटी या कौन तो है न'''जिसके पास अभी-अभी आपने बेटे को भेजा है'''. एकदम से बौखला गई। उसी तरह आप भी मेरे आने से क्षुब्ध हुई हैं।'

वह हल्के-हल्के मुस्कराता रहा। शर्मिला की निगाहें एकबारगी उसके चेहरे पर टिक गईं, 'उसका नाम पार्वती है, मेरा बेटा उसी के हाथों पलकर बड़ा हुआ है, लेकिन पार्वती ने ऐसा क्या किया?'

'मेरे आते ही, उसने छूटते ही कहा—आप मरीज देखने गई हैं और मुझे विदा कर देने की कोशिश की। जब मैंने पूछा—आप कितनी देर में लौटेंगी, तब जवाब मिला—कुछ ठीक नहीं, रात भी हो सकती है'' इस बीच आपका बेटा बोल उठा—आप शाम तक आने को कह गई हैं। उसके इस जवाब पर, वह औरत भी आपकी ही तरह एकदम से भड़क गई। आपका बेटा मेरे पास आना चाहता था, लेकिन वह उसे आने देने को तैयार नहीं। अंत मे मैंने ही इशारे-इशारे में सख्ती दिखाते हुए कहा—मैं मिलिटरी का आदमी हूं! मन-मिजाज भी हर वक्त ठीक रहे यह जरूरी नहीं! बेहतर यही है कि मुन्ने को यहीं छोड़कर वह कमरे से दफा हो जाए। यूं धमकाए जाने पर वह बिफरती हुई अंदर चली गई।'

सच बात तो यह थी कि जाने क्यों शर्मिला को भी मन-ही-मन गुस्सा आ रहा था। लेकिन उसने अपना गुस्सा दबाते हुए कहा, 'असल मे वह उसे बेहद प्यार करती है। इन दिनों उसकी तबीयत ठीक नहीं, सो नजरों से ओट नहीं करना चाहती।' उसने हंसकर फिकरा कसा, 'लेकिन आपने उसके इस व्यवहार पर एकदम से 'मिलिटरी का आदमी' होने का रौब गालिब कर दिया?'

उसने भी जोर का कहकहा लगाते हुए जवाब दिया, 'असल में आदत से लाचार हूं! इस अरुणाचल प्रदेश में हर जगह मिलिटरी का ही रौब-दाब चलता है! खैर, आप मरीज देखने कहां गई थीं, जंग बस्ती में?'

जंग बस्ती ही सबसे नजदीकी गांव है। शर्मिला ने सहमति में सिर *हिलाया।*

'वहां के बहुत-से लोग आठ-नौ मील चलकर, मुझे भी देखने आए थे। बड़े भले हैं वे लोग! हर कोई आपका भी खासा गुणगान कर रहा था।'

प्रसंग बदल जाने पर शर्मिला ने भी राहत की सांस ली। उसने भी मुस्कराकर कहा, 'आज मरीज देखने जाकर, आपकी भी तारीफें सुनते-सुनते मेरे कान भी दर्द करने लगे'''

दिलीप डेका को मानो खासा मजा आने लगा। उसने जवाब दिया, 'अब आप ही अंदाजा लगाइए, कितना फर्क है! आपकी तारीफें सुनकर मेरे कान जुड़ा गए और मेरी तारीफें सुनकर आपके कान दर्द करने लगे!'

इतना कहते-कहते उसने अपनी जेब से सिगार-केस निकाली और वही पतली-सी चुरुट खींच ली।

शर्मिला ने हंसते हुए दुबारा एक वार किया, 'अगर आपका मिलिटरी मिजाज दुबारा न भड़क उठे, तो मैं अर्ज करूं, यह चीज यहां न पिएं, तो क्या बहुत असुविधा होगी आपको ?'

दिलीप डेका ने सकपकाकर चुरुट होठों से हटा लिया और उसे दुबारा केस में रखते हुए कहा, 'आइ एम रियली सॉरी! वाकई, पहले मुझे इजाजत ले लेनी चाहिए थी!'

शर्मिला की आवाज अब और अधिक सहज हो आई, 'नहीं, चूंकि आपको इसकी आदत है, अतः तकलीफ तो होगी! ऐसा कीजिए, आप एक प्याली कड़ी कॉफी पीजिए, आपको अच्छा लगेगा।'

'वेरी गुड आइडिया! चलिए मंगाइए! मुझे यहां आए हुए घंटा-भर हो गया···मैंने तो कॉफी की उम्मीद ही छोड़ दी थी!'

किसी ने उसे फिर टहोका मारा था, लेकिन वह हजम कर गई। उसने जवाब दिया, 'वाकई, पार्वती से गलती हुई है; बस, पांच मिनट के अंदर आपको कॉफी मिलती है।'

वह उठकर कॉफी के लिए कहने को अंदर गई और अगले ही पल लौट आई। दिलीप डेका की निगाहें, उस वक्त कमरे में टंगी, मोहन हजारिका की तस्वीर पर टिकी हुई थीं। उधर आंटी कॉफी बनाने चली गई थी। मौका पाकर बाबुल फिर इस कमरे में आ धमका! नया मेहमान अंकल डेका उसे काफी दिलचस्प आदमी लगा। दिलीप डेका ने बांहें फैलाकर उसे अपने करीब खींच लिया। एक बार अच्छी तरह उसका चेहरा निहारने के बाद, उसकी निगाहें दुबारा तस्वीर पर जा लगीं। अगले ही पल उसकी नजरें तस्वीर से फिसलती हुई, शर्मिला की तरफ मुड़ीं।

उसने हल्के अंदाज में राय जाहिर की, 'आपके बेटे की शक्ल मां या बाप किसी पर भी नहीं गई।'

कमरे में बाबुल के दाखिल होते ही, शर्मिला दुबारा परेशान हो उठी। लेकिन उसकी राय सुनते ही, वह नासमझ की तरह अंदर-ही-अंदर दुबारा तिलमिला उठी।

उसने व्यंग्य-भरे लहजे में कहा, 'यह क्या बहुत आश्चर्य की बात है ?'

'नहीं! नहीं!' पल-भर में वह शख्स मानो किन्हीं सुदूर यादों में खो

गया। उसने कहा, 'मेरे बच्चे को देखकर, लोग कहा करते थे, उसे बिल्कुल *मां की शक्ल मिली है !'*

शर्मिला अंदर-ही-अंदर सजग हो उठी। उसकी निगाहें भी तीखी हो आईं। लेकिन नहीं, वह शख्स कहीं और खोया हुआ था, उसके बेटे को नहीं देख रहा था। उसमें किसी और चेहरे की तलाश भी नहीं थी।

हाथ में कॉफी की ट्रे सम्हाले, पार्वती कमरे में आई। प्यालियों में कॉफी वह उड़ेलकर ही लाई थी। शर्मिला ने एक प्याली उठाते हुए बाबुल को बुलाया, 'चल, इधर आ...'

दिलीप डेका ने एक हाथ में कॉफी की प्याली उठा ली, दूसरे हाथ से बाबुल को और करीब लपेटकर कहा, 'रहने दीजिए, मुझे जरा भी दिक्कत नहीं हो रही।'

बाबुल भी मानो यही चाहता था। उसने बेहद उत्साह से उसकी तरफ मुड़कर पूछा, 'तुम लोगों के कैंप में ये बड़े-बड़े घोड़े हैं न ? मैंने देखा है। मुझे चढ़ाओगे ?'

'जरूर चढ़ाऊंगा !' उसने भी उत्साह से जवाब दिया।

'कब ?'

'जब मन हो ! अपनी मां के साथ जीप में चले आना, या किसी दिन मैं ही जीप लेकर आऊंगा, मेरे साथ चलना, घोड़े पर चढ़ लेना !'

बाबुल का उत्फुल्ल चेहरा मां की तरफ घूम गया। लेकिन मां का चेहरा जरा भी मेहरबान नहीं लगा। मायूस होकर वह दुबारा दिलीप डेका की तरफ मुखातिब हुआ, 'मां चढ़ने नहीं देगी ! गुस्सा करेगी !'

शर्मिला बेटे पर और भड़क गई। बाबुल की बात सुनकर, उस आदमी की कौतुकी निगाहें दुबारा उसके चेहरे पर गड़ गईं !

उसने पूछा, 'क्यों, घोड़े पर चढ़ने की बात सुनकर, आप क्या सचमुच घबरा गईं ?'

शर्मिला को यह मेल-जोल बिल्कुल पसंद नहीं आ रहा, यह बात पार्वती के अलावा और कौन समझ सकता है ?

उसने गंभीर मुद्रा में जवाब दिया, 'ऐसी बारिश के मौसम में जो घोड़े पर चढ़ाएगा और जो चढ़ेगा, मेरा ख्याल है, दोनों ही यदि कम उत्साह दिखाएं, तो बेहतर है !'

दिलीप डेका को मानो और ज्यादा मजा आने लगा।

उसने चेहरे पर बनावटी गंभीरता लाते हुए कहा, 'हां...बारिश और बारिश के मौसम में ये पहाड़ी रास्ते...शायद आपको काफी दिनों तक याद रहेंगे ? कम-से-कम मुझे तो याद रहेंगे !'

पार्वती तमतमाई हुई बाहर निकल गई। उसका ख्याल था, दीदीजी उसे वावुल को ले जाने का हुक्म देंगी।

शर्मिला ने सीधे-सीधे दिलीप डेका की तरफ देखा। उस आदमी का मतलब इतना गूढ़ नहीं था कि समझने में दिक्कत हो! उस आंधी-तूफान वाले दिन का जिक्र करते हुए, उस दिन कामेंग-कैंप में भी उसने हंसते-हंसते सुनाया था, 'भगवान ने आज तक उसे सिर्फ एक ही शुभ और सुखद दिन अता किया है!'

वावुल को लगा, घुड़सवारी का प्रस्ताव शायद रद्द हो गया, अतः उसने दूसरी फर्माइश पेश की, 'तब मुझे एक दिन जंगल दिखाने ले चलो न!'

'सब होगा!' दिलीप डेका दुवारा उत्साहित हो उठा। उसने उसके माथे को हल्के-से चूमकर, उसे अपने घुटनों पर वैठा लिया, 'हां, तो क्या-क्या शिकार करोगे? भालू···या हाथी?'

'मेरे पास तो वंदूक ही नहीं है, शिकार काहे से करूंगा!'

'नहीं है? तो वंदूक आ जाएगी। इस बार जब मैं बमडिला जाऊंगा, तुम्हारे लिए एक छोटी-सी वंदूक ले आऊंगा। लेकिन मान लो, तुम्हारी मां अगर उस वंदूक से किसी डाकू को मारने को कहें, तब?'

'डाकू? डाकू कहां है?' वावुल अचकचा गया।

दिलीप डेका ने और गंभीर होकर, अपनी सीने की तरफ अंगुली रखकर बताया, 'ये रहा!'

'धत्!' वावुल हंस पड़ा।

ऐसा सहज-सरल हंसी-मजाक शर्मिला को भी वुरा नहीं लगना चाहिए था। लेकिन वह मन-ही-मन तल्ख हो आई। उस हादसे की वजह से यह आदमी दोस्ती का जरा ज्यादा ही हक हासिल करना चाहता है!···अभी थोड़ी देर पहले कह रहा था—आपका वेटा मां-वाप पर विल्कुल नहीं गया। उसके वेटे को देखकर लोग कहा करते थे, मां का चेहरा ही मानो काटकर वैठा दिया गया हो।—शर्मिला की तभी से इस आदमी पर कड़ी निगाह थी। नहीं, उसके वेटे में, अपनी वीवी की सूरत तलाश करने का, उसे कोई चाव नहीं। मुमकिन है, उसे इसका ख्याल भी न आया हो! अतः जाहिर है कि अव तक वावुल से इतने हेल-मेल की वजह एकमात्र वही है! इसी वात को लेकर, शर्मिला कुछ ज्यादा ही सजग और विक्षुब्ध हो उठी है।

शाम का धुंधलका कमरे में मटमैला अंधेरा विखेर गया। शर्मिला ने उठकर वत्ती जला दी। ठीक उसी वक्त बाहर से जीप का हॉर्न सुनाई दिया।

दिलीप डेका ने मुंह विचकाकर कहा, 'कमबख्त विल्कुल घड़ी के कांटे पर आ धमका!'

शर्मिला ने झांककर देखा, बाहर एक मिलिटरी जीप खड़ी थी।

बाबुल को गोद से उतारकर, दिलीप उठ खड़ा हुआ।

उसने शर्मिला से कहा, 'कैंप में मेरे यार-दोस्तों का ख्याल है अभी भी मैं बिल्कुल स्वस्थ नहीं हूं ! ठंड लगते ही, फिर बुखार आ सकता है। आप क्या कहती हैं ?'

शर्मिला ने उसकी आंखों में झांकते हुए कहा, 'जो लोग आपका इलाज कर रहे हैं, वे ही बेहतर बता सकते हैं। लेकिन ठंड लगाना, किसी भी स्थिति में ठीक नहीं।'

'अच्छा, तो मैं चलूं !'

'नमस्कार !' उसने बेहद सर्द लहजे में महज सौजन्यवश ही हाथ जोड़ दिए।

दिलीप डेका जहां-का-तहां खड़ा-खड़ा दो-चार पल उसे घूरता रहा, 'अब फिर कब मुलाकात होगी ?'

शर्मिला ने तल्ख-सा जवाब देना चाहा, 'अब दुबारा मुलाकात की जरूरत भी क्या है ?' लेकिन यह जवाब शायद शोभन नहीं था।

उसने होंठों पर जबरन मुस्कान खींचकर कहा, 'जब आप बिल्कुल ठीक हो जाएं, तो किसी दिन आइएगा।'

अचानक वह गंभीर हो उठा, 'अगर मैं यह सोच लूं कि मैं बिल्कुल ठीक हूं तो मैं सचमुच ही स्वस्थ रहता हूं। मैं जल्दी ही आऊंगा, क्योंकि मुझे अभी तक यह बात समझ में नहीं आई है कि आप लोगों के लिए मैं इतना अवांछित क्यों हूं ? अच्छा, गुड-नाइट !'

वह चला गया। शर्मिला जहां-की-तहां बुत बनी खड़ी रही। बाबुल दौड़कर बाहर निकल गया। अपने नन्हें-नन्हें हाथ उठाकर उसे टा-टा कर रहा था। लेकिन वह आदमी सीधे जीप-ड्राइवर की बगल में जा बैठा और उसके बाद उसने एक बार भी पीछे मुड़कर नहीं देखा।

बाबुल लौट आया, 'मम्मी, अंकल डेका वेरी-वेरी गुड !'

शर्मिला को इतना गुस्सा आ रहा था कि बाबुल को पकड़कर झकझोर देने का मन हुआ। लेकिन यह लड़का भयंकर ढीठ है ! कहीं उसे यह बात याद रह गई और उसने उस आदमी से चुगली जड़ दी कि मां ने ऐसा-ऐसा किया या कहा, तो फिर और एक मुसीबत !

शर्मिला अब क्या करे ? पार्वती तो थोड़ा-बहुत उखड़ भी जाती है, लेकिन वह उखड़ भी नहीं पाती। दिलीप डेका आते ही बाबुल को हांक लगाता है। बाबुल भागकर बाहर निकल जाता है। उसके साथ जीप में सैर को निकल

पड़ता है; जंगल घूमने चल देता है! अगर शर्मिला घर पर भी हो, तो उसे रोक नहीं पाती।

उसका हाथ पकड़कर दिलीप डेका ही कहता है, 'इसे जरा सैर कराने ले जा रहा हूं, मैडम, आप फिक्र मत कीजिएगा!'

अगर वह घर पर नहीं होती, तो बाबुल का निकलना बंद! पार्वती डेका के मुंह पर ही साफ-साफ कह देती है, 'दीदीजी उसे बाहर निकलने को मना कर गई हैं। मेहरबानी करके आप मुझे परेशानी में न डालें!' कभी कोई और ही बहाना जड़ देती है, 'दीदीजी ने मुझे मुन्ना बाबू को लेकर फलां टैम पर, फलां जगह बुलाया है। मैं तो मालिक के हुकुम की बंदी हूं!'

सबसे ज्यादा अचरज की बात तो यह थी कि उस आदमी के साथ न जाने देने पर सात साल का बच्चा एकदम से अड़ जाता, बिफरने लगता, गुस्से में चीख-चिल्लाहट मचा देता। उसकी इस बदतमीजी पर शर्मिला ने एकाध बार उसे उचित सजा भी दी। लेकिन अंकल डेका से मुलाकात होते ही, बेटे ने मां के खिलाफ नालिश भी जड़ी है।

उसकी शिकायत सुनकर दिलीप डेका का भी मिजाज चढ़ जाता। वह शर्मिला से कैफियत-तलब के अंदाज में सवाल करता, 'मुझसे आप डरती क्यों हैं, मैडम? इतना अविश्वास क्यों करती हैं? यहां इस बच्चे का कोई संगी-साथी नहीं, वह मुझे पसंद करता है, मुझे भी वह अच्छा लगता है—ऐसे हंस-मुख-प्यारे बच्चे को लेकर जब आप यहां आ ही गई हैं, तब उसे उसके मन की खुराक भी तो जुटानी होगी। इसमें आपको क्यों एतराज है? और मैं ही भला आपको इतना नापसंद क्यों हूं?'

बेटे को अपने वश में करने का कोई-न-कोई मकसद तो होगा ही! इधर दो-तीन महीनों के अंदर बमडिला से उसके लिए बड़ी-सी हवाई बंदूक, चढ़ने के लिए बैटरीवाला घोड़ा, बारिश के दिनों में कमरे के अंदर ही खेलने के लिए किस्म-किस्म के खिलौने और एक छोटा-सा कैमरा भी आया है! शर्मिला को मालूम है, ये सब मामूली दामोंवाली चीजें नहीं हैं। वह दिलीप डेका को कई बार मना भी कर चुकी है। लेकिन वह आदमी मानो और जिद्दी हो उठा है। जितना वह मना करती है, वह और ज्यादा चीजें लाता है! इसके अलावा उसके साथ घूमने-घामने और हो-हुल्लड़ का आकर्षण तो खैर है ही!

लेकिन आजकल उसे रह-रहकर जाने क्यों वहम होने लगा है। उस आदमी के साथ इस नन्हें-से बच्चे का कहीं कोई चरित्रगत मेल नजर आता है। बड़ा होकर, शायद यह लड़का भी उसी की तरह गंवार, अक्खड़ और लापरवाह होगा। जब-जब यह ख्याल आता, उसके पैरों तले से जमीन सरकने लगती है। अभी भी शक-सुबहा की काफी गुंजाइश है। यह बात अलग है कि

अब वह शक धीरे-धीरे जड़ पकड़ता जा रहा है। वैसे अब उसने सारा कुछ तकदीर के भरोसे छोड़ दिया है। लेकिन अगर कहीं उस आदमी को पता चल जाए ! अगर कहीं उसका संदेह सच हो जाए ! तब शर्मिला क्या करेगी ? अच्छा, इस साल का कॉन्ट्रैक्ट खत्म होते ही, अगर वह अपने बेटे को लेकर यहां से निकल भागे तो !

लेकिन उसे मालूम है, ऐसा वह नहीं कर सकती।

खैर, अब तो हर दिन के अंत में, वह चैन की सांस लेती, आज भी बाबुल उसी का है ! अगले दिन की तकदीर वह नहीं जानती ! कहीं ऐसा तो नहीं कि एक बड़ी अनिश्चयता की वजह से ही वह उस आदमी के प्रति मन-ही-मन इतना क्षुब्ध हो उठी है ? वरना जिस आदमी के प्रति उसे जिंदगी-भर अहसानमंद होना चाहिए था, उसी के प्रति वह अंदर से इतनी तल्ख और सख्त क्यों है ?···यह आदमी सिर्फ बाबुल के आकर्षण से इतनी जल्दी-जल्दी, इस घर में आ धमकता है, इस बात पर भी विश्वास करने की कोई वजह नहीं। बाबुल पर कब्जा जमा करके, अंदर-ही-अंदर वह उसकी तरफ बढ़ने की कोशिश कर रहा है—यह बात बहुत बार, बहुत तरीकों से स्पष्ट हो चुकी है। जब वह गौहाटी में थी, उसने दूर-दूर से ही अपने प्रति लोगों की तारीफ-भरी नजरें देखी और महसूस की हैं। लेकिन किसी में भी कभी इतनी हिम्मत नहीं हुई कि उसके करीब आए ! यहां भी वह उसी तरह सख्त और अक्खड़ बनी रहती है, लेकिन इस आदमी के लिए मानो यही सबसे बड़ा आकर्षण बन गया है।

आजकल स्कूल से वापसी में यही उसे अपनी जीप में ले आता है। छुट्टी के वक्त वह स्कूल के गेट के सामने हाजिर रहता है। उसके बाद दोनों जन हो-हल्ला मचाते हुए घर लौटते हैं। दो-तीन दिनों तक यही रवैया देखने के बाद, शर्मिला अपने को रोक नहीं पाई, 'इतनी तकलीफ उठाकर आपको स्कूल जाकर, उसे लाने की क्या जरूरत है ? डॉक्टर भट्टाचार्य ने तो इंतजाम कर ही दिया है !'

उसके बोलने के लहजे में जाने कितनी विरक्ति छिपी थी। उसकी बात पर दिलीप डेका की निगाहें सीधे उसके चेहरे पर गड़ गईं ! थोड़ा ठहरकर उसने कहा, 'आपने मेरी मक्कारी वाकई पकड़ ली है ! इस वक्त उसे लेकर यहां आने में, आप भी दिख जाती हैं ! अगर मैं अपने वक्त से आऊं, तो आप मेरे आने के खौफ से, कहीं पहले से ही हट-बढ़ जाती हैं। यहां तक कि मूसलाधार बारिश में भी आप घर पर नहीं होतीं !'

शर्मिला पल-भर को स्तब्ध हो रही। वह उसकी आंखों में देखते हुए, उसकी इस धृष्टता का कोई जवाब भी देनेवाली थी, लेकिन इससे पहले ही, वह बरामदे से एक कुर्सी खींच लाया और जमकर बैठ गया।

उसने कहा, 'आप नाराज न हों; मेरे लिए झूठ बोलना उतना आसान नहीं ! जब वक्त काटे नहीं कटता, तो मैं अक्सर वन-जंगल में भटकता रहता हूं, अच्छा लगता है ! कभी-कभी अपने कैंप की खिड़की के पास बैठा-बैठा, चुपचाप पहाड़, आकाश या बरसात का नजारा लिया करता हूं, मुझे ये नजारे भी बहुत भले लगते हैं। इसी तरह आपको देखकर अगर मैं थोड़ा खुश हो लेता हूं, तो आप मुझे इससे वंचित क्यों करती हैं ? आप अच्छी लगने लगी हैं, इसका संयोग तो उस ऊपरवाले ने ही अता कर दिया—इसमें भला मेरा क्या कसूर ?'

थोड़ा ठहरकर उसने दुबारा फिर बात शुरू की। इस बार उसने जो कहा, वह भी कभी किसी मर्द ने उससे नहीं कहा, 'बात यह है कि मैं आपको रसिक की तरह देखता हूं, कंगाल या चोर की तरह नहीं ! लेकिन आप यह मत समझ लीजिएगा कि मैं आपके रूपजाल में उलझ गया हूं ! मेरी बीवी शायद आपसे ज्यादा सुंदर थी। लेकिन आपमें खूबसूरती के अलावा और भी कुछ है ! जी नहीं, आपकी भरी-पूरी देह का भी मुझे आकर्षण नहीं। इससे भी परे और अनोखा कुछ है—मैं उसे ठीक-ठाक पकड़ नहीं पाता, लेकिन शायद उसे समझने के लोभ में ही मैं बार-बार यूं दौड़ा चला आता हूं !'

शर्मिला उसकी तरफ बस, एकटक देखती रही। उसने सख्त लहजे में ही उस आदमी को कुछ समझाना भी चाहा था, लेकिन जाने क्यों मन के अंदर बोलने की ताकत ही नहीं जुटा पाई।

उसने झुंझलाई हुई आवाज में झिड़क दिया, 'यह सब आप क्या बक रहे हैं ? ऐसी ऊलजलूल बातें क्यों करते हैं ? आपको अच्छा लगता है तो शौक से पहाड़, आकाश या बरसात देखा कीजिए या अपनी खूबसूरत बीवी की तस्वीर निहारा कीजिए; लेकिन यह सब आप अपने घर बैठकर कीजिए। आपकी इन हरकतों को कोई अशोभन नहीं कहेगा !'

उसकी तरफ देखते हुए वह आहिस्ते-आहिस्ते उठ खड़ा हुआ, 'सुनिए, मन में तीखी चाह भी हो, तो भी मैं कोई अशोभन काम नहीं कर पाता। मेरे साथ यही मुश्किल है ! अपनी हिमायत में कई नजीर भी पेश कर सकता हूं, लेकिन वह सब सुनकर, आप मुझे गर्दनिया देकर निकाल बाहर करेंगी। अब मैं चलता हूं...'

शर्मिला उसे जाते हुए देखती रही। वही तीन महीने पहले...उसी पहाड़-वाली मुसीबत की तरफ इशारा होगा। अतः इशारे का ठीक-ठीक अंदाजा न होने के बावजूद उसका चेहरा शर्म से लाल हो उठा। हुंह, उसका तो यूं भी मन हो रहा था, उसे अभी, इसी वक्त गर्दनिया देकर निकाल बाहर करे।

ऐसे ही एक और दिन !

उसने बाहर से ही देख लिया, दरवाजे पर मिलिटरी-जीप खड़ी थी, लेकिन वह बरामदे में नजर नहीं आया। यानी वह बेड-रूम में होगा। शर्मिला के मन में एकबारगी कई-कई तल्खियां उभर आईं। ना, इस किस्म की गुस्ताखी वह हरगिज बर्दाश्त नहीं कर सकती। आज वह डॉक्टर भट्टाचार्य से बात करेगी ! लेकिन कमरे में कदम रखते ही, उसे थोड़ी हैरानी हुई। दिलीप डेका वहां नहीं था। पार्वती अकेली ही बुत बनी खड़ी थी। वह अस्वाभाविक रूप से गंभीर थी।

'क्या बात है···?'

पार्वती ने कोई जवाब नहीं दिया, अंगुली उठाकर रोगी देखने वाले कमरे की तरफ इशारा कर दिया। शर्मिला आंगन पार करके सामने आ खड़ी हुई। दिलीप डेका मरीज वाले बिस्तर पर लेटा हुआ था। बाबुल उसके सिर पर सचमुच का बैंडेज बांध रहा था।

शर्मिला गुस्से से बिफर पड़ी, 'बाबुल ! बैंडेज क्यों बर्बाद कर रहा है ?'

बेटा एकबारगी चौंक गया। दिलीप डेका ने अपनी एक आंख खोलकर उसकी तरफ देखा !

उसने गंभीर मुद्रा में कहा, 'अभी बात नहीं हो सकती ! इंजेक्शन देकर मुझे बेहोश करके सिर का ऑपरेशन किया गया है !···चलो, चटपट काम पूरा कर डालो, बाबुल साहब ! देखो, मुझे होश आने लगा है···'

लेकिन मां के आते ही, जमा-जमाया खेल उखड़ गया ! शर्मिला को हंस देना चाहिए था, लेकिन वह गुस्से से फुनफुनाती हुई उल्टे पांव वापस लौट आई। वह समझ गई, पार्वती भी इसीलिए मुंह लटकाए हुए है।

थोड़ी ही देर बाद दिलीप डेका भी हंसते-हंसते कमरे से बाहर निकल आया। शर्मिला गुस्से से तिलमिलाती हुई बरामदे में ही बैठी थी, वरना वह आदमी सीधे उसके बेडरूम में ही घुसा चला आता।

शर्मिला के करीब आते हुए दिलीप डेका पलभर को ठिठक गया।

'एक जरा-से बैंडेज के लिए आप क्या वाकई नाराज हो गईं ? कोई बात नहीं, कल मैं आपको, अपने कैंप से एक के बदले दर्जन-भर बैंडेज ला दूंगा।'

शर्मिला ने तमककर जवाब दिया, 'जी नहीं, जरूरत नहीं ! मैं चीजों की बर्बादी कतई पसंद नहीं करती !'

दिलीप डेका ने भी, अगले पल, बनावटी गंभीरता ओढ़कर सवाल किया, 'लेकिन, आप क्या इसे रोक सकती हैं ?'

उसकी बातों के लहजे में उसका इशारा बिल्कुल स्पष्ट था। मानो वह

कहना चाहता हो कि शर्मिला खुद अपनी जिंदगी को क्या तबाही की राह पर नहीं ले जा रही है ?

शर्मिला की तीखी निगाहें उसके चेहरे पर टिक गईं, 'आप अपना मतलब साफ-साफ बताएंगे ?'

वह हंस पड़ा, 'मेरा अंदर-बाहर बिल्कुल उजला, धुला और साफ है, मैडम ! आपके मन में ही धुंध है, इसीलिए आपको समझने में मुश्किल हो रही है ! बाइ-दि-बाइ, मास्टर बाबुल का जन्मदिन कब पड़ता है, बताइए तो, मैडम !'

उसका पहला वाक्य सुनकर, शर्मिला सोच में पड़ गई। वह मन-ही-मन शायद कोई जवाब तैयार कर रही थी, जो उसकी अंतरंगता की कोशिश पर पानी फेर दे। लेकिन दिलीप डेका का अगला सवाल, उसके सीने पर मानो अचानक गहरी चोट कर गया।

'क्यों ?'

'मेरे ही पूछने पर बाबुल ने बताया कि उसका जन्मदिन कभी मनाया ही नहीं गया। आपका इकलौता बेटा है, इसलिए हैरानी हुई !'

शर्मिला एकाध पलों के लिए उसकी तरफ एकटक घूरती रही। उसने जानबूझकर अभी तक उसे बैठने को नहीं कहा। इस बीच उसे एक तारीख भी सूझ गई। हां, जिस दिन मोहन को खोकर उसने बाबुल को पा लिया, वही तारीख बताएगी !

शर्मिला ने कहा, 'इसकी वजह है !' उसके बाद उसने उस तारीख का जिक्र करते हुए, उसे वेधती हुई निगाहों से देखा। उसका अगला सवाल भी बेहद रूखा था, 'आपको तारीख याद है या वह भी भूल गए ?'

दिलीप सकपका गया। उसे तारीख बखूबी याद थी। उसका चेहरा मर्माहत हो उठा, 'आइ एम सॉरी, मैडम ! सच, मैं बहुत-बहुत शर्मिंदा हूं !'

वह उठकर चला गया। वह उसी तरह निश्चल बैठी रही। उसने क्या अंदाजा लगाया होगा, वह समझ गई। हां, उसने मान लिया होगा कि मोहन के जाने के बाद···९-१० महीने बाद ठीक उसी तारीख को बाबुल ने जन्म लिया होगा। शायद इसीलिए उसका जन्मदिन नहीं मनाया जाता।

शर्मिला ने आज तक कभी झूठ का सहारा नहीं लिया। झूठ की राह चलने को वह कतई राजी नहीं।

लेकिन उस तारीख का जिक्र सुनकर उस सख्त आदमी के चेहरे पर कोई संस्कारगत असर होता है या नहीं, उसने टटोलना चाहा, क्योंकि उसे अभी तक यह जानकारी नहीं हो सकी है कि उस लड़के में कहीं वह अपनी बीवी का चेहरा तो नहीं देखता है। लेकिन उस तारीख के बावजूद उसके चेहरे के भावों

में कोई परिवर्तन नजर नहीं आया।

पार्वती उसके करीब आकर खड़ी हो गई। उसका चेहरा अभी तक उसी तरह गंभीर था। उसने कहा, 'मैं मेजर डेका के जाने का इंतजार कर रही थी, दीदीजी, आपको कुछ बताना है!'

उसकी इतनी-सी बात पर शर्मिला बुरी तरह चौंक उठी। शायद उसे कुछ-कुछ अंदाजा भी हो गया था। उससे कुछ पूछने की हिम्मत नहीं हुई।

पार्वती की बातें सुनकर वह सन्न रह गई।

...मेजर डेका बाहर के कमरे में बैठकर बाबुल से बातें कर रहा था। अचानक उसने जेब से चुरुट निकाली। पार्वती सामने नहीं थी, आड़ में ही सारा तमाशा देख रही थी। उसने चुरुट होंठों में दबाई तो सही, लेकिन सुलगाई नहीं! डिब्बे में पड़ी चुरुटों को उसने एकाध बार सूंघा। उसके बाद होंठों में दबी चुरुट भी चुरुटकेस में रखकर, जेब के हवाले की।

बाबुल ने पूछा, 'क्यों? तुमने चुरुट पी नहीं?'

मेजर डेका ने हंसकर जवाब दिया, 'नहीं! तेरी मां को पसंद नहीं, सो छोड़ने की कोशिश कर रहा हूं!'

अगले ही पल उसने पार्वती को आवाज लगाकर, कॉफी बनाने का हुक्म दिया। जब वह कॉफी लेकर उसे बेड-रूम में देने गई, तब दरवाजे पर ही ठिठक गई। दिलीप डेका हजारिका साहब की तस्वीर के सामने खड़ा-खड़ा बुदबुदाकर कह रहा था, 'तुम जैसा बदनसीब, शायद कोई नहीं होगा, दोस्त! तुम्हें कैसी दुर्लभ चीज मिली थी, तुम्हें यह जानने का भी मौका नहीं मिला!'

पार्वती के कमरे में दाखिल होते ही, उसने हड़बड़ाकर उसकी ट्रे में रखी हुई कॉफी की प्याली उठा ली। कॉफी का दो-एक घूंट लेने के बाद उसने मस्तीभरी आवाज में कहा, 'फर्स्ट क्लास! इतनी बढ़िया कॉफी के लिए, तुम्हें कोई इनाम देना चाहिए!' अचानक उसने सवाल किया, 'अच्छा, बाबुल के छुटपन की कोई तस्वीर होगी?...मुझे दिखाओगी?'

पार्वती ने सख्त मुद्रा में सिर हिलाकर बताया, 'राजा-भइया के बचपन की कोई तस्वीर है या नहीं, मुझे नहीं मालूम!'

...शाम ढलने के बाद, शर्मिला बरामदे से उठकर कमरे में आ खड़ी हुई। उसने एक बार मोहन की तस्वीर पर नजर डाली। बाबुल भी उसी कमरे में पढ़ रहा था। उसकी निगाह उस पर ठहर गई। हां, उसका दिल कह रहा था, जल्दी ही कोई हादसा होनेवाला है! चाहे जिस भी वजह से हो, उस आदमी के मन में कुछ-कुछ शक जरूर होने लगा है। मुमकिन है, उसे बाबुल

में अपनी बीवी की शक्ल कुछ ज्यादा ही नजर आने लगी हो ! ना, इसके अलावा उसके संदेह की कोई वजह नजर नहीं आती। चूंकि वह काफी चतुर है, इसीलिए उसने बाबुल के जन्मदिन की तारीख काफी घुमा-फिराकर पता लगाने की कोशिश की। स्वतःसिद्ध भाव से किसी फैसले पर पहुंचने की गरज से उसने उसके बचपन की तस्वीर देखने की फर्माइश कर डाली।

पार्वती का चेहरा बेहद तमतमाया हुआ और सख्त नजर आया। असल में बाबुल ही उस आदमी का एकमात्र लक्ष्य नहीं है। बाबुल पर अपने अधिकार के पंजे बिठाकर, उसका ख्याल है, वह शर्मिला को भी अपने अधिकार में कर पाने में कामयाब हो जाएगा। बेटे की कमजोरी शर्मिला के मन में जितनी चढ़ती जा रही है, बेशक उसकी उम्मीदें भी फैलती जा रही हैं। वह इस कमजोरी का फायदा उठाकर, अपना हक जमाने के चक्कर में ही है ! अब तो वह इतना आगे बढ़ गया है कि बाबुल के आगे साफ-साफ ही कह उठा—तेरी मां को पसंद नहीं, इसलिए चुरुट छोड़ने की कोशिश कर रहा हूं ! यह उसका सरासर दुस्साहस है ! शायद वह मोहन की तस्वीर के सामने खड़ा होकर, बकवास कर रहा था। मोहन के दुर्भाग्य की बात उठाकर, शायद वह अपने सौभाग्य की प्रतीक्षा में दिन गिन रहा है !

ना, अब शर्मिला और चुप नहीं रह सकती, उसे कुछ न कुछ करना ही होगा ! बाबुल वाकई दिलीप डेका का बेटा है, यह बात अगर साबित हो जाए, तो वह आखिर कर भी क्या सकती है ? सब कुछ जान-सुन और समझकर, पराए बच्चे को लेकर वह चोर की तरह नहीं भटकेगी ! खैर, प्रमाणित करने की जिम्मेदारी उसी आदमी की है। प्रमाण मिल जाए, तो बेटे को उसके पिता के हाथों सौंप देना पड़ेगा। हां, चाहे कलेजे के टुकड़े-टुकडे ही क्यों न हो जाएं, उसे बेटा वापस करना ही होगा।···लेकिन वह आदमी जो उसे भी अपने करीब खींचने की साजिश कर रहा है, उसकी वह धज्जियां उड़ा देगी। ना, वह अपने फैसले से टस-से-मस नहीं हो सकती।

अगले दिन ही डॉक्टर भट्टाचार्य को फोन करके, उसने जीप भेज देने को कहा। उनसे उसे कुछ जरूरी बातें करनी हैं, यह भी उन्हें बता दिया। भट्टाचार्य खुद आने को तैयार थे। लेकिन शर्मिला ने उन्हें मना कर दिया। वह खुद ही पहुंच जाएगी, घर पर बातें नामुमकिन हैं !

जीप आते ही शर्मिला रवाना हो गई।

उसे अपने सामने बैठाकर, डॉक्टर भट्टाचार्य भी उसके करीब आ बैठे।

'हां, बोलो, क्या बात है ? लगता है, कोई बहुत गंभीर बात है !'

'नहीं, बहुत गंभीर तो नही ! असल मे, आपके मित्र मेजर ढेका की वजह से मुझे कुछ परेशानी हो रही है।'

डॉक्टर भट्टाचार्य आसमान से गिरे, 'अरे···! तुम्हारे बेटे को तो वह बेहद प्यार करता है ! तुम्हारी भी काफी तारीफ करता रहता है !'

'तारीफ के पीछे उसकी कोई उम्मीद भी नजर आने लगी है, उसी वजह से मैं परेशान हूं ! मैं चाहती हूं, आप यह बात उनसे साफ-साफ कह दें !'

डॉक्टर भट्टाचार्य कुछ देर उसकी तरफ हैरतअंगेज निगाहों से देखते रहे। उन्होंने भरी हुई आवाज मे कहा, 'यह शख्स कभी कोई छोटा काम कर सकता है, यह सोचने मे भी मुझे तकलीफ होती है। उसने तुमसे ऐसा कुछ कहा है ? या ऐसा कोई काम किया है ?'

शर्मिला एकाध पल को खामोश हो रही। वह चाहे जितनी भी क्षुब्ध हो, लेकिन झूठ तो नही बोल सकती।

उसने जवाब दिया, 'ना, ऐसा तो उसने कुछ नही किया। लेकिन निहायत खूबसूरत आड मे ही सही, आभास-इशारे या मेल-मिलाप मुझे पसंद नही।'

कुछ देर डॉक्टर भट्टाचार्य के मुंह से मानो बोल ही नही फूटा ! थोड़ा ठहरकर उन्होंने धीमी आवाज में अपनी बात शुरू की, मानो अपने-आप से बात कर रहे हों, 'हैरत है ! आजकल वह भी तुम्हारे और पार्वती के बारे मे हंस-हंसकर अजीब-अजीब बातें सुनाया करता है। कल रात अचानक उसने जो सवाल किया, मैं तो सुनकर ताज्जुब में पड़ गया। तुम्हें भी बतानेवाला था···'

शर्मिला भी चकित हो उठी, 'कल रात···कब ?'

'नही, ठीक रात तो नही, लेकिन शाम के बाद···'

मानो वह शर्मिला के यहां से निकलकर सीधे यहीं आया था। उसने पूछा, 'आजकल वह मेरे या पार्वती के बारे मे ऐसी क्या अजीब-अजीब बातें करता है ?'

'यही कि···तुम दोनो ही उसे पसंद नही करती। बेटे से इतना घनिष्ठ मेल-मिलाप भी बर्दाश्त नही करना चाहती।···तुम लोग कहीं उससे डरती हो ! ···डरने की वजह भी वह थोडा-बहुत समझ गया है। यह बात अलग है कि जो कुछ वह सोच रहा है, वह गलत भी हो सकता है ! लेकिन फिर भी उसे ऐसा लगता है, क्योंकि तीन-साढ़े तीन साल पहले की घटना, उसे अक्सर याद आने लगती है।'

'कौन-सी घटना ?' शर्मिला बेचैन हो उठी।

'यह उसने नही बताया, मैंने पूछा भी था। उसने कहा, अभी नही बता सकता, शायद मुझे ही गलतफहमी हुई हो।'

शर्मिला को भी अचानक जैसे कुछ याद आ गया ! तीन महीने पहले, उस आंधी-तूफान वाले हादसे के बाद, जब वह डॉक्टर भट्टाचार्य के साथ उसके कैंप में उसे देखने गई थी, तब भी वह उसके चेहरे की तरफ देखते-देखते हठात् अनमना हो उठा था। शर्मिला की कृतज्ञता की बात भी उसके कानों तक नहीं पहुंची। डॉक्टर भट्टाचार्य के आवाज देने पर, उसने खुद ही कहा था—तीन साल पहले की कोई घटना याद करके, वह अन्यमनस्क हो उठा था। तीन-साढ़े तीन साल पहले ऐसी कौन-सी घटना हुई होगी, शर्मिला न उस दिन समझ पाई, न आज !

शर्मिला की निगाहें डॉक्टर भट्टाचार्य के चेहरे पर टिकी रहीं, '···और कल शाम उसने ऐसा कौन-सा सवाल किया कि आप ताज्जुब में पड़ गए ?'

'कल भी वह तुम्हारी ही बेभाव तारीफें किए जा रहा था, काफी खुश-खुश था। अचानक उसने पूछा—अच्छा, वह प्यारा-सा बच्चा बाबुल, मिसेज हजारिका का सगा बेटा है या उन्होंने गोद लिया है ?'

पलभर में शर्मिला के चेहरे का रंग फक्क पड़ गया। उसका यूं नर्वस होना, डॉक्टर भट्टाचार्य से छिपा नहीं रहा। वह भी ठिठक गए ! उन्होंने पूछा, 'क्यों ? क्या हुआ ?'

'कुछ नहीं ! उसके बाद क्या हुआ ?'

'उसके बाद और क्या ? मैं तो यह सवाल सुनकर एकदम से सकते में आ गया। मैंने हंसकर कहा—भई, मुझे जहां तक मालूम है, वह उसका अपना बेटा है ! दिलीप डेका ने मेरी बात काटते हुए, एतराज जाहिर किया—कब से जानते हो ? बच्चे को जन्म से ही जानते हो ? मैंने कहा—नहीं, मैंने बच्चे को आठ-नौ महीने की उम्र में देखा था। लेकिन तुम यह सब अजीबोगरीब सवाल क्यों कर रहे हो ?'

डॉक्टर भट्टाचार्य अपनी रौ में कहते रहे—'दिलीप डेका ने हंसते-हंसते जवाब दिया—मेरे दिमाग में ऐसे ही अजीबोगरीब ख्याल आते रहते हैं ! खैर, छोड़िए ! उसके बाद वह तुम्हारे डैडी का नाम, ब्याह के बारे में पूछता रहा ! ···तुम्हारी वह इतनी-इतनी तारीफें करता है···तुम किस खानदान की बेटी हो और कितनी हिम्मती हो, मैं उसे बताता रहा !···लेकिन वह तुम्हारे बेटे को वाकई बहुत प्यार करने लगा है···उसे क्या सचमुच तुम्हारे यहां जाने को मना कर दूं ?'

शर्मिला को आत्मस्थ होने में थोड़ा वक्त लगा। जो होना था, हो चुका, जिसे जो समझना था, समझ चुका ! लेकिन बावजूद इसके उसने अपनी तरफ से यथासाध्य कोशिश की, डॉक्टर भट्टाचार्य पर कोई बात जाहिर न हो।

उसने बेहद सर्द लहजे में कहा, 'हां, मना कर दीजिएगा ! कहिएगा,

उन्होंने जिस तरह मेरी जान बचाई, उसके लिए मैं हृदय से कृतज्ञ हूं ! लेकिन इसके बदले में कुछ और'''हां, ठीक यही बात कहिएगा'''किसी भी एहसान के विनिमय में, मैं अपनी जिंदगी किसी से नहीं जोड़ना चाहती !'''जब वह बाबुल को इतना प्यार करने लगे हैं, तो वह उससे जितना चाहे हेल-मेल बढ़ाए, स्कूल की छुट्टी के बाद, जैसे उससे मिलते हैं, मिल लिया करें ! उसके साथ घूम-फिरकर, खेलकर'''ठीक वक्त पर घर छोड़ जाया करें ! लेकिन वह मुझसे किसी तरह का वास्ता रखें, यह मैं नहीं चाहती !'

डॉक्टर भट्टाचार्य की जुबान पर मानो ताला पड़ गया हो ! उन्हें भी जो समझना था, समझ गए ! अब और कोई सवाल निरर्थक होता।

रात !

घर में बत्ती जल रही थी। शर्मिला कोई किताब पढ़ने की कोशिश कर रही थी, लेकिन एक अक्षर भी पढ़ा नहीं गया। बाबुल उसी कमरे में, अपनी छोटी कॉट पर गहरी नींद सोया हुआ था ! शायद पार्वती भी सो चुकी थी। उसने किताब फेंक दी। गर्दन घुमाकर, एक बार सोए हुए बाबुल का चेहरा निहारा, उसके बाद उसकी निगाह मोहन की तस्वीर पर जा टिकी। उस चेहरे के साथ एक और चेहरा उभर आया—दिलीप डेका ! तस्वीर का चेहरा—बेहद बच्चा-बच्चा ! दूसरा चेहरा—भरपूर मर्द ! ना, उसे नजरअंदाज करना नामुमकिन है ! उस चेहरे की तरफ से मुंह फेर लेना भी असंभव है ! वह चेहरा उसे निश्चित मौत के हाथों से बचा लाया था। वक्त से दवा पड़ जाने की वजह से बाबुल की जान का खतरा भी टल गया था। उसके बदले में जितनी कृतज्ञता उसे मिलनी चाहिए थी, वह उसे शर्मिला से कभी नहीं मिली। आज वह उसे जो जबर्दस्त चोट देने का इंतजाम कर आई है, उसके लिए भी मन में कहीं बेतरह छटपटाहट हो रही थी।

शर्मिला ने खीजकर, अपनी परेशानी झटक देने की कोशिश की। हां, उसने बिल्कुल ठीक किया ! जो उचित था, वही किया ! वह उसकी किसी कमजोरी को प्रश्रय नहीं देगी, अपनी भी किसी कमजोरी का फायदा नहीं उठाने देगी !

अगले दिन वह नहीं आया। उसके बाद, तीन सप्ताह गुजर गए, उसमें मुलाकात नहीं हुई। लगता है, डॉक्टर भट्टाचार्य ने उसे अच्छी तरह समझा दिया। लेकिन शर्मिला अपनी जबान से उनसे कुछ नहीं पूछ सकी। उसे उम्मीद थी कि वह खुद ही कुछ बताएंगे, लेकिन उन्होंने कोई बात नहीं की। बाबुल बता रहा था, अंकल डेका, स्कूल की छुट्टी के बाद, रोज ही उससे मिलने आते

हैं। उससे खूब बातें करते हैं, अपने कैंप में ले जाकर, खूब खेलते हैं, उसके बाद अपनी जीप से उसे घर भेज देते हैं।

बाबुल ने अंकल डेका से पूछा भी था, कि वह उसके घर क्यों नहीं जाते। पहले तो उसने अत्यधिक व्यस्तता का बहना किया। अंत में एक दिन हंसकर कहा—इसकी वजह तू अपनी मां से ही पूछ लेना।

बाबुल ने शर्मिला से सीधे-सीधे सवाल किया, 'अंकल डेका आजकल हमारे घर क्यों नहीं आते ?'

शर्मिला ने भी रूखा-सा जवाब दिया, 'उनके आने से, मेरे काम-काज में असुविधा होती है। खबरदार, तू भी उन्हें घर आने को कभी मत कहना !'

मां की बातें बेटे को पहेली-सी लगीं। अंकल डेका तो मां के काम-काज के वक्त कभी आते ही नहीं। उसने दुबारा सवाल किया, 'तुमने उन्हें आने को मना कर दिया है ?'

'हां...'

मां का चेहरा देखकर, बेटा घबरा गया। उसकी आगे कुछ कहने की हिम्मत नहीं पड़ी। अगले दिन से बेटा भी आकर कुछ नहीं बताने लगा। शर्मिला जानती है, वह डर के मारे कुछ नहीं कहता। लेकिन वह चाहकर भी उससे सीधे-सीधे कुछ नहीं पूछ पाती।

कभी-कभी बस इतना भर पूछ लेती, 'आज लौटने में इतनी देर क्यों हुई ?'

बेटा डरते-डरते जवाब देता, 'अंकल डेका मुझे पकड़ ले गए थे।'

बस !

इसके बाद, उस आदमी के इरादों का ठीक-ठीक अंदाजा लगाना मुश्किल हो आया। इत्ते सारे काम-काज के बीच भी वह हर रोज अपने को तैयार करती है। आखिरी अंक की तैयारी। बाबुल को छोड़ने की तैयारी। हर रोज किसी भावी आशंका से वह मन-ही-मन कांपती। फैसले के लिए दिलीप डेका खुद आए या सारा-कुछ कह-सुनकर डॉक्टर भट्टाचार्य को भेजे। लेकिन उस आदमी को एक-न-एक दिन खुद आना होगा, क्योंकि जब तक वह भरपूर प्रमाण न पेश करे, वह बाबुल को हरगिज नहीं छोड़ सकती। सबसे पहले वह बाबुल के बचपन की तस्वीर मांगेगी। आठ-नौ महीने के बाबुल की तस्वीर उसके पास जरूर होगी, खास कर जब उस बच्चे का अन्नप्राशन भी हो चुका था। इसके अलावा उसे और भी कई प्रमाण पेश करने होंगे, बच्चे का बाप होने के नाते जो-जो उसे मालूम होना चाहिए, वह इसकी भी परीक्षा लेगी। 'डी' नामवाले लाकेट और चेन की जानकारी भी उसे जरूर होगी।

वैसे शर्मिला के मन में चाहे जितनी जल्पना-कल्पना चल रही हो, वह

बखूबी जानती है, दिलीप डेका कच्चा काम करनेवाला शख्स नहीं ! जब वह बेटे पर दावा करने आएगा तो तमाम प्रमाण समेत ही आएगा। आज हो या दस दिन बाद, उसे आना ही होगा !

आजकल सर्दी का मौसम है। अक्टूबर का आखिरी सप्ताह। ऊंचे-ऊंचे पहाड़ों की चोटियों ने बर्फ की पर्तें ओढ़ ली हैं। उसने सुना है, इसके बाद, रास्तों पर भी बर्फ जम जाएगी। उसके बाद ट्रेकिंग के अलावा चलना-फिरना मुहाल हो जाएगा। यहां यह बहुत मुश्किल वक्त होता है। कमरे में आग जलाना जरूरी हो जाता है। कोई भी अपने भरसक घर से बाहर निकलने का नाम नहीं लेता।

डॉक्टर भट्टाचार्य के निर्देशानुसार अपने और बाबुल के लिए, काफी रुपए खर्च करके, उसने दो-दो सेट गर्म कपड़े पहले ही बनवा लिए थे। पार्वती के लिए भी गर्म कपड़े बन चुके थे। वैसे देर-सवेर यह खर्च भी सरकार से वापस मिल जाएगा।

इधर कई दिनों से बाबुल के स्कूल में छुट्टियां चल रही थीं, अतः अंकल डेका से भी मुलाकात नहीं हो रही थी। बाबुल उदास हो गया। मां की वजह से अंकल भी घर नहीं आएंगे, उसे मालूम है।

उस दिन डॉक्टर भट्टाचार्य के आते ही उसने सवाल किया, 'अंकल डेका तुम्हारे कैंप में भी नहीं आते ?'

डॉक्टर भट्टाचार्य ने सिर हिलाकर जवाब दिया, 'तीन सप्ताह की छुट्टी लेकर, तेरे डेका अंकल बाहर गए हुए हैं।'

शर्मिला भी वहीं थी। यह खबर सुनकर उसकी भी निगाहें डॉक्टर भट्टाचार्य की तरफ उठ गईं।

डॉक्टर भट्टाचार्य ने उसकी तरफ मुखातिब होकर कहा, 'हां, उसकी मति-गति की खबर, शायद खुदा को भी नहीं होती। इस मौसम में, जबकि कोई कमरे से बाहर नहीं निकलता, नवाब साहब घूमने चल दिए।'

शर्मिला को एकदम से खटका लगा। वह घूमने नहीं गया है। वह कहीं, किसी खास काम से गया है। लेकिन···मुमकिन है, महज खामखयाली या सनक में ही वह निकल पड़ा हो। वह भला और कहां जाएगा ? मेघालय का मकान तो उसने पार्वती के भइया के मारफत बेच ही डाला है।···शायद वह कोई गवाह या प्रमाण जुटाने निकला है। शायद वहां कोई नाते-रिश्तेदार या परिचित हों, जिसके जिम्मे वह कोई अमानत छोड़ आया हो !

शर्मिला सिर्फ दिन गिन रही है।

इक्कीस दिन गुजर गए। इधर के रास्तों पर बर्फ जमना अभी बाकी है। ऊंचे-ऊंचे रास्तों के बारे में उसे नहीं मालूम। दो-दो पहाड़ों के बीच, इस समतल हिस्से में, कड़ाके की सर्दी मौसम के आखिर में पड़ती है। सिर्फ उसी वक्त··· भयंकर सर्दी के मारे रास्तों पर बर्फ जम जाती है। उन दिनों स्कूल भी बंद हो जाते हैं।

उस दिन शाम चार बजे के करीब घर के दरवाजे पर एक मिलिटरी जीप आकर रुकी। दिलीप डेका जीप से उतरकर, आगे बढ़ा। भयंकर सर्दी के बावजूद उसके बदन पर खास गर्म कपड़े भी नहीं थे।

शर्मिला ने उसे कमरे से ही देख लिया था। वह सीधी होकर बैठ गई। शायद···अब वक्त आ पहुंचा!

बाबुल भागता हुआ कमरे से बाहर निकला और दोनों बांहें फैलाकर उससे लिपट गया। उसने भी उसे गोद में उठा लिया और दोनों गालों पर प्यार किया। अगले ही पल उसे गोद से उतारकर, उसकी अंगुली थामे-थामे, कमरे के अंदर दाखिल हुआ। अचानक जैसे उसे कुछ याद आ गया। वह उल्टे पांव जीप तक लौट गया। एक बड़ा-सा पैकेट उतारकर, वह हंसते हुए दुबारा वापस लौटा।

उसने शर्मिला की ओर मुखातिब होकर कहा, 'बहुत दिनों से बच्चे को देखा नहीं था···इसीलिए चला आया। आप नाराज तो नहीं हो गईं?'

'नहीं! आइए···'

वह बैठ गया। शर्मिला भी उसके सामने आ बैठी।

बाबुल ने पैकेट की तरफ इशारा करते हुए पूछा, 'इसमें मेरे लिए तुम कुछ लाए हो, अंकल डेका?'

'हां, खोलकर देख न!'

उसने लपककर पैकेट खोल डाला। अंदर से एक सेट पहाड़ी गर्म कपड़े! इस ड्रेस में वह सिर से पांव तक ढंक जाएगा, सिर्फ आंख और नाक भर दिखती रहेगी।

नई ड्रेस देखकर बाबुल खुशी से नाच उठा।

दिलीप डेका ने कहा, 'अंदाज से लाया हूं! फिर भी शायद फिट आ जाए!···अंदर जाकर, जरा पहनकर तो दिखा!'

बाबुल उछलते-कूदते अंदर चला गया।

शर्मिला ने कहा, 'उसके पास तो काफी सारे कपड़े थे; नई ड्रेस की जरूरत नहीं थी।'

दिलीप डेका ने जवाब दिया, 'इस इलाके में गर्म कपड़े कभी ज्यादा नहीं होते, मैडम ! मैं तो आपके लिए भी गर्म कपड़े लाना चाहता था, लेकिन हिम्मत नहीं पड़ी !'

उसके चेहरे से लग रहा था, शायद उसे नए सिरे से साहस का रसद मिला हो । उसी के दम पर इतना कुछ कहने की हिम्मत आ गई !

'उफ ! क्या कड़ाके की ठंड है ! एक प्याली गर्मागर्म कॉफी पिलाएंगी ?'

शर्मिला ने पलटकर पीछे देखा । पार्वती दरवाजे के पीछे ही लगी खड़ी थी । हां, शर्मिला को उसकी भी घबराहट का अंदाजा था । उसे कुछ बोलने की जरूरत नहीं पड़ी । इशारा पाकर वह हुक्म की तामील के लिए चल पड़ी ।

बाबुल नई ड्रेस पहनकर बाहर निकला ।

दिलीप डेका ने उसे अपने से लिपटाते हुए कहा, 'अरे, वाह ! तुम तो काफी जंच रहे हो, मास्टर बाबुल, बिल्कुल पहचाने ही नहीं जा रहे !'

बाबुल ने फर्माइश की, 'कित्ते दिन हो गए, तुम्हारे साथ घूमने नहीं गया ! आज घुमाने ले चलो न, अंकल !'

शर्मिला ने उसे डपटते हुए कहा, 'आज बेहद सर्दी है, बाबुल ! निकलने की कोई जरूरत नहीं !'

आखिरकार उसने दिलीप डेका की गोद में ही धींगा-मुश्ती शुरू कर दी ।

कॉफी आते ही शर्मिला ने आदेश दिया, 'अब अपनी आंटी के साथ अंदर कमरे में जाओ !' उसने पार्वती को हिदायत दी, 'इसके ये कपड़े उतार दो । घर के अंदर इतने गर्म कपड़े पहनने की कोई जरूरत नहीं ।'

उसका इशारा समझकर वह बाबुल का हाथ पकड़े-पकड़े अंदर कमरे में चली गई । अब उसे आसानी से बाहर नहीं आने देना है, वह दीदीजी का इशारा-समझ गई थी ।

कॉफी पीते-पीते दिलीप डेका ने ही सवाल किया, 'इस इलाके की इतनी भयंकर सर्दी में आप पहली बार रह रही हैं ! तकलीफ तो नहीं हो रही ?'

'ना, ऐसी कोई खास तकलीफ नहीं !'

'असल में कड़ाके की सर्दी अभी पड़ी कहां ? जब पड़ेगी, तब जरा दिक्कत होगी ।'

शर्मिला चुप थी । वह मानो आबोहवा पर ही बातें करने आया हो ।

कॉफी की प्याली एक ओर रखते हुए, दिलीप डेका ने किंचित मुस्कराते हुए कहा, 'असल में मैं सिर्फ बच्चे को ही देखने दौड़ा-दौड़ा आया हूं, यह सच नहीं ! मैं जिस ख्याल से कुछ दिनों को बाहर गया'''उसमें कहीं कोई गलत-फहमी की गुंजाइश नहीं, यह जानकर आपके प्रति मेरी श्रद्धा और बढ़ गई है। इसीलिए मुझसे रहा नहीं गया, आपको एक नजर भर देखने के लोभ में

चला आया !'

साफ जाहिर था कि इस बीच उसे लोभ और साहस की खासी खुराक मिल चुकी है।

शर्मिला ने बेहद सौम्य-शांत मुद्रा में सवाल किया, 'आप कहां गए थे ?'

'पहले गोहाटी। उसके बाद, पास ही एक और जगह। उस रिश्तेदार के घर गया था, जहां से मेरी बीवी बच्चे समेत उस अभिशप्त ट्रेन में सवार हुई थी। वहां से तेजपुर होता हुआ भालुकपांग। वापसी में बमडिला···और वहां से सीधे आपके पास !'

दिलीप डेका ने काफी हल्के मूड में बातें कीं। शर्मिला की निगाहें एकटक उसके चेहरे पर गड़ी रहीं।

दिलीप डेका हल्के-हल्के मुस्कराता रहा। थोड़ा ठहरकर उसने फिर अपनी रौ में बात शुरू की, 'असल में बात यह है कि जिस दिन आप मुझे देखने गई थीं, उसी दिन, किसी खास वजह से, एकाएक मुझे खटका लगा—बाबुल आपका सगा बेटा नहीं !'

अब सिर्फ परखने का सवाल था। किसी तरह की उत्तेजना जाहिर करना बेकार था। शर्मिला ने ठंडी आवाज में पूछा, 'ऐसा क्यों लगा ?'

'वह कारण इतना हास्यास्पद है कि अब उसका जिक्र न करना ही बेहतर है। बस लगा था···'

शर्मिला का ख्याल था, बेहोशी की हालत में, जब वह उसे कमरे में लिटाने आया होगा, बाबुल को देखकर अचानक उसे अपनी बीवी की याद आ गई होगी, शायद इसीलिए उसे शक हुआ होगा, इसीलिए वह वजह बताने से कतरा गया।

शर्मिला ने सवाल किया, 'आप गोहाटी क्यों गए थे ?

'गया था ! क्योंकि आपके और आपकी पार्वती के रवैये से मेरा शक दिनोंदिन पक्का होता जा रहा था। आप लोग नहीं चाहती थीं कि मैं यहां आऊं ! बेटे के साथ मेलजोल भी आप लोगों को सख्त नागवार गुजरता था। लेकिन मैं अपने को ऐसा कूड़ा-कर्कट नहीं समझता कि मुझे यूं फेंक दिया जाए ! किसी खास वजह से मैंने पार्वती से बाबुल के छुटपन की तस्वीर दिखाने को कहा। पहले तो वह चौंक उठी, उसके बाद कतरा गई। आपसे बाबुल के जन्मदिन के बारे में पूछा तो आपने जो जवाब दिया, सुनकर वाकई तकलीफ हुई। लेकिन जीप में जाते-जाते अचानक मेरे मन में ख्याल आया, आपने जो जवाब दिया या तारीख बताई, उसका कोई और मतलब भी हो सकता है। नन्हें-से बच्चे को जन्मदिन के जश्न से वंचित रखें, आप जैसी व्यक्तित्वसंपन्न औरत के लिए, जाने क्यों बेहद अस्वाभाविक लगा। मैं उसी पल डॉक्टर भट्टाचार्य के

पास पहुंचा। सुना, वह भी उन दिनों बाहर गए हुए थे। उन्होंने भी आपके बेटे को आठ-नौ महीने की उम्र में देखा था···'

इतना बोलने के बाद, उसकी निगाहें शर्मिला के चेहरे पर टिक गईं। उसने एक गहरी सांस ली। शर्मिला भी एकटक उसका चेहरा पढ़ती रही, उसी तरह स्थिर! शांत!

दिलीप डेका ने दुबारा अपनी बात शुरू की, 'गौहाटी में दो बड़े-बड़े अखबारों के दफ्तर में गया। ट्रेन-दुर्घटना के दिनों का अखबार निकलवाकर देखा। आपने जो तस्वीर प्रकाशित की थी, वह भी देखी,' वह कौतुकी निगाहों से उसकी तरफ देखता रहा, 'अच्छा, बाबुल के गले में एक सोने की चेन थी! उसमें एक लॉकेट भी था—'डी' लिखा हुआ! आपने इश्तहार में उस लॉकेट के बारे में नहीं लिखा! क्यों?'

ना! अब उसे किसी प्रमाण की जरूरत नहीं! उसका यह सवाल शर्मिला की तमाम दुविधाओं का समाधान बन गया।

उसने बमुश्किल जवाब दिया, 'इश्तहार में वह बात क्यों नहीं लिखी, आपकी समझ में नहीं आया? या आपका ख्याल है, मैं बेटे को हजम करने का मतलब गांठ रही थी?'

'छिः! छिः!' दिलीप डेका ने कहा, 'लगता है आप मुझसे नाराज हो गई हैं!···लेकिन अपने इतने बड़े गम के बावजूद किसी अनजान-अपरिचित, पराए बच्चे को सचमुच मां की ममता देकर, आपने उसको बचा लिया··· रास्ते में जितनी बार यह ख्याल आया है, आप मेरे सामने आ खड़ी हुई हैं और मेरा मन आपके प्रति श्रद्धावनत हो आया है। हां, आपने लॉकेट और चेन का जिक्र क्यों नहीं किया, अब समझ में आ गया!'

शर्मिला उसी तरह शांत और सौम्य बनी रही। उसके चेहरे पर भावावेग के निशान तक नहीं थे।

उसने सर्द लहजे में पूछा, 'आपके पास, बच्चे की छुटपन की कोई तस्वीर है?'

'हां, है!'

'यहीं···आपके पास है?'

'हां, यहीं है।'

'कल लेते आइएगा।'

'क्यों? क्या करना है?'

'उसे दिखाकर, अपना बेटा ले जाइएगा। एक बात और! उसके साथ पार्वती का होना बहुत जरूरी है, वरना आप दोनों को ही बड़ी परेशानी होगी!'

दिलीप डेका उसके चेहरे की तरफ देखता हुआ मंद-मंद मुस्कराता रहा।

थोड़ी देर वाद उसने जुवान खोली, 'वावुल को ले जाने की वात तो मैंने नहीं कही···हां, इतना जरूर चाहता हूं कि हर वक्त वह मेरी नजर के सामने हो···मेरे पास हो। लेकिन···उसे पाकर···उसके साथ क्या उसकी मां भी मुझे मिल जाएगी ?'

अगले ही पल शर्मिला का चेहरा गुस्से से लाल हो उठा। वह आहिस्ते से कुर्सी छोड़कर उठ खड़ी हुई, 'मिस्टर डेका, यू आर गोइंग टू फार! आप अपनी हद से आगे वढ़ गए हैं! वेटे को वश में करने के पीछे आपकी यही मंशा थी···यह मुझे वहुत पहले ही पता चल गया था! मैंने जिंदगी में वहुत-सी तकलीफें झेली हैं, यह भी वर्दाश्त कर लूंगी, जान लीजिए! अव आप जा सकते हैं!'

उस दिन जैसे आंधी-तूफान वाले दिन डांट पिलाई थी, उसी लहजे में आज फिर वह गरज उठा, 'स्टॉप इट! वेटे के वारे में तुम्हें खौफ है, मुझे नहीं! अगर ऐसा न होता, तो इस अर्से में मेरे लिए तुम्हारे मन में थोड़ी-वहुत इज्जत जरूर होती। उस आंधी-तूफान वाली रात से ही मैं तुम्हें प्यार करने लगा हूं। उस वक्त वेटे का कोई सवाल नहीं था। वेहोशी की हालत में, कभी तुम्हें कंधे पर, कभी सीने से लगाए हुए, इतना लंवा रास्ता तय किया और हर पल अपने को डांटता रहा—जो मुझे यूं अनायास ही मिल गई, अगर मैं उसकी रक्षा न कर पाऊं, तो तुफ है मेरे जीने पर! मैं गिरता-पड़ता, तुम्हें अपने सीने में छुपाए, जी-जान से सिर्फ यह कोशिश करता रहा, कि तुम्हें चोट न लगे!'

आज वह सिर्फ 'तुम' ही कहकर वात नहीं कर रहा था, वल्कि उन तमाम वातों का जिक्र कर रहा था, जिसे सुनने की कल्पना-मात्र से शर्मिला मर जाना वेहतर समझती थी। स्तव्ध! क्रुद्ध! आग्नेय दृष्टि!

दिलीप डेका कुर्सी छोड़कर उठ खड़ा हुआ। अचानक वह उसके वेहद करीव झुक आया, 'और सुनोगी ? मैंने उस दिन कहा था न, मैं चाहकर भी, कोई अशोभन काम नहीं कर पाता ? मैंने कहा नहीं था, मैं ऐसी नजीर भी पेश कर सकता हूं, जिसे सुनकर, तुम मुझे गर्दनिया देकर निकाल वाहर करोगी ? सुनोगी वह नजीर ? उस रात···जव-जव दम लेने के लिए, कहीं रुका, तुम्हें अपनी गोद में लिटाकर, टॉर्च की रोशनी में कई वार तुम्हें नजर भर-भरकर देखता रहा, मारे सर्दी और वारिश के तुम्हारे होंठ विल्कुल नीले पड़ गए थे···तव···वेहद तीखी चाह जगी थी मन में···अपनी देह की सारी गर्मी···अपने होंठों में समेटकर···तुम्हारे होंठों पर रख दूं। मेरी जगह कोई

और होता, तो शायद यही करता···लेकिन मैं···नहीं कर पाया ! मुझे लगा था···ऐसी भयंकर मुसीबत में···अचानक जैसे तुम मिली हो···उसमें एक अजीब किस्म की पवित्रता है, मैं उसे नष्ट नहीं कर सकता ! हां, कभी सोच-कर देखना···मैं बेटे के बहाने तुम्हें पाना चाहता था या···तुम्हारे लिए तुम्हें पाना चाहता था ?'

*वह कमरे से बाहर चला गया।*

शर्मिला उसी तरह खड़ी-खड़ी स्तब्ध-क्रुद्ध निगाहों से उसे जाते हुए देखती रही। हां, उसे अभी भी यकीन नहीं आ रहा था कि बाबुल को मुहरा बनाकर वह उसे दखल करने के चक्कर में नहीं था। लेकिन अभी-अभी वह जो सुना गया, वह भी कहीं से झूठ नहीं लगा, इस ख्याल से वह मन-ही-मन और जल-भुन गई। चूंकि मन की कुढ़न जाहिर नहीं कर पा रही, अतः अपने प्रति ही अथाह क्रोध उमड़ आया।

इसी तरह एक-एक करके पंद्रह दिन और गुजर गए। शर्मिला हर दिन राह देखती···वह आदमी तस्वीर लेकर आज जरूर आएगा। लेकिन वह नहीं आया। उसे लगा, उसका न आना भी···मानो कोई साजिश हो ! बेटे को उसकी निगाहों के सामने रखकर उसकी तकलीफ और बढ़ाने के मन्सूबे बांध रहा है। असल में अब उसे फोटो की भी मांग नहीं करनी चाहिए थी। उसी वक्त बाबुल को बुलाकर सीधे-सीधे कोई फैसला कर लेना चाहिए था।

उस दिन स्कूल से वापस आकर बाबुल ने बुझी हुई आवाज में सूचना दी, 'अंकल डेका दो-तीन दिन में यहां से जा रहे हैं, मां !'

शर्मिला अचकचा गई। अंदर कहीं वह धक् से रह गई। उसने बाबुल को भरपूर नजर से देखते हुए पूछा, 'क्यों, तुमसे कुछ कह रहे थे ?'

'हां, कह रहे थे ! मुझे उदास देखकर, उन्होंने मुझे समझाया—जो लोग नौकरी करते हैं, वे एक जगह नहीं रह सकते, उन्हें बहुत-सी जगहों का चक्कर लगाना पड़ता है।'

शर्मिला का चेहरा तमतमा आया। बेटे को छोड़ जाने का मतलब यह हुआ कि वह मुझ पर दया कर रहा है। उसे यह दया बेहद असहनीय लगी।

बाबुल ने जिद करते हुए कहा, 'कल छुट्टी है। अंकल डेका ने वायदा किया है, वह मुझे जंगल घुमाने ले जाएंगे। वह अपनी बड़ी वाली बंदूक भी ले जाएंगे; मैं अपना एयर-गन। मुझसे कहा है—अपनी मां को बता देना।··· मां ! अंकल डेका तो अब जा ही रहे हैं ! कल मैं उनके साथ जंगल घूम आऊं ?'

शर्मिला बेसब्र आवाज में बिफर पड़ी, 'न-हीं !'

'अरे, वाह ! नहीं, क्यों ? उनके बाद, और कौन होगा, जो मुझको जंगल

घुमाने ले जाएगा ?'

शर्मिला ने उसे डपटते हुए कहा, 'जिसके साथ तू जाने को उतावला है न, वही ले जाएगा। इसके बाद, जी भरकर जंगल घूमना, लेकिन कल नहीं···'

मां उसे इतना मायूस कर देगी, बाबुल ने नहीं सोचा था। अगले ही पल, उसका भी दुधमुंहा चेहरा गुस्से से लाल हो उठा, 'हुंह, मुझे फुसलाया जा रहा है ! लेकिन कल मैं जाऊंगा ! जाऊंगा !! जरूर जाऊंगा !!!'

शर्मिला के मन में जाने कैसी आग जल उठी। वह तमककर आगे बढ़ी और चट्-चट् उसके गाल पर दो तमाचे जड़ दिए। उसे दो-चार तमाचे और पड़ जाते, लेकिन पार्वती ने ही दौड़कर उसे बचा लिया।

शर्मिला ने अस्फुट झुंझलाहट-भरी आवाज में कहा, 'बेइमान कहीं का ! अभी से···मुझसे ज्यादा···वह प्यारा हो गया !'

अगले दिन उसीने डॉक्टर भट्टाचार्य से फोन पर दरियाफ्त किया, 'मेजर डेका क्या ट्रांसफर पर जा रहे हैं ?'

उधर से डॉक्टर भट्टाचार्य का जवाब सुनाई दिया, 'हां ! मामला कुछ समझ में नहीं आया। उसने खुद ही ट्रांसफर मांगा···और अब जा रहा है। तुम अगर नाराज न हो तो एक बात पूछूं !'

'पूछिए···'

'तुमसे क्या कुछ कहा-सुनी हुई है ?'

शर्मिला ने सर्द आवाज में जवाब दिया, 'नहीं ! उन्होंने जो प्रस्ताव दिया था, मैं राजी नहीं हुई !'

'···अच्छा, यह बात है !'

'वह कब जा रहे हैं ?'

'शायद परसों। फिलहाल तो वह छुट्टी पर जा रहा है। कुछ दिनों बमडिला में रहेगा, उसके बाद बर्मा-बॉर्डर पर चला जाएगा।'

शर्मिला ने थोड़ा ठहरकर बेहद सपाट लहजे में कहा, 'सुनिए, बाबुल उनका बेटा है ! उनसे कहिएगा—जाते समय उसे भी अपने साथ लेते जाएं ! मैं अब और जिम्मा नहीं ले सकती ! उनसे कहिएगा, कल शाम को चार बजे मैं उनका इंतजार करूंगी ! उस वक्त आप भी मौजूद रहें, तो बेहतर होगा !'

उधर डॉक्टर भट्टाचार्य किस कदर किंकर्तव्यविमूढ़ हो आए थे, शर्मिला समझ रही थी।

करीब मिनट भर बाद उनकी आवाज दुबारा सुनाई दी, 'तुम क्या कह

रही हो, मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा ! बाबुल क्या तुम्हारा बेटा नहीं ?'

'नहीं…'

'लेकिन डेका ने तो मुझे कभी नहीं बताया कि बाबुल उसका बेटा है !'

'हां, न बताकर वह मुझ पर दया करना चाहते हैं ! आप उनसे कह दीजिएगा, मुझे अहसान नहीं चाहिए…और अगर संभव हो तो कल आप भी आ जाइएगा।'

अगले दिन !

सुबह से ही किसी के मुंह में कोई जुबान नहीं ! शर्मिला चुप ! पार्वती निर्वाक् ! बाबुल भी गुस्से में गुम ! आंटी उसके कपड़े-लत्ते-खिलौने समेटकर पैक क्यों कर रही है, उसकी समझ में नहीं आ रहा !

सुबह गुजर गई; दोपहर भी ढल गई। करीब तीन बजे वह किसी मरीज को देखने जाने के लिए तैयार हो रही थी।

जाते-जाते पार्वती को निर्देश दिया, 'मैं चार बजे के अंदर ही लौट आऊंगी। अगर दो-चार मिनट देर हो जाए, तो जो लोग आएं, उन्हें बिठाए रखना।'

पार्वती को मालूम है कौन आने वाले हैं। वह भी मानो पथरा गई थी, खुलकर रो भी नहीं सकती थी !

शर्मिला चार बजने में दस मिनट पहले ही लौट आई। पार्वती दरवाजे पर ही खड़ी थी। चेहरा बिलकुल उतरा हुआ !

घर में कदम रखते ही, उसने जो कहा, सुनकर उसका मन कड़वाहट से भर गया। दीदीजी के जाने के कुछेक मिनट बाद वह बाबुल के दो-तीन कपड़े लेने, धोबी के यहां गई थी। पंद्रह मिनट में लौट भी आई। घर में न बाबुल था, न उसकी हवाई-बंदूक, यानी इस बीच मेजर डेका आया और उसे लेकर चला गया।

शर्मिला गंभीर और सख्त चेहरा बनाए बरामदे में कुर्सी डालकर बैठ गई। उसका डाक्टरी-बैग उठाकर पार्वती अंदर चली गई।

पांच मिनट बाद एक मिलिटरी-जीप रास्ते पर आकर रुकी। दिलीप डेका खुद ही जीप ड्राइव कर रहा था। इंजन बंद करके, वह अकेले ही उतरा। बाबुल साथ नहीं था !

उसके करीब आते ही शर्मिला ने व्यंग्य-भरे लहजे में सवाल किया, 'बेटे को पहले ही कहीं और रख आए ?'

मेजर डेका विमूढ़, 'बेटा…? आपका मतलब है, बाबुल को ? क्यों ?

कहां गया वह ?'

शर्मिला हड़बड़ाकर उठ खड़ी हुई, 'क्यों ? आप उसे जंगल घुमाने नहीं ले गए ?'

'नहीं तो ! ले जाने की बात जरूर थी ! लेकिन आपने चार बजे आने को कहा था ! सो, हाजिर हुआ हूं...'

शर्मिला ने गौर किया, आज वह 'आप' कहकर संबोधित कर रहा था। लेकिन इसे नजरअंदाज करते हुए, शर्मिला ने बेचैन आवाज में कहा, 'लेकिन वह तो...घंटे-भर पहले से गायब है ! उसकी एयर-गन भी नहीं है !'

दिलीप डेका की अस्फुट आवाज सुनाई दी, 'गजब हो गया ! अकेले-अकेले कहीं जंगल की तरफ तो नहीं चला गया !'

अगले ही पल वह जीप की तरफ भागा।

'रुकिए !' शर्मिला भी दिशाहारा-सी, जीप स्टार्ट होने के पहले, उसकी बगल में जा बैठी। जीप एक जोरदार घरघराहट के साथ रवाना हो गई।

सबसे करीब वाला जंगल भी करीब डेढ़ मील दूर। वैसे पहाड़ी के आस-पास हर तरफ जंगल ही होता है। लेकिन दिलीप डेका ने अंदाजा लगाया, जब वह अपनी एअर-गन साथ ले गया है, तो जरूर उसी बड़े जंगल की तरफ गया होगा।

उसका चेहरा देखकर, शर्मिला किसी बहुत बड़ी मुसीबत की आशंका से थर-थर कांपने लगी।

दिलीप डेका ने कहा, 'इस जंगल में बाघ-भालुओं का उपद्रव बहुत ज्यादा है। इससे भी ज्यादा डर यह है कि उस जंगल में एक बार घुसने के बाद, निकलने की राह नहीं !'

शर्मिला तैश में लगभग गरज उठी, 'आपने ही उसे लोभ दिया था ! बच्चे ने सोचा होगा, आप अकेले ही जंगल चले गए होंगे, सो उसने मेरी भी परवाह नहीं की और चला गया ! हमेशा के लिए उसे अपने पास ले जाते, उसके बाद जैसे चाहे, रखते !'

जवाब में दिलीप डेका भी गरज उठा, 'चुप रहो ! डोन्ट डिस्टर्ब मी !'

तीन मिनट के अंदर वे लोग जंगल की सीमा पर पहुंच गए। दिलीप डेका ने जीप रोक दी और पीछे की सीट से अपनी बंदूक और टॉर्च उठा ली। जंगल जाने के इरादे से ही, ये दोनों चीजें, वह अपने साथ ही ले आया था। शर्मिला भी उसके पीछे-पीछे जीप से उतर पड़ी।

दिलीप डेका ने उसे रोकने की कोशिश की, 'आपका जीप में ही रहना बेहतर है।'

शर्मिला ने बेचैन होकर कहा, 'नहीं ! नहीं ! मैं आपको जरा भी तंग नहीं

करूंगी। मुझ पर मेहरबानी कीजिए—मुझे रोकिए मत!'

जंगल के भीतर अंधेरा था। शर्मिला के हाथ में जलती हुई टॉर्च। करीब घंटे-भर भटकने के बावजूद बाबुल कहीं नजर नहीं आया। अगर कहीं वह इस जंगल में घुसा होगा, तो निस्संदेह रास्ता भूलकर, कहीं भटक रहा होगा।

दिलीप डेका अपनी भरपूर ताकत से बाबुल को आवाजें देता हुआ, आगे बढ़ा। उसकी आवाज से मानो आसमान तक हिल गया।

'बा-बु-ल! बा-बु-ल!'

'बा-बुल! बा-बुल!'

यूं ही करीब दस मिनटों तक चीख-चीखकर आवाजें लगाने के बाद, अचानक कहीं दूर से जवाब आया, 'अंकल डेका! मैं यहां हूं…'

उसकी आवाज सुनकर शर्मिला को लगा अब वह खुद ही बेहोश होने वाली है। वह भी आर्त स्वर में पुकार उठी, 'बा-बु-ल!'

उसे पुकारते-पुकारते और जिधर से आवाज सुनाई दी थी, उसी पगडंडी पर चलते-चलते, वे लोग काफी आगे बढ़ आए। शर्मिला की टॉर्च की रोशनी एक ऊबड़-खाबड़ विशाल चट्टान पर जा पड़ी। बाबुल अपनी गोद में एयर-गन सम्हाले बैठा हुआ था। उसका चेहरा डर के मारे सफेद पड़ा हुआ था।

बाबुल ने वहीं से कहा, 'मैं खो गया था, अंकल! दूर एक भालू गुर्राने लगा, सो मैं यहां दुबककर बैठ गया।'

इतनी देर बाद दिलीप डेका के होंठों पर हंसी झलक आई। उसने दोनों बांहें पसारकर कहा, 'खूब अच्छा किया। तू सचमुच बहुत बहादुर बनेगा। अब उतर आ बच्चे! देखना, खूब सम्हल-सम्हलकर पांव रखना!'

करीब आते ही, वह कुछ ऊंचाई से ही, एकदम से कूदकर दिलीप की बांहों में आ समाया और उसके सीने में दुबक रहा। कुछेक पल वह उसे उसी तरह चिपटाए रहा। उसके बाद उसे आहिस्ते से शर्मिला की गोद में दे दिया। शर्मिला उसे अपने गालों से सटाए हुए, अंदर से उमड़ती हुई सीली रुलाई रोकने की कोशिश करती रही। जरा संयत होते ही, उसने आहिस्ते से उसे गोद से उतार दिया।

जीप में भी, बाबुल को गोद में लिए हुए, वह चुपचाप बैठी रही। दिलीप डेका, यहां तक कि बाबुल की जुबान पर भी मानो ताला जड़ गया था। वह अंदर-ही-अंदर समझ रही थी, आज उसके बेटे पर कितनी भयंकर मुसीबत घिर आई थी।

डॉक्टर भट्टाचार्य बाहर के बरामदे में ही बैठे दिख गए। बगल में पार्वती

बुझी हुई-सी खड़ी थी। जीप से बावुल को उतरते देखकर उन लोगों ने भी मानो राहत की सांस ली।

घर के अंदर दाखिल होते ही डॉक्टर भट्टाचार्य ने सवाल किया, 'कहां था ?'

दिलीप डेका ने संक्षिप्त-सा जवाब दिया, 'जंगल में !'

'हे भगवान !'

दिलीप डेका एक कुर्सी खींचकर बैठ गया और पार्वती से कहा, 'बावुल को अंदर ले जाओ, गर्म पानी से हाथ-मुंह धुलाकर और थोड़ा-सा दूध पिला-कर, कंबल से ढंककर लिटा दो।'

बावुल का हाथ थामे हुए पार्वती अंदर चली गई।

डॉक्टर भट्टाचार्य ने दिलीप डेका की तरफ मुखातिब होकर कहा, 'तुम भी बहुत थके हुए लग रहे हो। पहले गर्म चाय या कॉफी पीओ।'

'नहीं, थैंक्स !' अब वह शर्मिला की तरफ मुड़ा, 'बैठिए ! आपने मुझे क्यों बुलाया था, मुझे मालूम है !'

शर्मिला कुर्सी पर बैठ गई। इससे पहले जाने कितनी बार इसी आदमी ने खुद कॉफी मांगकर पी है ! लेकिन आज शर्मिला चाहकर भी उससे एक बार भी कॉफी पीने का अनुरोध नहीं कर पाई।

दिलीप डेका ने बेहद धीर-गंभीर मुद्रा में कहा, 'मुझसे सिर्फ एक गलती हुई है ! सब कुछ जान-सुनकर भी मैं आपको भयंकर संदेह में झुलाए रहा। आज आप यह जानकर निश्चिंत हो जाइए कि बावुल मेरा बेटा नहीं है।'

'अरे !'···मारे उत्तेजना के शर्मिला कुर्सी छोड़कर उठ खड़ी हुई।

'मेरा बेटा, अपनी मां के साथ ही गुजर चुका था। पूरे दो साल बाद जब मैं लौटकर आया और मुझे अपनी बीवी-बच्चे की मौत की खबर मिली, तब मैं गौहाटी भागा। अखबार के दफ्तर में जाकर रेल-दुर्घटना की फाइल ढूंढ़ निकाली। सारा कुछ पढ़ गया। कई दिनों के अखबार उलटता-पलटता रहा, आपके नाम-पते वाले इश्तहार पर भी नजर पड़ी थी। बावुल की तस्वीर भी देखी। अगर वह मेरा बेटा होता तो मैं उसी वक्त उस पर दावा करता। बातों-ही-बातों में उस अखबार के एक कर्मचारी ने मुझे समझाया—जिन्होंने इस अखबार में यह विज्ञापन दिया था यानी डॉक्टर शर्मिला हजारिका के पति भी उसी ट्रेन-दुर्घटना में चल बसे। यह बच्चा उनकी गोद में मिला था। मैंने दरियाफ्त किया, उस बच्चे के किसी सगे-संबंधी का पता चला या नहीं ? वह सज्जन इस बारे में कोई खबर नहीं दे सके।'

उसने जेब से एक पासपोर्ट साइज की तस्वीर निकाली और शर्मिला की तरफ बढ़ाते हुए कहा, 'देख लीजिए, यह रही मेरे बीवी-बच्चे की तस्वीर !'

शर्मिला ने झटपट हाथ बढ़ाकर तस्वीर ले ली। उसने जो कुछ सुना या देखा, उस पर मानो जैसे अभी भी यकीन नहीं कर पा रही हो। वह दौड़कर अंदर कमरे में गई और दराज से तस्वीरों का अलबम निकाल लाई। बाबुल की वही पुरानी तस्वीर ढूंढ निकाली। दिलीप की दी हुई तस्वीर से उसका मिलान करती रही। नहीं, कहीं इत्ता-सा भी मेल नहीं था!

दिलीप ठेका ने हाथ बढ़ाकर अपनी तस्वीर उठा ली।

शर्मिला की उद्विग्न और उत्सुक निगाहें दिलीप के चेहरे पर गड़ गईं। उसका चेहरा पढ़ते हुए उसने सवाल किया, 'लेकिन'''अगर यह सच है, तो आपको उस चेन और 'डी' नामवाले सॉकेट की बात कैसे पता चली?'

'वह भी बताता हूं। लेकिन पहले एक और बात''' उसने उसी तरह ठंडे और गंभीर लहजे में जवाब दिया, 'भाईजान से सुना आपके पति भी उसी ट्रेन-दुर्घटना में नहीं रहे।'''असल में मेरी याददाश्त जरा ज्यादा तेज है। जिस दिन आप मुझे देखने के लिए मेरे कैंप में आई थीं, जाने क्यों अचानक तीन साल पहले वाला इश्तहार और उस अखबार वाले की याद आ गई। उसी दिन से मेरे मन में यह सवाल हर वक्त चक्कर काटता रहा, बाबुल कहीं वही बच्चा तो नहीं, जो आपको ट्रेन-दुर्घटना में मिला था?'''उसके बाद जब मैं आपके घर गया, आपका और पार्वती का रुख देखकर, मेरा संदेह और भी गहरा हो गया! आखिर मैं आप लोगों के लिए इतना अवांछित क्यों हूं? आप लोग जानती थीं, उस दुर्घटना में मेरा बेटा भी खो गया था। आप लोगों को आशंका थी, बाबुल कहीं मेरा बेटा तो नहीं! अगर बाबुल आपका सगा बेटा होता, तो आप लोग इतनी चौकन्नी नहीं होतीं। मेरा शक दिनोंदिन पक्का होता गया। उस वक्त तक मुझे 'डी' नामवाले उस सॉकेट के बारे में कोई जानकारी नहीं थी।'

सिर्फ शर्मिला ही नहीं, डॉक्टर भट्टाचार्य भी निविड़ आग्रह से उसकी बातें सुन रहे थे।

डॉक्टर भट्टाचार्य ने ही बेसब्र होकर सवाल किया, 'फिर क्या हुआ?'

'उसके बाद, बहुत बार, उस इश्तहार वाले बच्चे की सूरत याद करने की कोशिश की, लेकिन किसी तरह भी याद नहीं आया। पार्वती से उसके बचपन की फोटो दिखाने को कहा, उसने भी नहीं दिखाया। मिसेज हजारिका से बाबुल के जन्मदिन के बारे में पूछा तो उन्होंने जिस दिन का जिक्र किया, मुझे खटका लगा कहीं मुझसे गलतफहमी तो नहीं हुई। फिर मैंने तुमसे पूछा—बाबुल उनका सगा बेटा है? तुम मानो आसमान से गिरे। तुमसे उसके पिता के बारे में पता करके, तीन दिनों की छुट्टी लेकर मैं गोहाटी चला गया। पुराने अखबारों में से वह इश्तहार खोज निकाला। लेकिन आठ महीने के बच्चे से

सात साल के बच्चे के चेहरे का मिलान आखिर कैसे होता ?···मैं उनके पिता के यहां पहुंचा।···उनकी बहनों को अपना परिचय देकर, उस बच्चे के बारे में दरियापत किया, जो उन्हें दुर्घटना के दिन मिला था। उसी दुर्घटना में मेरा बेटा खो गया था, इसलिए सारी बात का पता लगाना मेरे लिए जरूरी था। बहनों को इनकी कोई खबर नहीं; लेकिन मैं जो जानना चाहता था, उन्होंने बता दिया। मिसेज हजारिका निःसंतान हैं। उन्होंने ही अखबारों में विज्ञापन की बात और 'डी' नामवाले लॉकेट का भी जिक्र किया।'

दिलीप डेका कुर्सी छोड़कर उठ खड़ा हुआ। उसने शर्मिला की ओर देखते हुए कहा, 'अच्छा, अब मैं आपको तंग करने कभी नहीं आऊंगा—गुड नाइट !'

वह चला गया। थोड़ी देर में उसकी जीप भी नजरों से ओझल हो गई।

शर्मिला मानो पत्थर की बुत बन गई थी—भौंचक्की ! अवाक ! डॉक्टर भट्टाचार्य भी बहुत देर तक खामोश बैठे रहे। उसके बाद उन्होंने ही बातों की पहल की और दिलीप डेका के बारे में ही छुट-पुट बातें बताते रहे। उनके लहजे में अगाध स्नेह और प्रशंसा की झलक थी। लेकिन शर्मिला को मानो कुछ भी सुनाई नहीं दे रहा था। वह मानो सोचने की भी ताकत खो बैठी थी। उसकी मति-गति एकबारगी लुप्त हो गई थी।

करीब घंटे भर बाद, डॉक्टर भट्टाचार्य ने कहा, '···अच्छा, तो मैं चलूं···'

इतनी देर बाद शर्मिला को मानो होश आया। उसने दरियापत किया, 'मेजर डेका यहां से कब जा रहे हैं ?'

'कल···शायद एकदम सुबह ही बमडिला जा रहा है। उसने अपने लिए एक ट्रेकिंग-कार का भी इंतजाम कर लिया है।'

वह हड़बड़ाकर उठ खड़ी हुई, 'एक मिनट रुकिए, मैं अभी आ रही हूं ! मुझे जरा उनके कैंप तक छोड़ दीजिएगा ! मुझे ब-हो-त जरूरी काम है !'

वह लगभग भागती हुई कमरे से बाहर चली गई, मानो वह एक पल भी नष्ट नहीं करना चाहती। अंदर आकर जल्दी-जल्दी अपना कोट पहनने लगी।

ठीक उसी वक्त कोई राह रोककर खड़ा हो गया, 'मां, कहां जा रही हो ? मैं भी चलूं तुम्हारे साथ ?'

शर्मिला ठिठक गई, एक पल बाबुल को निहारती रही। उसने भी गर्म कपड़े पहन ही रखे थे। अपने हाथों से उसके सिर पर टोपी लगाई, लंबा कोट भी पहना दिया, 'चल···!'

रात को ड्राइवर भी नहीं था। डॉक्टर भट्टाचार्य स्वयं सिविल-लाइन्स तक खुद ही जीप ड्राइव करके ले आए। उन्होंने अंगुली के इशारे से [illegible] का घर दिखा दिया।

शर्मिला जीप से नीचे उतरी। अब तक वह मन ही मन काँपती रही थी। अचानक उसने सारी दुविधा झटककर कहा, 'आप जरा देर यहीं रुकिए; बाबुल को देखिए; मैं आती हूँ!'

वह एक-एक कदम नापती हुई आगे बढ़ी। [illegible] को शायद वहाँ सभी पहचानते थे। उसे किसी ने भी नहीं रोका। शर्मिला चोरों की तरह दबे पाँव आगे बढ़ती गई। कमरे में बत्ती जल रही थी। कमरे के परदे उढ़काए हुए थे। दरवाजे पर दस्तक दिए बिना ही वह धड़धड़ाती कमरे में दाखिल हुई। आते-आते उसने कमरे का दरवाजा दुबारा बंद कर दिया। [illegible] दरवाजे की तरफ पीठ किए, अपना सामान समेटने में व्यस्त था।

किसी के कदमों की आहट सुनकर वह पीछे मुड़ा। शर्मिला को देखकर वह एकबारगी अचकचा गया।

'...आप...?'

अहंकार लेकर आखिर कितने दिन बैठी रहती···हां, थोड़ा-सा और वक्त लगता। बस···यही···?'

अंकल डेका के घर आकर, बाबुल यूं शांत होकर जीप में बैठने वाला लड़का नहीं था। जीप में बैठा-बैठा वह अकुलाता रहा···अगले ही पल गाड़ी से उतरकर, आंधी-तूफान की तरह दौड़ पड़ा। डॉक्टर भट्टाचार्य को उसे रोकने का वक्त ही नहीं मिला।

अंकल डेका के घर का चप्पा-चप्पा उसका पहचाना हुआ था।

उसने फटाक् से दरवाजा खोला और अंदर आ धमका। लेकिन अगले ही पल एकबारगी अचकचा गया। कुछेक पल बुत की तरह टुकुर-टुकुर ताकता रहा, उसके बाद पूरे दम से पलटा और दुबारा भाग खड़ा हुआ। हांफते-कांपते वह किसी तरह जीप तक पहुंचा। उसकी आंखों में ढेर-सारा अचरज भरा हुआ था।

उसने हैरान आवाज में डॉक्टर भट्टाचार्य से कहा, 'काकू! काकू! अंकल डेका मां को लपेटे हुए ढेर सारी पप्पी ले रहे हैं···'